



# तुलसी की भाषा

(अवधी भाषा तात्त्विक अध्ययन)

डॉ० जनादन सिंह

एम० ए०, पीएच० डी०

(हिल्टी तथा भाषा विज्ञान)

हिन्दी-विभाग

युवराजदत्त कालेज, लखीमपुर



साहित्य संस्थान

१०६/१५४ गांधीनगर, कानपुर-२०८०१२

आगरा विश्वविद्यालय की पीएच० डी० उपाधि के  
लिए स्वीकृत शोध प्रबंध



<p>मूल्य ३५ ००</p>	<ul style="list-style-type: none"><li>● पुस्तक तुलसी की भाषा</li><li>● लेखक डॉ० जनादन सिंह</li><li>● प्रकाशक साहित्य संस्थान, १०९/१५४ मीरानगर कानपुर १२</li><li>● मुद्रक उदय प्रिंटिंग प्रेस सूटरमज कानपुर १</li><li>● सस्करण प्रथम मई १९७६</li></ul>
------------------------	---

**TULSHI KI BHASHA**

by Dr Janardan Singh

## समर्पण

सीयराम में सब जग जानी । भरपि प्रब जोरेडें बुग पानी ॥

तपस्याग-प्रतिमा अद्वेया अम्मा जी

को

सादर समर्पित



# परिचय

( १ )

किसी कवि या लेखक की कृतियों की भाषा का अध्ययन अनेक दृष्टियों से होता है उनमें से भाषा शास्त्र की दृष्टि से किया गया अध्ययन अपना विशिष्ट स्थान रखता है। भाषा की शक्ति निम्न है—शब्द भंडार, शब्द चयन और शब्द शक्ति पर। इसलिए कवि की अभिव्यक्ति शक्ति को आकर्म के लिए उसको भाषा का अध्ययन करना आवश्यक होता है। भाषा शास्त्र की दृष्टि से किया गया अध्ययन अपना विशेष मूल्य रखता है।

हिंदी कवियों और लेखकों की भाषा के वैज्ञानिक विवेचन का अभाव है। इसी अभाव की पूर्ति के लिए डा० जनादन सिंह ने तुलसी की भाषा अवधी भाषा साहित्यिक अध्ययन विषय चुना और काय विस्तृत होने हुए गहन परिश्रम एवं लगन से अल्प समय में इस अनुष्ठान को सम्पन्न किया। डा० कौलाचन्द्र अग्रवाल के कुशल निर्देशन में कृष्ण गवेषणापूण यह मौलिक ग्रंथ सम्पन्न किया गया, जिस पर उन्हें आगरा विश्वविद्यालय आगरा से पी एच० डी० की उपाधि मिली।

विशेष महत्व का बात यह है कि डा० सिंह ने तुलसी की सम्पूर्ण अवधी कृतियों की भाषा सामग्री को साठ हजार वाक्यों (data) पर संकलित कर भाषा शास्त्रीय दृष्टि से विविधत अध्ययन किया है साथ ही तुलसी के प्रमुख सभी संस्करणों प्रमुख रूप से तुलसी ग्रंथावली गुप्त द्वारा सम्पादित संस्करणों एवं गीता प्रेस, गोरखपुर संस्करणों की तुलना करके भाषा विषयक सभी शकामों का निवारण कर लिया है। इनसे इस ग्रंथ की वैज्ञानिकता और मौलिकता और भी अधिक बढ़ गई है।

प्रस्तुत ग्रंथ दस अध्यायों में विभाजित है। प्रथम अध्याय में अध्ययन की उपयोगिता सोमाएँ<sup>1</sup> एवं विश्लेषण पद्धति का विवेचन किया है। द्वितीय अध्याय में ध्वनि-समूह एवं उसके लिप्यंतरण की चर्चा है। अध्याय तीसरे के अन्तर्गत शब्द-रचना विधान का वैज्ञानिक एवं विस्तृत विवेचन किया है। चौथे अध्याय में संज्ञा रूप रचना पर प्रकाश डाला गया है। अध्याय पाँच में सर्वनाम रूप रचना, अध्याय छ में विशेषण रूप रचना और अध्याय सात में अव्यय पर सविस्तार प्रकाश डाला गया है। अध्याय आठ में क्रिया रूप रचना का विवेचन किया है। अध्याय नौ में वाक्य रचना का सम्बन्ध वर्णन है। अध्याय दस में स्थानीय एवं तुलसी की अवधी के सामान्य रूप और अन्य भाषा रूपों की व्याप्ति को उठाया है।

तुलसी साहित्य के मर्मज्ञ एवं भाषा शास्त्र के अध्येताओं ने इस शोध प्रबंध को सराहना की है। मुझे आशा है कि यह ग्रंथ हिंदी जगत के मर्मज्ञ विद्वानों तथा भाषा-भनीयियों को विनाय प्रिय और उपादेय सिद्ध होगा। डा० सिंह की उम्र की ओर भी महान् के प्रयत्न का प्रणयन होगा यह मेरी मंगलाशा है।

डा० बीरेन्द्र वर्मा

( २ )

प्रस्तुत ग्रंथ के पूर्व गोस्वामी तुलसीदास की भाषा के अध्ययन से सम्बद्ध दो शोध काय हो चुके हैं—डा० बाबूराम सक्सेना तथा डा० देवकीनन्दन श्रीवास्तव के । इसके अतिरिक्त तुलसी साहित्य पर लिखे गए कतिपय अन्य शोध-ग्रंथों में भी प्रसंगवश उनकी भाषा के स्वरूप पर विचार किया गया है । किन्तु डा० जनादन सिंह द्वारा प्रयुक्त अवधी का प्रयत्न से किया गया भाषा-सांख्यिक अनुशीलन अभी तक नहीं हो सका था । प्रस्तुत ग्रंथ निस्सन्देह इस शिष्टा में प्रथम मौलिक एवं सराहनीय है । डा० सिंह ने आधारभूत सामग्री का वैज्ञानिक पद्धति से भाषा-सांख्यिक विश्लेषण किया है । अब तक तुलसी पर हुए काय में यह अध्ययन अपना विशिष्ट स्थान रखता है ।

डा० सिंह ने तुलसी की अवधी के अध्ययन में विश्लेषण की जिस वृणनात्मक पद्धति का अनुसरण किया है उससे उनकी आलोचनात्मक परीक्षण सम्बन्धी क्षमता तथा नवीन दृष्टि का पता चलता है । जहाँ तक अभिव्यक्ति का प्रश्न है उनकी भाषा साहित्यिक एवं शैली प्रौढ़ है । यह ग्रंथ दम अध्यायो में विभक्त है ।

इस ग्रंथ की सहायता से तुलसी के अवधी रूप का सम्यक् में विवेक सहायता मिलेगी और अवधी की ऐतिहासिक भाषा-संघटना का अध्ययन करते समय एक महत्वपूर्ण कड़ी सिद्ध होगी । मुझे विश्वास है यह ग्रंथ शोध को नयी दिशा और नयी मोड़ देने में पूर्ण समर्थ है ।

डा० भगवतीप्रसाद सिंह  
पी एच० डी० डी० लिट०  
अध्यक्ष हिन्दी विभाग  
गोरखपुर विश्वविद्यालय गोरखपुर

## प्राक्कथन

स्नातकोत्तर परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् सन् १९६५ ई० में अनुसंधित्सु ने अपनी अभिरुचि के अनुरूप ही 'तुलसी की अवधी भाषा-तात्त्विक अध्ययन' विषय शोध-साधना हेतु चुना। प्रस्तुत शोधकाम के लिए क० मु० हिन्दी तथा भाषा विज्ञान विद्यापीठ, विश्वविद्यालय आगरा केन्द्र बना। सन् १९६६ ई० में आगरा विश्वविद्यालय से इस विषय पर शोध कार्य करने के लिए विधिवत अनुमति प्राप्त हो गई। तभी से अनुसंधित्सु दत्त चित्त होकर केवल शोधकार्य में ही सलग्न रहा है।

अवधी अनुसंधित्सु की मातृभाषा है इसलिए उसके प्रति निष्ठा स्वाभाविक है। यह शोध कार्य अवधी की ऐतिहासिक भाषा सघटना का अध्ययन करते समय एक कड़ी सिद्ध होगा यह उसे विश्वास है।

विश्वविख्यात महाकवि तुलसीदास के काव्य पर अनेक रूप से बड़ा परिपुष्ट अध्ययन हो चुका है। किन्तु अद्यावधि तुलसी की अवधी रचनाओं में प्राप्त अवधी के स्वरूप का भाषा-तात्त्विक अध्ययन स्वतन्त्र रूप से अपनी पूण गरिमा के साथ सम्पन्न नहीं हो सका था। यद्यपि तुलसी की अवधी रचनाओं में प्राप्त अवधी के स्वरूप का अध्ययन डा० देवकीनन्दन श्रीवास्तव और डा० बाबूराम सक्सेना के शोध कार्यों में किया गया है, किन्तु तुलसी की एकमात्र अवधी रचनाओं को आधार बनाकर आधुनिक प्रणाली में भाषा-तात्त्विक अध्ययन प्रस्तुत शोध कार्य के माध्यम से ही हुआ है। आदरणीय डा० बाबूराम सक्सेना ने अवधी का उद्भव तथा विकास स्पष्ट करते समय प्रसंगवश तुलसी की अवधी भाषा के रूपों का विश्लेषण किया है लेकिन इस प्रकार के व्यापक एवं विस्तृत अध्ययन में केवल तुलसी की अवधी का भाषा-तात्त्विक अध्ययन जिस कोटि का होना चाहिए या वह नहीं हो सका है। यह स्वामाविक ही था क्योंकि डा० सक्सेना का एकमात्र ध्यान (उद्देश्य) अपने शोध कार्य एवोल्यूशन और अवधी में यह न था। वस्तुतः उनकी दृष्टि तुलसी की अवधी के भाषा-तात्त्विक अध्ययन पर न होकर अवधी के उद्भव और विकास पर केन्द्रित रही है। उनके अध्ययन का दृष्टिकोण भिन्न होते हुए भी प्रस्तुत कार्य में वह सहायक सिद्ध हुआ है। अवधी का सब प्रथम विस्तृत विवेचन वैज्ञानिक प्रणाली के आधार पर होने का कारण यह कार्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है। उन्होंने अवधी भाषा का विकास क्रम स्पष्ट करने के लिए प्रसंगवश काल-क्रमिक ढंग से कुछ प्रतिनिधि कवियों की अवधी रचनाओं में प्राप्त रूपों का विश्लेषण किया है। इस प्रकार यह अध्ययन



के साथ प्रयुक्त परमगों का भी अनुपात परीक्षण करके निकाला गया है। डा० श्रीवास्तव ने परम्परागत ढंग से नारका को स्पष्ट किया है।

विषय क्रम ६ में विघेषण रूप रचना पर प्रकाश डाला गया है। ६१ में शब्द स्तर पर विघेषण शब्दों को शब्द यौगिक तथा सामासिक में विभक्त किया गया है जिसका विस्तृत विवेचन शब्द रचना विधान ( ) में अंतर्गत किया गया है। ६२ में अत्यंत ध्वनि की दृष्टि से विवेचन किया गया है। डा० सक्सेना ने इस प्रकार का उदाहरण तो दिया है किन्तु आलाप्य भाषा में इस पर विभिन्न प्रकाश नहीं पड़ सके। डा० श्रीवास्तव ने अपने शोध ग्रंथ में इस प्रकार का विवेचन नहीं दिया है। विषय क्रम ६३ में अनुसंधितसु में विघेषण शब्दों की रूप रचना का दृष्टि से मूल एवं तिसरों में विभक्ति करके उनमें सलग्न हान वाले विभक्ति प्रयोग और परमगों पर भी विचार किया है। डा० सक्सेना ने भी इस प्रकार विचार किया है परन्तु अति संक्षेप में। किन्तु डा० श्रीवास्तव ने इस प्रकार विघेषण नहीं किया है। अनुसंधितसु में ६४ में अर्थ की दृष्टि से विघेषणों का वर्गीकरण प्रस्तुत किया है। साथ ही, ६५ में त्रियामूलक (कृदन्त) विघेषण रूपों का विवेचन किया गया है। डा० सक्सेना के विवेचन का ढंग प्रस्तुत विवेचन से भिन्न है। डा० श्रीवास्तव ने भी अर्थ की दृष्टि से वर्गीकरण अवश्य प्रस्तुत किया है पर अधिक गहराई नहीं जा सकी है।

विषयक्रम ७ में अव्यय रूपों पर विचार किया गया है। इन विवेचन में यद्यत् कुछ नवीनता मिल सकती है। किन्तु विशेष मौलिकता का भाव नहीं किया जा सकता है।

अनुसंधितसु में विषयक्रम ८ में अंतर्गत क्रिया रूप रचना का प्रस्तुत किया है। ८१ में घातक्यों का वर्गीकरण मठ (सामाय एवं ह्रस्वीकृत) और यौगिक (नाम घातु तथा प्रेरणायक) घातुओं के दो वर्ग बनाकर किया है। २२ में रूप रचना की दृष्टि से समस्त क्रिया रूपों को दो वर्गों—समापिका तथा अवसमापिका में विभक्त कर उन पर संक्षेप प्रकाश डाला गया है। समापिका प्रकार के अंतर्गत तिप्थन्ती एवं कृत्वादी रूपों का उल्लेख किया गया है। डा० सक्सेना द्वारा किया गया इस प्रकार का विवेचन नैकाल्पनीय है। हा इनका अन्वय यह कि त्वक तथा प्रस्तुत गोपकता के विवेचन का एक कुछ भिन्न है। डा० श्रीवास्तव ने अपने शोध ग्रंथ में परम्परागत ढंग से क्रियाशास्त्र का विघेषण किया है। प्रस्तुत अव्यय विषय सामग्री पर आधारीत हा के कारण कुछ नए रूपों का प्रकाश मिल सकता है। डा० सक्सेना के ग्रंथ में कुछ रूपों का उल्लेख नहीं मिल सकता है। प्रतीतिरूप का उल्लेख भी भिन्न है। अनुसंधितसु में विषय क्रम ९ में अवसमापिका प्रकार के क्रिया रूपों का विवेचन किया है जिसमें अंतर्गत क्रियायक मेषा और पूर्वकायिक कृत्वादी का रचना का स्पष्ट किया गया है। ९६ में मेषा क्रियाशास्त्र तथा ९७ में प्रयुक्त क्रियाशास्त्र पर विस्तार

ये विचार किया गया है। गठन (समुक्तता) की दृष्टि से समुक्त क्रियाओं का वर्गीकरण अनुसंधित्यु का बहुत कुछ पगना है। अनेक प्रकार की समुक्त क्रियाओं को अनेकानेक उदाहरणों से स्पष्ट किया गया है। 'वाक्य रचना' का अध्ययन विषय-क्रम ९ में किया गया। ९१ में वाक्य ऋटियों-साधारण, समुक्त, तथा यौगिक का सविस्तार उल्लेख किया गया है। साधारण वाक्या म सामान्य वाक्य (केवल उद्देश्य और विधेय) तथा उनके अर्थ समीची घटकों के योग से निर्मित बहुतर घटकों का उल्लेख किया गया है। समुक्त तथा यौगिक वाक्यों का सविस्तार गहनता से विवेचन किया है। डा० सबसेना ने वाक्य की चर्चा सक्षम म तो की ही है साथ ही उनके विवेचन का ढग भी प्रस्तुत काय से कुछ भिन्न है। डा० श्रीवास्तव ने परम्परागत ढग से वाक्या का अध्ययन प्रस्तुत किया है। ९२ म अनुसंधित्यु ने पदक्रम का उल्लेख विस्तृत रूप म किया है। डा० सबसेना ने भी पदक्रम सम्बन्धी अध्ययन प्रस्तुत किया है जो अति सक्षेप म है पदावय की चर्चा ९३ म की गई है। डा० सबसेना न अपने शोध काय में इस प्रकार का विवेचन नहीं किया है। डा० श्रीवास्तव न अपने शोध प्रबन्ध म 'पदक्रम तथा पदावय' की चर्चा नहीं का है। अनुसंधित्यु न ९४ क अतगत पदा धिकार की भी चर्चा की है। डा० सबसेना एव श्रीवास्तव द्वारा इस प्रकार का अध्ययन नहीं किया गया है।

१०१ के अन्तगत अनुसंधित्यु १ 'स्थानीय तथा तुलसी की अवधी क सामान्य स्वरूप और १०२ म अर्थ भाषा रूपा की व्याप्ति को उठाया है। वसे दसने अतगत मौलिकता का दावा कदापि नहीं किया जा सकता है। बवल प्रस्तुतीकरण में अवश्य कुछ नवीनता दिखाई पड सकती है।

उपयुक्त विवेचना से स्पष्ट है कि प्रस्तुत शोध काय डा० सबसेना एव डा० श्रीवास्तव के शोध कायों से बहुत कुछ भिन्न है। इसका मुख्य कारण है अध्ययन क्षेत्र, विदलेपण पद्धति, प्रस्तुतीकरण के ढग आदि की भिन्नता। इस कथन की सत्यता प्रस्तुत शोध काय को आद्यत देखन से स्पष्ट हो सकता है। हाँ, पथ प्रदान करने में डा० श्रीवास्तव का शोध नाम नवश्य सहायक सिद्ध हुआ। डा० बाबुराम सबसेना के महत्वपूर्ण शोध काय के पश्चात तुलसी की अवधी भाषा के अध्ययन की दृष्टि से डा० श्रीवास्तव का यह शोध काय दूसरा महत्वपूर्ण काय है। कुछ दृष्टियों से तो उनका शोध काय विदोष महत्व रखता है। तुलसी की जीवनी कृतिया व्यक्तित्व आदि का विवेचन अत्यंत वज्ञानिक एव खोजपूर्ण है। अस्तु प्रस्तुत प्रबन्ध का लेखक निस्सन्देह इन दोनों महानुभावों के प्रति कृतज्ञ है। प्रस्तुत अध्ययन क मन्बन्ध में अनुसंधित्यु विनत होकर इतना निवेदन करना चाहता है कि इस शोध काय म तुलसी की अवधी रचनाओं को आधार मान कर विपुत्र भाषा सामग्री ( DATA ) काठों पर सचित करके विस्तार से प्रत्येक णल का विश्लेषण वज्ञानिक पद्धति पर

किया गया है। सत्य निता त मौलिकता न हाते हुए भी प्रस्तुतीकरण का दग, विश्लेषण पद्धति तथा मानदण्ड कुछ अपन हैं। सामग्री चिर परिचित होने पर भी उसका विश्लेषण म नवीनता एवं मौलिकता का यथास्थान समावेश कर नए नए नियमों तथा और निष्कर्षों का प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। साथ ही भाषा के अलग-अलग भागों पर कार्य करने वाले भाषाविदों की शोधों में विवेचित नहीं हुआ है उनका भी भाषा-साहित्यिक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

सबप्रथम अनुसंधितम् डॉ० माताप्रसाद गुप्त निदेशक क० मु० हिन्दी तथा भाषा विज्ञान विद्यापीठ आगरा विश्वविद्यालय आगरा का आभार प्रदर्शन करता है जिन्होंने शोध साधना का सुगम बनाने के लिए विद्यापीठ में सुलभ समस्त सुविधाएँ प्रदान कीं और समय-समय पर प्रेरणा देने का सत्कार किया।

प्रबन्धक निदेशक डॉ० कलाशचन्द्र अग्रवाल के सम्मुख अनुसंधितम् थढ़ावनत है जिनके विद्वतापूर्ण निदेशन में यह अनुष्ठान पूणता पा सका है। उनके अनवरत पथ प्रदर्शन एवं प्रोत्साहन ने जिस सफलता के पथ पर अनुसंधितम् का ला कर खड़ा किया है उसका प्रतिदान धाद कभी नहीं कर सकत। अतएव आजीवन आभार मानकर ही उनके ऋण का कुछ अक्षय्य कर सकता है। विद्यापीठ के उन सभी गुरुजनों के प्रति भी वह कृतज्ञ है जिनसे समय-समय पर सतपरामर्श एवं प्रेरणा मिलती रही है। विशेष रूप से डॉ० रामश्वर प्रसाद अग्रवाल का विनत आभार मानता है जिनकी सतत प्रेरणा एवं अमूल्य सत्परामर्शों से लाभान्वित होता रहा है।

सोरो तथा राजापुर के तुलसी सम्बन्धी स्थलों पुस्तकालयों नागरी प्रचारिणी सभा काशी तथा आगरा लखनऊ विश्वविद्यालय आगरा विश्वविद्यालय, के पुस्तकालयों और मानस सघ (म० प्र०) से अनुसंधितम् को विशेष लाभ प्राप्त हुआ जिसके लिए वह उन सबके अध्यक्षों एवं पुजारियों का कृतज्ञ है। धार्मिक प्रेरणा के सात अवधों के उन प्रेमियों भक्तजनों का आभार प्रदर्शन करता है जिन्होंने अनुसंधितम् को सामग्री सफल एवं परीक्षण के समय महत्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया। अतः मैं उन सभी विद्वजनों का आभार प्रदर्शन करता है जिनकी कृतियों से प्रत्यक्ष एवं प्रच्छन्न रूप से हम शोध साधना में सहायता प्राप्त होती रही है।

—जनादन सिंह, एम०ए०  
(हिन्दी तथा भाषा विज्ञान)

# विषय-सूची

विषयक्रम		
१	विषय-प्रवेश	१७-३५
११	तुलसी पर हुए भाषा सम्बन्धी कार्यों के प्रकाश में प्रस्तुत विषय की उपयोगिता	१७
१२	प्रस्तुत अध्ययन की सीमाएँ	२३
१३	विदलेपण विधि	२९
१४	तुलसी की अवधी-सामान्य स्वरूप	३०
२	ध्वनि-विचार	३६-८२
२१	ध्वनि एव वण-एक तात्त्विक दृष्टि	३६
२२	ध्वनि-समूह और उसका लिप्यन्तरण	३७
२३	ध्वनिग्राम	५१
२३१	स्वर ध्वनियाँ	५१
२३२	व्यंजन ध्वनियाँ	५७
२३३	अध-स्वर	६३
२४	स्वर संयोग	६६
२५	व्यंजन-संयोग	७१
२६	अक्षर वितरण	७८
३	शब्द-रचना-विधान	८३-१०७
३१	मूल	८५
३२	योगिक	८६
३३	सामासिक	१०२
४	संज्ञा रूप-रचना	१०८-१३९
४१	प्रातिपदिक अक्षर	१०८
४२	लिङ्ग विधान	१११
४३	वचन विधान	११६
४४	कारक विधान	११७
४४१	मूल	११७
४४२	तियक	११९
४४२१	परसग रहित	१२०
४४२२	परसग सहित	१२३
४४२३	विभक्तियाँ	१२६
४४३	परसर्ग-योजना	१३१

## ५ सर्वनाम-रूप-रचना

१४०-१६९

५ १	लिंग-वचन-कारक	१४०
५ २	पुरुषवाचक	१४०
५ २ १	उत्तम पुरुष	१४०
५ २ २	मध्यम पुरुष	१४४
५ ३	सङ्केत वाचक	१४९
५ ३ १	दूरवर्ती	१४९
५ ३ २	निकटवर्ती	१५३
५ ४	प्रानवाचक	१५५
५ ५	स'व'घ तथा' महसम्ब'घवाचक	१५७
५ ५ १	सम्ब'घवाचक	१५७
५ ५ २	सहसम्ब'घवाचक	१५९
५ ६	अनिश्चयवाचक	१६१
५ ७	निजवाचक	१६४
५ ८	विविध	१६६
५ ९	सावनामिक विधेय	१६७

## ६ विशेषण रूप-रचना

१७०-१७९

६ १	रूपात्मक वर्गीकरण	१७४
६ २	अर्थ-परक वर्गीकरण	१७५
६ २ १	गुणवाचक	१७६
६ २ २	परिणामवाचक	१७६
६ २ ३	सख्यावाचक	१७६
६ ३ ४	त्रिधा मूलक (कृष्णन्त)	१७८

## ७ अव्यय

१८०-१८९

७ १	त्रिधा विशेषण	१८०
७ १ १	स्थानवाचक	१८०
७ १ २	कालवाचक	१८१
७ १ ३	परिमाणवाचक	१८३
७ १ ४	रीतिवाचक	१८३
७ २	समुच्चय बोधक	१८५
७ २ १	समानाधिकरण	१८५
७ २ २	अधिकरण	१८६
७ ३	विस्मयादि बोधक	१८७
७ ४	परसर्गीय रूप	१८७
७ ५	बलात्मक शब्दास (निपात)	१८९

<b>क्रिया-रूप-रचना</b>		<b>१९०-२२१</b>
८१	घातुबो का वर्गीकरण	१९०
८११	मूल	१९१
८१२	योगिक	१९१
८२	समापिका प्रकार	१९४
८२१	तिङ्-ती रूप	१९५
८२११	वर्तमान निश्चयाथ	१९५
८२१२	सभावनाथ (आज्ञायक)	१९८
८२१३	भविष्य निश्चयाथ	२००
८२१४	भूत निश्चयाथ	२०४
८२२	कृद-ती रूप	२०७
८२२१	अपूर्ण	२०७
८२२२	पूर्ण	२०९
८२३	सहायक क्रिया	२११
८३	असमापिका प्रकार	२१२
८३१	पूर्वकालिक कृद-त	२१५
८३२	क्रियाथक सज्ञा	२१६
८४	सयुक्त-क्रिया	२१७

<b>९ वाक्य-रचना</b>		<b>२२२-२४२</b>
९१	वाक्य-कोटियाँ	२२२
९११	सामान्य वाक्य	२२२
९२२	सयुक्त वाक्य	२२५
९१३	योगिक वाक्य	२२७
	१-सज्ञा उपवाक्य	२२७
	२-विशेषण उपवाक्य	२२७
	३-क्रिया विशेषण उपवाक्य	२२९
९२	पदक्रम	२३१
९३	पदा-वय	२३७
९४	पदाधिकार	२४१

<b>१० उपसहार</b>		<b>२४३-२५३</b>
१०१	आलोच्य भाषा निष्कर्षों के आधार पर स्थानीय तथा तुलसी की अवधि	२४३
१०२	अन्य बोली रूपों की व्याप्ति	२४७
	सहायक ग्रथानुक्रमणिका	२५४

## विशेष-चिन्ह

- > पूर्ववर्ती व्युत्पत्तक तथा परवर्ती व्युत्पन्न  
 < पूर्ववर्ती व्युत्पन्न तथा परवर्ती व्युत्पादक  
 ≡ ह्रस्वताघोनक  
 ↷ वैकल्पिक प्रयोग  
 ✓ पानु चिह्न

### सक्षिप्तांश

१-	अ०	अग्रजी
२-	अ० पु०	अग्र पुरुष
३-	अयो०	अयोध्याकाण्ड
४-	अर०	अरण्यकाण्ड
५-	आ०	आषाढ
६-	आ० भा० आ० भा०	आधुनिक भारतीय आय भाषा
७-	उ०	उत्तरकाण्ड
८-	उ० पु०	उत्तम पुरुष
९-	ए० व०	एक वचन
१०-	वि०	विश्विद्या काण्ड
११-	त्रि० वि०	त्रिया विशेषण
१२-	छ०	छन्द
१३-	च०	चरण
१४-	छानु०	छन्दानुरोध
१५-	जा० म०	जानकी मंगल
१६-	त०	तृतीय
१७-	द्वि०	द्वितीय
१८-	दो०	दोहा
१९-	निवि०	निविभक्तिक
२०-	पु०	पुल्लिग
२१-	पा० म०	पावतीमंगल
२२-	प्रा० भा० आ० भा०	प्राचीन भारताय आय भाषा
२३-	पु०	पष्ठ
२४-	बरव रा०	बरव रामायण
२५-	ब० व०	बहु वचन
२६-	बा०	बालकाण्ड
२७-	म० पु०	मध्यम पुरुष
२८-	म० भा० आ० भा०	मध्य भारतीय आय भाषा
२९-	रा०	रामचरित मानस
३०-	रा० ल० न०	राम लला नहछू
३१-	ल०	लकाकाण्ड
३२-	सु०	सु दरकाण्ड
३३-	स०	महया
३४-	सवि०	सविभक्तिक
३५-	सव	सवनाम
३६-	स्त्री०	स्त्रीलिङ्ग
३७-	हि०	हिन्दी
३८-	हि० खो० रि०	हिन्दी खोज रिपेट

## ११ तुलसी पर हुए भाषा-सम्बन्धी काय के प्रकाश में प्रस्तुत विषय की उपयोगिता

पूर्ववर्ती विद्वानों द्वारा तुलसी साहित्य का विविध पक्षों को लेकर अनेक प्रकार से अध्ययन किया गया है परन्तु तुलसी की अवधी भाषा का भाषातात्विक अध्ययन गौण ही रहा है। केवल तुलसी की अवधी भाषा की कृतियों का आधार बनाकर उसका भाषा तात्विक अध्ययन अभी तक प्रस्तुत नहीं किया गया था। तत्कालीन अवधी के स्वरूप की विशद ज्ञानकी प्रस्तुत करना आवश्यक समझकर अनुसंधित्सु ने इस काय को सम्पन्न करने का सफल किया और आज उसे सतोष है कि वह काय पूरा हो गया है। यह प्रयास कहीं तक सार्थक एवं सफल है इसका निम्न विद्वान परीक्षक करेंगे।

अभी तक तुलसी काय से सम्बन्धित जितना भी अध्ययन हुआ है उसे निम्न दो वर्गों में रखा जा सकता है। डा० देवकीनन्दन खत्रीवास्तव के शोध प्रबंध तुलसी की भाषा से सहायता लेकर इस विषय पर चर्चा की जा रही है—

१—तुलसी विषयक साहित्यिक अध्ययन

२—तुलसी विषयक भाषा वैज्ञानिक अध्ययन

प्रथम वर्ग को पुनः दो उपवर्गों में बाटा जा सकता है—

अ—परिचय ग्रंथ एवं समालोचनात्मक कृतियाँ

ब—स्फुट टीकाएँ एवं टीप ग्रंथ

(१) अ—प्रथम वर्ग के अन्तर्गत निम्नलिखित कृतियाँ परिगणित हैं—

१—बाबा वेणी भागवतदास का मूल गासाइ चरित।

२—आचार्य भिखारीदास का काय निणय।

समालोचनात्मक साहित्य के अन्तर्गत मुख्यतः निम्नलिखित ग्रंथों का गणना की जाती है—

(१) नोटस आन तुलसादास

डा० जाज प्रियमन

(२) रामायणी व्याकरण (गादम आन टी रामर जाव)

डॉ०

रामायन आव तुलसीनाम)

डॉ० प्रियमन





अनेक तर्कों द्वारा इसकी घटनाओं को, एक ऐतिहासिक भूल सिद्ध किया है ।<sup>१</sup> श्री रामनरेश त्रिपाठी जी के घटना में—“एक साधारण तबखाने में गैर जिम्मेदारी के साथ जा कुछ उनके भोजन में से निकला था पाया गया, वे सिर पर के पदों में निवारण कर रख दिया ।” किंतु डा० श्यामसुन्दर दास और डा० बड्ढवार जैसे उच्चकोटि के साहित्यकारों ने इसे कुछ न कुछ उपयोगी अवश्य समझा है ।<sup>१</sup>

वेणीमाधव दास ने अपने मूल गोसाईं चरित में लिखा है कि तुलसी ने सब प्रथम अपनी रचना संस्कृत में आरम्भ की थी परंतु आठवें दिन शिव जी के सपने में उपदेश देने के कारण उन्होंने सब कल्याणकारिणी जन भाषा में काव्यारम्भ किया । अठवें दिन सम्भु दिव्य सपना, निज बोलि में काव्य करो अपना ।

सिब मापेउ भाषा में काव्य रचो, सुरवाति वं पीछे न तात पचा ॥<sup>१</sup>

इस कथन की पुष्टि मानस की निम्न पक्तियों में भी होती है—

सम्भु प्रसाद द्विये हुगभो, रामचरित मानस कवि तुलसी ।<sup>१</sup>

सपनहु साचहु मोहि पर जो हरि गौरि प्रसाद ।

तो फुर होउ जा कहउ सब, भाषा भनित प्रभाउ ॥<sup>१</sup>

तुलसी के अन्तरंग में राम कितना रमा हुआ था यह सब विदित है राम भक्त महाकवि तुलसी को यदि जन भाषा में काव्य रचना की प्रेरणा मिली भी हो तो भक्तजनों के लिए कोई आश्चर्य की बात नहीं है । इस कथन का अर्थ यह नहीं कि उक्त ग्रंथ का प्राभाषिक ही माना जाये । निश्चयन में यथाशास्त्र आचार पर उक्त ग्रंथ भले ही अप्राभाषिक ही उसका ऐतिहासिक घटना प्रसंग, उल्लेख किया गया है परन्तु तथा अस्वाभाविक है । फिर भी भाषा की दृष्टि से इतना प्रशंसा अवश्य पड़ता है कि तुलसी ने अपना काव्य जनभाषा में रचा ।

(२) आचार्य भिलारीशत का काव्य निषेध — इस ग्रंथ की गणना प्रतिष्ठित काव्यशास्त्रों में की जाती है । काव्यशास्त्र के विवेचन के साथ साथ हम उल्लेखनीय बात यह है कि तुलसी की भाषा की विविध रूपता पर सर्वप्रथम प्रकाश डालने का एकमात्र श्रेय आचार्य जी का है—

भाषा विभेदण का दृष्टि में यद्यपि काव्य विषय महत्व न भी है फिर भी भाषा की अनेक रूपता को ओर इति स्पष्ट होता है—

१—तुलसीराम पृ० ४ ४७ । २—गोसाईं चरित सं सम्बन्धित 'मकर' में प्रकाशित पृ० ७ ८ । ३—गोसाईं चरित पृ० ६१ । ४—रा० पृ० १२१ । ५—रा० वा० १२२ ।

तुलसी गगन तुलसी मए मुकुविह व सरदार ।

एक व कायक म मिली भाषा विविध प्रकार ॥<sup>१</sup>

समालोचना माश्रिय—मरा अनगत ववल तुलसी रचनाओं की चर्चा की जायेगी जिनमें भाषा-नामही का भूनाधिक विवरण मिलता है ।

(१) रामायणी शास्त्र—था एरिनि ग्रीस कृत लघु पुस्तक में भाषा का समाशील विवरण तो नहीं दिया गया फिर भी भाषा व व्याकरणिक अध्ययन की दृष्टि में हम आर्वापिन जवाब करती है । इस रचना में मानस के व्याकरणिक रूपों व उद्भरणों का माध-साध कुछ रूपों की व्युत्पत्ति का भी चर्चा की गई है । रामायणी व्याकरण एक लघु कृति है जो भी भाषा शिक्षण की दृष्टि से कुछ अर्थों तक महत्वपूर्ण बनती है ।

(२) मानस प्रथम—इस कृति में श्री विष्णुवर दत्त रामानुज तुलसी की भाषा व शास्त्रीय अध्ययन की दृष्टि में प्रथम प्रयास किया है । उनका इस कार्य को प्रयास मात्र कहना इसीलिए समीचीन है कि उन्होंने कब-कब वाक्य प्रयोग का प्रयोग आदि का ही विवरण किया है । भाषा व वचनिक अध्ययन से सम्बन्धित कई पदों का विवेचन उचित रहा है । फिर भी कुछ अर्थों तक उपयोगी माना जा सकता है ।

(३) रामचरित मानस की भूमिका—गौड़ जी ने इस प्रथम में तुलसी के जीवन तथा वाङ्मय का विवरण का साथ-साथ कुछ अर्थों तक मानस की भाषा में प्रयुक्त ध्वनियाँ एवं शब्दों पर भी प्रकाश डाला है । क्रिया पदों का अनुसंधान की दृष्टि में भी उनका कार्य मर्यादनीय है । भाषा के मधुनात्मक अध्ययन की दृष्टि में अधिक महत्व का न हात में एनिहासिक दृष्टि से उल्लेखनीय है ।

(४) जायसी प्रथावली की भूमिका—आचार्य रामचन्द्र गुल्शन जायसी की भाषा का विवरण करने का साथ-साथ तुलसी तथा जायसी का भाषाओं का तुलनात्मक विवरण भी किया है ।<sup>२</sup> गुरु जी ने तुलसी के अर्थों प्रयोगों की चर्चा की है किन्तु मरिचक एवं अपर्याप्त ज्ञान के कारण उनमें भाषा-वचनिकता का प्रायः अभाव रहा है । फिर भी तुलनात्मक पद्धति की दृष्टि में उनका प्रयास मायानुसंधान के लिए उपयोगी है ।

तुलसीदास और उनकी कविता—५० रामनरदा त्रिपाठा ने काव्य के अर्थ पता के विचार करने में प्रभावपूर्ण भाषा के विषय में भी अपने एक पुण विचार प्रस्तुत किया है । त्रिपाठा ने केवल निम्नलिखित शब्दों का है । किन्तु खटकन वाला बात

<sup>१</sup> निम्नलिखित काव्य विषय पृ० १७ । मानस प्रथावली पृ० ३४ ।

<sup>२</sup> रामचन्द्र गुल्शन जायसी प्रथावली की भूमिका पृ० न० २०४-२०६

(“मन मन्वरा”) ।

यह है कि प्रत्येक तक का निणय उनकी अपनी मायता—'तुलसी का जन्म स्थान सीरो' सिद्ध करना दिखाई देता है। यही कारण है कि उनका निष्कष तथा निणय विशेष महत्वपूर्ण सिद्ध न हो सके। उनका श्रम उपयोगी होते हुए भी पूण सफलता को न पा सका। त्रिपाठी जी ने तुलसी की भाषा में प्रयुक्त मुहावरों, कहावतों तथा अलंकारों आदि पर प्रकाश डालते हुए कुछ प्रांतीय भाषाओं तथा हिन्दी की बोलियाँ, उपबोलियों के अनेकानेक शब्द रूपों पर प्रकाश डालकर एक ऐसी सामग्री हमारे सामने प्रस्तुत की है जो कई अंशों में प्रेरणादायक है। इसमें भाषा का गठनात्मक अध्ययन प्रस्तुत नहीं किया गया है।

इण्डियन ऐंटीक्वैरी और इलाहाबाद यूनीवर्सिटी स्टडीज में प्रकाशित निबन्ध—डा० बाबूराम सक्सेना ही एकमात्र ऐसे भाषाविद् हैं जिन्होंने सद्यप्रथम भाषा विवेचन में वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाया है। उन्होंने अपने निबन्धों में क्रमशः रामायण में सजा रूप, क्रिया पद तथा 'रामायण' में फारसी से उधार लिए गए शब्द आदि का विवेचन भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से किया है। निबन्धों में भाषा के सर्वाङ्गीण विवेचन के अभाव में भी तुलसी की भाषा के अध्ययन की दिशा में एक महत्वपूर्ण प्रयास है।

तुलसी के चार दल—अपने इस ग्रंथ में प० सदगुरुशरण अवस्थी ने 'रामलला नहछू, बरव रामायण', पावती मंगल और जानकी मंगल की भाषा शैली तथा काव्य शैली का सुन्दर वर्णन किया है। यथा स्थान तुलसी की भाषा के सम्बन्ध में भी सन्केत किया गया है। किन्तु भाषा गठन की दृष्टि से इस कृति की कोई उपयोगिता नहीं है।

मानस ध्याकरण—मानस सध रामबन (सतना) से प्रकाशित इस ग्रंथ में 'रामचरित-मानस की भाषा का ध्याकरणिक अध्ययन किया गया है। प० रामनरेश त्रिपाठी ने मानस के अनेक ध्याकरणिक रूपों का सन्वेलन कर उन्हें विश्लेषणात्मक रूप प्रदान किया है। फिर भी भाषा का गठनात्मक कल्पना नहीं हो सका है।

मानस शब्दानुक्रमणिका (Index verborum of the Ramayan of Tulsiadas)—ऐतिहासिक दृष्टि से इस ग्रंथ की उपयोगिता से इन्कार नहीं किया जा सकता। शब्दावली की उपयोगिता की दृष्टि से यह रचना अत्यन्त ही अपेक्षा अधिक उपयोगी है। शब्दों और उनके अर्थों को समझने के लिए इसकी उपयोगिता स्वीकार की जा सकती है।

मकरन्द—डा० बडय्याल के इस लघु ग्रंथ में यत्र-तत्र भाषा की बलात्मकता के साथ साथ भाषा का अध्ययन भी प्रमूख किया गया है। जो सर्वाङ्गीण न होकर

एकामी ही और परम्परागत है । प्रस्तुत प्रबंध में तुलसी की कृति पर्याप्त सहायक सिद्ध नहीं हुई ।

इदानीं जव अधी—डा० बाबूराम सक्सेना ने अवधी भाषा का विकास स्पष्ट करने के लिये अवधी भाषा—जातिगत अवधी तथा प्राचीन अवधी किये हैं । अथ कविता के लिये अवधी भाषा के अतिरिक्त तुलसी द्वारा रामचरित मानस का भी आधार भाषा के विकास में भाषा के अनेक रूपों का गठनात्मक विश्लेषण करने के लिये विचार किया गया है । इस प्रबंध में तुलसी के सम्पूर्ण कृतियों की भाषा का उपयोग नहीं किया गया है और न उनकी अवधी के सम्बन्ध में अवधी भाषा के अनेक रूपों का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है । वस्तुतः अनेक भाषा के अनेक रूपों के कारण इस प्रकार तुलसी की अवधी भाषा का विश्लेषण करना स्वाभाविक नहीं था । फिर भी तुलसी की अवधी का सांस्कृतिक स्वरूप बहुत कुछ विवक्षित हुआ है ।

यह प्रबंध अनुसंधान के लिये निम्न दोनो पर्याप्त सहायक सिद्ध हुआ है । इस क्षेत्र में सर्वप्रथम वैज्ञानिक कार्य के लिये का नाम म नामन आया है ।

तुलसी की भाषा—प्रस्तुत प्रबंध में डा० श्रीवास्तव ने तुलसी द्वारा अपनी कृतियों में प्रयुक्त भाषा तथा अवधी भाषा का विस्तृत विवचन किया है । भाषा वैज्ञानिक विवचन की अनेक माहिरियक विवचन अधिक पुष्ट एवं प्रभावशाली रहा है जिससे भाषा का गठनात्मक विश्लेषण भली भाँति प्रस्तुत नहीं हो सका । भाषा का जितना भी विवचन किया गया है वह परम्परागत अधिक है । दोनों का एक साथ अध्ययन करने में और फिर साहित्यिक पक्ष पर अधिक बल देने से तुलसी की अवधी का भाषा सांस्कृतिक विश्लेषण समन्वित रूप में नहीं हो सका है । डा० श्रीवास्तव के अध्ययन का अन्तिम प्रस्तुत प्रबंध के अन्त में दृष्टिकोण से भिन्न है । फिर भी प्रस्तुत प्रबंध लेखन में यह प्रबंध पर्याप्त सहायक सिद्ध हुआ है । डा० बाबूराम सक्सेना के भाषा काय के अन्त में द्वितीय महत्वपूर्ण भाषा काय डा० श्रीवास्तव का ही है जो तुलसी की भाषा का अध्ययन करते समय इस प्रबंध का काय करता है ।

प्रस्तुत विषय की उपयोगिता एवं आवश्यकता—तुलसी विषयक उल्लिखित सामग्री के विवचन एवं परीक्षण में यही निष्कर्ष निकलता है कि तुलसी पर पर्याप्त कार्य सम्पन्न किया जा चुका है—विशेषतः साहित्यिक दृष्टि में और शैली भाषा विश्लेषण की दृष्टि से । परन्तु तुलसी की अवधी कृतियों के आधार बनाकर उनमें प्राप्त भाषा का गठनात्मक विश्लेषण वैज्ञानिक दृष्टि में अभी तक किसी भी अनुसंधान में प्रस्तुत नहीं किया है । अतएव इस प्रकार के अध्ययन की आवश्यकता

वना हुई थी। इसी आवश्यकता को ध्यान में रखकर प्रस्तुत शोध कार्य किया गया है। प्रस्तुत शोधकर्ता ने सबसे ऐसी काई बात तो नही कही है जो सबथा नवीन हो, हाँ इतना अवश्य है कि तुलसी पर हुये अभी तक के भाषा सम्बन्धी कार्यों के प्रकाश में किया गया नम प्रकार का भाषा तात्त्विक अध्ययन, जिससे प्रस्तुतीकरण का ढग, मानदण तथा निष्कष बहुत कुछ अपने हैं जिनके प्रतिपादन में अधिकांशत मौलिकता का सहारा लिया गया है। यह शोध-कार्य विगत शोध-कार्यों से साम्य रखत हुये कुछ भिन्न है इसीलिए इसका अपना पृथक अस्तित्व है। इस प्रयाम में कहां तक सफलता मिली है इसका निणय विद्वान परीक्षक करेंगे। प्रस्तुत अध्ययन पूर्वोक्त आवश्यकता की पूर्ति की दिशा में प्रथम प्रयास है। अनुसर्चित्सु वा यही विनम्र निवेदन है।

प्रस्तुत शोध कार्य के माध्यम में तुलसी अवधी का स्वरूप और अधिक स्पष्ट हो सकेगा। उनकी मठनात्मक विशेषताओं का उन्घाटन हागा। ऐतिहासिक भाषा सघटना करने समय यह कार्य एक कडी के रूप में सहायक बनेगा। हिन्दी प्रदेश में प्रचलित नत्कालीन जन भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन में इससे मल मिलेगी हिंदी की प्रामाणिक भाषा सघटना करत समय ऐतिहासिक पठमूमि में निर्माण में यह कार्य भी कुछ सहायक सिद्ध हो सकेगा। हिन्दी के अत्यंत एव अद्वितीय मरु गोस्वामी तुलसीदास की अवधी रचनाओं को ममझने में और विशेष रूप से मारे उत्तर भारत में सम्मानित एव अमिन-दनाय ग्रंथ 'रामचरित मानस' की भाषा को समझने में प्रस्तुत शोध कार्य विशेषतया सहायक सिद्ध हागा यह भी काई कम गौरव की बात नही है।

## १२ प्रस्तुत अध्ययन की सीमायें

प्रस्तुत शोध प्रवण तुलसी की अवधी के भाषा तात्त्विक अध्ययन से सम्बन्धित है अतएव इस शोध कार्य में तुलसी की कथन अवधी रचनाओं का ही आधार बनाया गया है उनको जय प्रज भाषा कृतियों का छोड़ दिया गया है।

कवि की कृतियाँ—प्रस्तुत प्रसंग में तुलसी की अन्य कृतियों का जिनकी अमा तक हस्तलिखित प्रतियाँ उपलब्ध हो सकी हैं विचार की सुविधा के लिये भी श्रणियाँ में विमल किया जा सकता है—

(१) कवि कृत मानस कृतियाँ इतने अतगत निम्नलिखित कृतियाँ आती हैं—

(१) राम उवाच गहड़ (२) रामचरित मंगल (३) धरव रापायण  
(४) जानकी मंगल (५) पावती मंगल (६) रामायण प्रश्न (७) गीताकली

(८) राम गीतावली (९) विद्या परिचय (१०) बरव रामायण (११) सतसई  
राजावली (१२) कवितावली तथा (१३) हनुमान बाह्य

(२) अन्य रचनायें—

(१) अक्षयणी (२) चराम मंगलना (३) बजरंग बाग (४) बजरंग  
गाथिका (५) भरत मियाण (६) विजय राजावली (७) बहस्पति बाण्ड (८) छन्द  
युक्त रामायण (९) छन्दय रामायण (१०) घमराय का गीता (११) प्रबुध  
प्रश्नारण (१२) गाना नाया (१३) हनुमान ध्यान (१४) हनुमान चालीसा  
(१५) हनुमान पत्र (१६) ज्ञान योगिका (१७) पद्मराज रामायण (१८) राम  
मुक्तावली (१९) राम मण (२०) गायत्री तुलसीदास जी का (२१) मकट मालिन  
(२२) मनमोक उत्सव (२३) मूल पराग (२४) तुलसीदास जी की बानी तथा  
(२५) उपन्यास आदि।

प्रथम श्रेणी के रचनाओं में म. म. अक्षयणी की निम्नलिखित प्रामाणिक मुद्रित  
संस्करणों का आधार बनाया गया है—

आलोच्य मामला—

- (१) रामायण मन्त्र—म. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल तुलसीदास प्रयावली दूसरा भाग  
काशी नागरी प्रचारिणी मण्डल द्वारा प्रकाशित
- (२) ध्यानकी मंगल —म. हनुमान प्रमाण पाठार गीताप्रस गोरखपुर
- (३) पावता मंगल —स. हनुमान प्रमाण पाठार, गीताप्रस गोरखपुर
- (४) बरवै रामायण—म. हनुमान प्रमाण पाठार गीताप्रस गोरखपुर
- (५) रामचरित मानस—म. हनुमान प्रमाण पाठार गीताप्रस गोरखपुर

प्रामाणिकता—साहित्यकारों तथा साधकसिद्धों ने अनेक तुलसीदास तथा उनकी  
अन्यानक रचनाओं का कल्पना कर डाली है। इसलिए हम अमरी नकली रूपों के  
विनाश में मठार में अमरी कवि तथा उमका अमली रचनाओं को नष्ट निकालना एक  
कठिन कार्य हो गया है। धरना तथा काल निर्णय कवि द्वारा स्वतः न किए जाने के  
कारण भी कृतियों का प्रामाणिकता में सन्देह उत्पन्न हो गया है। वसुंता वाली  
प्रतियां तथा अन्य बातों के आधार पर प्रामाणिकता सिद्ध करना एक स्वतंत्र विषय  
है। फिर भी नाया विषयक निष्कर्ष धामक न हान पाव इसलिए प्रसंगवश इन  
कृतियों को सिद्ध सामग्री हनुचुन गया है। का प्रामाणिकता के सम्बन्ध में भी अति  
सतर्पण विवेचन कर देना यहाँ उचित समझा गया है।

हस्तलिखित प्रतियाँ

१-कवि हस्तलिखित  
प्रतियाँ

(२) प्रतिलिपियाँ

(अ) प्रतिलिपियाँ की  
प्रतिलिपियाँ

(ब) कवि हस्तलिखित  
प्रतियाँ की प्रति  
लिपियाँ

(१) रामलला नहछू—'तुलसी ग्रथावली' में प्राप्त अ य रचनाओं की पन्थियों में सबसे कम प्रतियाँ रामलला नहछू की प्राप्त हैं। अभी तक जितनी भी प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं उनके पाठ, मुद्रित प्रतियों के पाठ से साम्य रखते हैं। डा० माताप्रसाद गुप्त ने मुद्रित प्रति के उस अक्षर पर आपात्त प्रगट की है जिसमें राजा दशरथ निम्न वर्णों की स्त्रियों के यौवन पर मुग्ध दिखाए गए हैं। किंतु डा० गुप्त ने इसकी प्रामाणिकता को स्वीकार करते हुए लिखा है—

“रामलला नहछू को कवि की कृतियों में स्थान न देना ठीक न होगा गेय श्रुतियों का यह समाधान मान लेने पर शीघ्रता से ही हो जाता है कि यह कवि की निरी प्रारम्भिक रचनाओं में से है। इसलिए रामलला नहछू का भी हम कवि की प्रामाणित रचनाओं में स्थान दे सकते हैं।”

एक प्रति डा० माताप्रसाद गुप्त की प्राप्त हुई है जिसे जि होने कवि के जीवन-काल की स्वीकार किया है। इसका पाठ मुद्रित पाठ से भिन्न है। प्रथम की प्रस्तुत प्रति में २६ द्विपदिक हैं जबकि मुद्रित पाठ में ४० द्विपदियाँ हैं। प्रस्तुत पाठ की १४ द्विपदियाँ मुद्रित पाठ में नहीं मिलती हैं तथा मुद्रित पाठ की २७ द्विपदियाँ प्रस्तुत प्रति में नहीं मिलती हैं। प्रस्तुत पाठ में वह अक्षर नहीं प्राप्त है जिसमें राजा दशरथ निम्न वर्ण की स्त्रियों के यौवन को दृश्य पर मुग्ध दिखाए गए हैं। साथ ही कवि 'इ' की दीर्घ रूप ई तथा उ व स्थान पर उ' का प्रयोग करता दिखाई देता है। पुस्तिका से भी स्पष्ट हो जाता है कि यह प्रति न तो कवि हस्तलिखित है और न कवि के जीवन काल की है। अथ प्रतियों के पाठ मुद्रित पाठ में मिलते जुलते हैं इसलिए मुद्रित प्रति (गारमपुर प्रेष) को ही आधार रूप में ग्रहण किया गया है।



(२) जानकी मंगल—य ग्रथ में प्रति ने निधि निर्णय स्वयं नहीं किया है। इस ग्रथ की अनेक प्रतियाँ उपलब्ध हुई हैं किंतु इनमें से एक भी प्राचीन नहीं मालूम पड़ती है।

१—एक प्रति कामरूपी अयोध्या में प्राप्त है। इस प्रति में यह का प्रयोग हुआ है जबकि अयोधी की प्रति में अन्तसार में कस्यान पर न' का प्रयोग किया जाना है। इसमें पण्डित नही हैं कि प्रारम्भ में तो हुई निधि इस प्रकार है—

मदन १६३२ कथा किए मना

२—बाणरूपी पाठ से मिली हुई मन्त्री जुनी एक प्रति अयोध्या निवासा ५० धाराम रथ त्रिपाठी पास है। इस प्रति में भी प्रारम्भ में निधि निर्देश इस प्रकार है—

स० १६३२ कथा किए मना

य दोनों प्रतियाँ पाठ में हैं किन्तु प्रारम्भ में निधि निर्णय गद्य में किया हुआ है जो कवि की अन्य रचनाओं में नहीं मिलता है। दूसरी प्रति कवि की लिखावट में गाँव है। १० अयोध्या मन्त्री तथा ५० मदनरूपी अयोध्या जानकी मंगल की रचना पारसी मसन क समय का मानते हैं। डा रामकुमार वर्मा भी इसी विचार में पौक हैं। ५० रामनरग त्रिपाठी जानकी मंगल का रचना काल स० १६२४ के आस पास मानते हैं।

३—य अथ प्रति स० ११० की प्राप्त हुई है जिनका पाठ मुद्रित पाठ से सत्रथा भिन्न है। साथ ही इस पर राजस्थानी का प्रभाव अधिक दिखाई पड़ता है।

४—य अथ प्रतियाँ मिली हैं जिनका नाम जानकी मंगल न होकर सीता स्वयंवर है। यह पाठ भी तत्समी का नहीं है क्योंकि अन्तिम छंद में बालकृष्ण की छाप मिलती है।

अथ प्रतियाँ के पाठ मुद्रित पाठ से मिले हुए हैं। अतएव मुद्रित पाठ को ही वाच्य सामग्री हनु चना गया है। इसकी प्रामाणिकता में किसी प्रकार का सन्देह नहीं किया जा सकता।

(३) रामचरित मानस—तुलसी के माय ग्रथा में यही एक ऐसा ग्रथ है जिसका प्रामाणिकता में सम्बन्ध में तत्समी भी सन्देह नहीं किया जा सकता है। मानस की प्राचीनतम प्रति १६१ की प्राप्त है। अभा तत्समी द्वारा प्राप्त रामचरित मानस की समस्त प्रतियाँ इस प्रकार हैं—

—स० १७१ की प्रति—सम अयोध्याकाण्ड नहीं है। यह भारत कला भवन, काशी में है।

२-स० १७६२ की प्रति—यह प्रति नागरी प्रचारिणा तथा, काशी न पुस्तकाध्यक्ष स्व० प० रामभुवारायण जी के संग्रह में है। यह प्रति भी स० १७७१ की प्रति के समान है।

३-स० १९१६ १९२१ का मध्य की प्रतियाँ—य काशी में स्व० सुधाकर द्विवेदी के उत्तराधिकारियों के पास हैं। इनमें संग्रहण बड़ी स्वच्छता के साथ किया गया है।

४-रघुनाथ दास तथा बंदन पाठक की प्रतियाँ— प्रतियाँ अभी उपलब्ध हैं।

५ मिर्जापुर की प्रतियाँ—इनमें से एक प्रति० डा० मानाप्रसाद गुप्त के संग्रह में है तथा अन्य प्रतियाँ स० १८८१ की मिर्जापुर निवासी श्री कलाशनाथ जी के पास हैं। इसमें बालकाण्ड नहीं है। इन दोनों प्रतियों के पाठ एक में है।

६-बीजक की प्रतियाँ— इस समय यह प्रति उपलब्ध हैं किन्तु इसका पाठ स्व० कोदरराम ने तैयार किया था जो स० १९२३ व १९२९ में बेंकटेश्वर प्रसन्न बम्बई में प्रकाशित हुआ था।

७-स० १६९१ की बालकाण्ड की प्रति—यह प्रति मानस की प्राप्त अथ प्रतियाँ में सबसे प्राचीन है। इस स० १६६१ की प्रति भी माना जाता है।

डा० गुप्त के शब्दों में— इस कवि की हस्तलिखित प्रति नहीं माना जा सकता है। फिर भी, ग्रंथ की प्राचीनतम प्रति है।

८-काशिराज की स० १७०४ की प्रति—उपयुक्त स० १६६१ की प्रति न अनन्तर यह सबसे प्राचीन प्रति है। इसमें तिथि का संकेत नहीं है।

९-राजापुर की अयाध्याकाण्ड की प्रति—यह प्रति कवि हस्तलिखित मानी जाती है परंतु डा० गुप्त इस कवि हस्तलिखित नहीं मानते हैं।

मानस की अन्य प्रतियाँ—ये प्रतियाँ प्राचीन नहीं हैं। साथ ही इनका पाठ भी स० १६९१ १७० के मध्य की प्रतियाँ से मिलता है। इनमें से कुछ प्रतियाँ डा० मानाप्रसाद गुप्त के संग्रह में हैं।

(अ) बालकाण्ड स० १९०५ की प्रति। (ब) सु० काण्ड स० १६६४ की प्रति। (स) लकाकाण्ड स० १६९७ की प्रति। (द) लक काण्ड की स० १७०२ की प्रति। (इ) उत्तरकाण्ड की १६९३ की प्रति। (फ) अरण्यकाण्ड की स० १६४१ की प्रति—यह प्रति मिर्जापुर के हरदयाल के पास है। अंग्रेजों की अधरी है इन सभी प्रतियों में प्रक्षिप्तांश पाया जाता है।

(४) पाषाण मगल—इस रचना की प्रतियाँ अभी तक पाई ही प्राप्त हुई हैं। और जो प्राप्त हैं उनमें काँची भी प्राचीन नहीं है। इसमें रचन तिथि का निर्देश निम्न प्रकार से है—

जय सबत फागुन सुदि पाच गुरु दिन ।

अस्विनि बिरचेउं मगल सुनि मुख छिनु छिनु ॥<sup>१</sup>

डा० गुप्त ने इसका रचना काल स० १६४३ का फाल्गुन शुक्ला ५ गुरुवार का माना है । डा० गुप्त के शब्दों में—

पावती मगल की यद्यपि बहुत प्राचीन प्रति हमे उपलब्ध नहीं है । फिर भी इसके विरुद्ध कोई ऐसी बात नहीं है जिससे इसकी प्रामाणिकता पर सदेह किया जा सके ।

जानकी मगल की प्रतिपा के आठ मुद्रित पाठ से मिलत जुलते हैं । इस लिए गोरखपुर प्रस स प्रकाशित सस्करण का ही प्रस्तुत अध्ययन क लिए चयन किया गया है ।

बरब रामायण—इसमें कवि ने रचना त्रिवि तथा उत्प्रेरणीय ऐसी घटनाओं का भी वर्णन नहीं किया है जिससे इस सम्बन्ध में कुछ निश्चित हो सक । खोज रिपोर्टों में उल्लिखित प्रतियों में सबसे प्राचीन प्रति स० १७९७ की है । मुद्रित पाठ के बमालीम छ द तथा उत्तरकाण्ड क ५९-६९ छ द इस प्रति में नहीं है इसकी प्रामाणिकता व सम्बन्ध में कुछ निश्चय पूर्वक कह सकता कठिन है ।

बरब रामायण—एक प्रति शिव सिंह सगर के पास थी जिसका पाठ मुद्रित पाठ कुछ भिन्न है । अथ सभी प्रतियों के पाठ मुद्रित पाठ जस ही है इसीलिए उन प्रतिया के सम्बन्ध में कुछ कहना आवश्यक नहीं है । जिन प्रतियों के पाठ मुद्रित पाठ से भिन्न हैं उनके पाठ का सांगतन वैज्ञानिक पणाली पर करने से ही उनकी प्रामाणिकता क सम्बन्ध में कुछ कहा जा सकता है । अतएव प्रस्तुत अध्ययन में बरब रामायण के मुद्रित पाठ को ही ग्रहण किया गया है ।

उपरोक्त रचनाओं की प्रामाणिकता को स्वीकार करते हुए डा० माताप्रसाद गुप्त ने अपने तुलसीदास नामक ग्रन्थ में लिखा है—

फलत प्रथम श्रेणी (अवधी तथा ब्रज) के समस्त ग्रन्थ प्रामाणिक जान पड़ते हैं । यह बात भिन्न है कि कतिपय अन्य इन प्रामाणिक माने गई रचनाओं में से किन्हीं किन्हीं में अप्रामाणिक भी मिलत है ।<sup>१</sup>

यह बहुत कुछ सत्य व निष्कट है कि उक्त कृतियाँ गोस्वामी तुलसीदास की ही रचित हैं और उनकी प्रामाणिकता में शिंका भी सन्देह नहीं है । हाँ, इतना अवश्य है कि इन ग्रन्थों की प्रतियाँ में पाठ भेद इतना अधिक है कि उनका समाधान कर पाना एक कठिन समस्या है । मुद्रित पाठों के अनिश्चित अन्य प्रतियों व पाठों के अनिश्चित अन्य प्रतियों के पाठों व सम्बन्ध में अनिश्चिन्ता व साध-साध

उनकी प्रामाणिकता पूणत सन्दिग्ध है। अतएव प्रस्तुत शोध प्रबंध मे भाषा निष्कप भ्रामक न हो सक, उपयुक्त ग्रन्थो के मुद्रित संस्करणो (गीताप्रेस गोरखपुर) का ही आधारभूत सामग्री के रूप मे ग्रहण किया गया है।

रामलला नहछ तथा 'दरवै रामायण' रचनाओ को, जिन्ह गीताप्रेस प्रकाशित करता है तुलसीदास ग्रथावली (संचित ५० रामचन्द्र शुक्ल) प्रकाशक नागरी प्रचारिणी सभा काशी से देखा गया है।

## १३ विश्लेषण-विधि

प्रस्तुत शोध प्रबंध के अंतगत तुलसी की अवधी भाषा का भाषा-तात्विक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। अतः तुलसी की अवधी रचनाओ को ही सामग्री सचयन हेतु चुना गया है। प्रत्येक रचना से संकलित की गई सामग्री इस प्रकार है—

ग्रन्थ

दोहा संख्या

काष्ठ संख्या

### १—रामचरित मानस—

अ-बालकाण्ड	आरम्भिक-१ से १००	} --१	-१००००
	अन्तिम-३३० से ३६१ तक		
आ-अयोध्याकाण्ड	आरम्भिक-१ से ५० तथा ८० से १००	}	- १०००१-१९८०३
	अन्तिम-३०१ से ३२६ तक		
इ-अरण्यकाण्ड	आरम्भिक-१ से २६ तक	}	--१९८०४-२४५६३
	अन्तिम-३२ से ४६ तक		
ई-किष्किण्डाकाण्ड	आरम्भिक-१ से ३० तक	}	--२४५६४-२७०००
	आरम्भिक-१ से ३० तक		
उ-सुन्दरकाण्ड	अन्तिम-४० से ६० तक	}	--२७००१-३३०००
	आरम्भिक-१ से ६० तक		
ऊ-लकाकाण्ड	अन्तिम-८० से १२१ तक	}	--३३००१-४११००
	आरम्भिक-१ से १० तक		
ए-उत्तरकाण्ड	अन्तिम-८० से ११० तक	}	--४११०१-४७१००
	अन्तिम-८० से ११० तक		

२-दरवै रामायण—सम्पूर्ण दृष्टि से संकलित काष्ठ संख्या ५७५०१-५९०९८

३-पावती भगल के अंतगत १४८ भगल छन्द (सीहरक) तथा १६ स्याधारण छन्द हैं। संकलित काष्ठ संख्या ४९०९९-५१५९८ तक।

## ३० । तुलसी की भाषा

४—जायसी मगन—१०२ मगन के साथ २६ गाधारण छन्द हैं। सम्पूर्ण वृत्ति से संकलित बाड मगन १११९०-१६१७० तक।

५—रामलला गहलू—सम्पूर्ण वृत्ति से संकलित बाड संख्या ५४१७१-५५९२०

सम्पूर्ण अवधी रचनाओं में ग्रहण की गई सामग्री कुल ५५९२० काटों पर संकलित की गई है।

शोषार्थक जनगत तथा गण-गण-गण-गण म चार चार चरण माने हैं। प्रत्येक रूप का उमर चरण गति पृथक् पृथक् बाड पर संकलित कर लिया था। इस प्रकार प्रत्येक रूप के चार अलग अलग बाड बनाया गया था। साथ ही प्रत्येक बाड पर उस सम्बंधित रूप का नाम चरण संख्या छन्द संख्या बाड आदि भी लिख दिये गए थे।

तुलसी का अवधी भाषा-साहित्य अध्ययन में विश्लेषण की वजहसे एक पद्धति के परिपालन का ही प्रयत्न किया गया है। प्रत्येक रूप का उसका गठन के आधार पर विषय सूची के अन्तर्गत वर्गीकृत किया गया है। रूप गठन का विश्लेषण करते समय प्रातिपदिक या घात जसा का अर्थ कर उनमें संलग्न होने वाले विभक्ति प्रत्ययों का स्पष्ट किया गया है। स्थिति स्तर का ध्वनिगत को स्वनिम या ध्वनिग्रामक के अन्तर्गत स्थापित किया गया है—भाषा में उनकी कार्यकारिता का देखकर आशय भाषा में प्राप्त रूपों का उमर का कार्यकारिता और गठन के आधार पर विवक्षित कर उन्हें यथा स्थान प्रतिष्ठित किया गया है जो रूप गठन और अर्थ की दृष्टि से आशय भाषा का प्रकृत धारण नहीं मालूम पड़े उसे अर्थ क्षेत्रीय भाषाओं का स्वीकार कर लिया गया है। इस अध्ययन में उदाहरण रूप में अनुसंधित सभी रूपों की ही दृष्टि से उदाहरण के अंतर्गत कुछ ही रूपों को दे सका है जो आशय भाषा का साहित्यिक रूप रूप रचनात्मक प्रकृति एवं प्रवृत्ति को लक्षित करते हैं। इस प्रकार का यह गौरव काय सम्पन्न रहा है।

### १४ तुलसी की अवधी सामान्य स्वरूप

१४१ ध्वनि-स्वर—उच्चारण लक्षणों की दृष्टि में तुलसी की अवधी में प्राप्त दस स्वर ध्वनिग्राम के प्रकार हैं—(१) मूठ—

१—ह्रस्व—अ इ, उ २—श्लेष—आ इ ऊ ए औ

(२) संयुक्त स्वर—ए (अह), औ (अउ)

३—अनुनासिकता—मगन स्वरों के अनुनासिक रूप भी मिलते हैं यथा—१, औ, ए, इ उ ऊ ए ए आ औ

य स्वर ध्वनियों का तात्पर्य रियतिया म प्राप्त है । साथ ही इनकी व्यतिरेकी स्थितिया भी मिलता है । स्मीलिय, ए ह ध्वनिग्राम स्तर प्राप्त हैं । (देखिय विषयक्रम २३१) स्तरा का अनुनासिक वनाम वाला अनुनासिकता भी पथक से स्वनिग्राम है ।

पथक लिपि चिह्न न होन क कारण फुसफुमाहट वाले स्तर-इ उ ए और उदासीन स्वर (ओं) तथा ह्रस्व ए और ओ का अक्षित करन क लिये क्रमशः मूल स्वरों के घातक 'इ उ, 'ए' 'अ ए तथा ओ चिह्ना का प्रयोग किया गया है (देखिय २३१) । हिन्दी तथा प्राञ्जुनिक अवधी म भी उपयुक्त दस स्वर (मूल तथा संयुक्त) तथा उनका अनुनासिकता रूप प्राप्त है । फुसफुमाहट वाले स्वर आधुनिक अवधी म स्पष्ट हैं, पर हिन्दी म उनका अस्तित्व नहीं माना गया है ।

ध्वनिग्राम स्वर पर तुलसी की अवधी म निम्नलिखित व्यजन प्राप्त है ।

१--स्पश-कण्ठय-क ग (प) ग, प । तालव्य-च, छ ज्ञ ।

मूधय-ट, ठ उ ढ । द्वयोष्ठय-फ, ब, म ।

२--नासिक्य-न, ह म म्ह । २ पार्श्वक-ल

४--लुण्ठित-र । ५--सघर्णी-स ह ।

संयुक्त व्यजन ध्वनिग्रामा क अतिरिक्त उ अ (नासिक्य) ङ ढ (बलिप्त), श (प) (सघर्णी) और विसर्ग ( ) का प्रयोग भी मिलता है जा ध्वनिग्रामीय स्तर पर नहीं है (देखिए विषयक्रम २३२) । तुलसी की अवधी म ध्वन्यात्मक परिवर्तन मिलता है । पदादि म प्रायः स्वर मुरभित रह हैं । किंतु पद मध्य मे इनका परिवर्तन द्रुत गति स दृशा है । सर्वाधिक स्वर परिवर्तन पदांत म (छादपुरोध स) हुआ है (देखिए विषयक्रम २२) । तुलसी की अवधी म व्यजन ध्वनियों म भी लिप्यंतरण मिलता है जिसका उल्लेख २२१ म किया जा चुका है ।

तुलसी की अवधी म तीन स्वरा क संयोग की अपेक्षा दो स्वरो क संयोग का अधिक्य है । पदमध्य तथा पदांत म स्वर संयोग अधिक मिलता है । (देखिए विषयक्रम २४) । द्विपदानात्मक संयोग का बाहुल्य है जबकि त्रिपदानात्मक संयोग कम मिलता है । मध्य स्वनाय व्यजन संयोग संवाधिक प्राप्त है जबकि अ म व्यजन संयोग अल्प है (देखिए विषयक्रम २५) ।

तुलसी की भाषा म पाँच प्रकार के अक्षर निर्मित हैं—(१) अ (२) अ + क (३) क + अ (४) क + अ + क तथा (५) अ + क + अ (फुसफुमाहट वाले) । आन्वेष्य भाषा म द्वयक्षरी तथा त्रयक्षरी शब्दों की बहुता है । चतुरक्षरी शब्द सरल मुलम ट किंतु द्वयक्षरी की तथा त्रयक्षरी का अपेक्षा कम प्राप्त है । पंचमाक्षरी शब्द अल्प मात्रा म प्राप्त है और आ ० ना ० नामासिक है । आधुनिक हिन्दी म भी द्वयक्षरी तथा त्रयक्षरी शब्दों का बाहुल्य है ।

१८ - शब्द रचना विज्ञान—संसार की प्रत्येक भाषा में 'पूर्वाधिक मात्रा' में विभागी शब्द पाये जाते हैं। आलोच्य भाषा (तुलसी की अवधी) प्रा० भा० आ० भा० स म० भा० आ० भा० म जाती हुई इस अवस्था में विकसित हुई है। साथ ही विष्णु प्रभाव की गणनावली पर पड़ता है इसलिए भाषायी स्रोत से दसने पर मालूम होता है कि उसमें तत्सम अथत्सम तद्भव दण्ड तथा विदेशी (अरबी फारसी, तत्कालीन परिस्थितियाँ व कारण) शब्द हैं (देखिए विषयक्रम ३१) हिन्दी तथा आधुनिक अवधी में भी इस प्रकार के शब्द मिलते हैं। तुलसी ने विदेशी शब्दावली (अरबी फारसी) की अवधी का तत्कालीन उच्चारण प्रवृत्ति व अनुसार ग्राहण किया है।

रचना की दृष्टि में आलोच्य भाषा में मूल यौगिक तथा सामासिक शब्द प्राप्त होते हैं जिनमें सर्वाधिक प्रयुक्त शब्द यौगिक प्रकार के हैं और सबसे कम सामासिक प्रकार के (देखिए विषयक्रम ३१) हिन्दी तथा आधुनिक अवधी में भी यही विपत्ता मिलती है।

तुलसी की अवधी में यौगिक शब्दों का रचना कई प्रकार के व्युत्पत्तिक प्रत्ययों के योग से हुई है (देखिए विषयक्रम ३२) एक यौगिक शब्द सरलता से प्राप्त है जिनमें एक साथ पूर्वप्रत्यय और पर प्रत्यय दोनों का योग हुआ है। ऐसे भी शब्द प्राप्त हैं जिनमें दो पर प्रत्ययों का योग एक ही प्रातिपदिक में हुआ है। तीन पर प्रत्ययों के योग से निमित्त शब्द संख्या की दृष्टि से अत्यल्प हैं। तुलसी की अवधी की मूल प्रवृत्ति दो शब्द प्रकृतियों के योग से निमित्त समास की ओर है। किन्तु जहाँ कहीं संस्कृत की छाप पड़ी है वहाँ लम्ब-लम्ब समासों की छटा देखने को आती। आलोच्य भाषा में भाषायी स्तर की दृष्टि से तथा इस प्रकार हैं—तत्सम + तत्सम तत्सम + अदत्तत्सम अदत्तत्सम + अदत्तत्सम अदत्तत्सम + तद्भव विदेशी + विदेशी आदि (देखिए विषयक्रम ३३)।

### १४३ रूप रचना -

१४३१ सज्ञा—तुलसी की अवधी में सज्ञा रूप रचना प्रातिपदिकों में शिङ्ग-वचन कारक सम्बन्धवर्ती विभक्ति प्रत्ययों के योग से होती है। प्रातिपदिकों के अत्यन्त स्वरो में परिवर्तन—ह्रस्व स्वरात् सज्ञाएँ दीघ तथा दीघ स्वरात् सज्ञाएँ ह्रस्व स्वरात् (अकारात् सज्ञाओं का परिवर्तन इ। इ तथा उ। ऊ म) मिलती हैं। शब्द रचना की दृष्टि से प्रातिपदिक तीन प्रकार (एक यौगिक तथा सामासिक) के हैं (देखिए विषयक्रम ३)।

सज्ञा रूप रचना में याकरणिक कारिकाएँ तीन हैं—१—विङ्ग २—वचन और ३—कारक। लिङ्ग तथा प्रातिपदिक अंग संवधा हुआ है। वचन और कारक को

स्पष्ट करने के लिये प्रत्ययों और परसगों की सहायता ली गई है। तुलना की अवधि में प्रयुक्त समस्त प्राणिवाचक एवं अप्राणिवाचक सज्ञायें पुल्लिंग तथा स्त्रीलिङ्ग में आती हैं। नैसर्गिक लिंग विधान का नितान्त अभाव है। लिंग निर्धारण के लिये निश्चित नियम नहीं बनाये जा सकते हैं, फिर भी दो विधायें—१—गठन परव अर्थात् अव्यय स्वयं के आधार पर तथा—२—प्रयोग के आधार पर लिंगांश मिलता है। सामान्य रूप से इकारान्त और ईकारान्त सज्ञायें स्त्रीलिङ्ग तथा उकारान्त और ऊकारान्त सज्ञायें पुल्लिंग हैं। किंतु इनके बड़ी अपवाद भी मिलते हैं।—निन्नी, निन्नी तथा इया म अन्त होने वाली संज्ञायें स्त्रीलिङ्ग हैं। अज भाषा में प्रभाव से प्राण ओकारान्त सज्ञायें पुल्लिंग की ही हैं।

वाक्यों में विशेषण रूपों या क्रिया रूपों या सम्बन्धवाची साधनात्मिक विशेषण रूपों द्वारा सज्ञा शब्दों के लिंग का आभास मिलता है। कभी कभी मध्यम कारक के परसगों द्वारा भी लिंग का पता चलता है (देखिये विषयक्रम ४२)।

आलोच्य भाषा में दो वचन—एक वचन तथा बहुवचन हैं। वचन और कारक के प्रत्यय अलग-अलग होने के कारण बहुवचन का बोध सदम से होता है। वहीं पण-गन, लोह-लोह तथा 'पच' आदि शब्द जोड़कर बहुवचनत्व का बोध कराया गया है। यह विशिष्ट विधा के अंतर्गत है। इस प्रकार तुलसी की अवधि में वचन की अभिव्यक्ति की दो विधायें सदिलष्ट (विभक्ति प्रत्यय युक्त) तथा त्रिशिष्ट (एक से बहुवचनत्व शब्द जोड़कर) हैं। प्रायः वाक्य में सदम से ही वचन का बोध होता है।

समस्त सज्ञाओं के दो रूप—१—मूल और नियक प्राप्त हैं। निर्विभक्तिक रूप मूल और अव्यय रूप (सर्वविभक्तिक परसग रहित तथा परसग रहित) नियक है। सांख्यिक दृष्टि से निर्विभक्तिक (ध्याकरणिक प्रत्यय रहित) रूप ही प्रातिपदिक या शब्द है। ऐसे भी स्थल हैं जहाँ छन्दानुराध से परसग का लोप होता है वहाँ परसग योजना करनी पड़ती है। इस परसगावाली निर्विभक्ति एक त्रिशिष्ट प्रयोग नियक ही है। कर्ता को छोड़कर अव्यय के सम्बन्ध में शान्त परसग मिलता है। सम्बोधन में सज्ञा रूप प्रायः एकवचन में ही प्रयुक्त हुये हैं। इन परसगों में पूर्व सम्बोधन नायक रे, री, हा हे आदि शब्दों का प्रयोग मिलता है। कर्ता में वृत्त सम्बोधक रूप भी प्रस्तुत हुये हैं (देखिये विषयक्रम ४४)।

१४३२ आलोच्य भाषा में सन्तान—एक वचन में प्राणिवाचक प्राणियों का वचन और कारक ही प्रमुख हैं। कर्ता का अभाव परसगान्त सन्ताना के सम्बन्ध में कारकीय रूपों में ही मिलता है। बहुवचन में शान्त परसगों के लिये विभक्ति प्रत्यय योजना में होकर स्वतंत्र प्रातिपदिका (सन्ताना शब्द) का प्रयोग होता है। मूल रूप (कर्ता





कालिक कृदन्तों तथा क्रियायक सज्ञा कृदन्तों से भी सयुक्त क्रियायो की रचना हुई है ।

आधुनिक अवधी और हिंदी में भी इसी प्रकार के रूप—रचात्मक प्रवृत्तियाँ मिलती हैं । हिंदी में इनमें सम्बंधित प्रत्यय विधान भिन्न हैं, जबकि आधुनिक अवधी में बहुत कुछ समान है । उल्लेखनीय बात यह है कि तुलसी की अवधी में तिङ्गन्ती रूपों का प्रयोग बहिष्कृत है जबकि आधुनिक अवधी और हिंदी में तिङन्ती रूपों का प्रयोग सीमित है । आधुनिक काल में आकर कृदन्त रूपों के प्रयोग बढ़ गये । तुलसी के समय से ही इनका प्रयोग बढ़ रहा था इसीलिये तत्कालीन अवधी में दोनो प्रकार के रूपों का प्रयोग हो रहा था ।

इस विवेचन से स्पष्ट है कि तुलसी ने भाषा के बिखरे हुये अक्षरों को बड़े, कौशल के साथ ध्याकरणिक संचि में ढाल कर भाषा का सुगठित, व्याकरण सम्मत एवं व्यापक रूप उपस्थित किया है जिसमें प्रा० भा० आ० भा०, म० भा० आ० मा० तथा आ० भा० आ० भा० के भी बिह विद्यमान हैं साथ ही हिंदी की ओर पुष्ट संकेत भी ।

## २१ ध्वनि एव वण एक तात्त्विक दृष्टि

मानव वागवयवा से उत्पन्न वह ध्वनि जो किसी भाषा में अपनी साधकता सिद्ध करती है भाषा शास्त्र में ध्वनि मानी जाती है। वण इसी साधक ध्वनि का लिखित प्रतीक है। प्रत्येक भाषा में उच्चारण में अनेकानेक प्रकार की ध्वनियाँ मिलती हैं। एक ध्वनि समूह विणय से ही भाषा की अभिव्यक्ति होती है। इन सभी प्रकार की ध्वनियों के लिए उस भाषा की वणमाला में वण (लिपि चिह्न) हो, यह सम्भव नहीं। फिर भी अधिकांश महत्त्वपूर्ण ध्वनियों को अंकित करने के लिए वण होते हैं। विशिष्ट ध्वन्यात्मक परिस्थितियों में उच्चारण करते समय ध्वनियों के गुणों में अंतर पट जाना स्वाभाविक है और इस अंतर को स्पष्ट करने के लिए वणमाला में इतने वण हों यह प्रत्येक वणमाला के सामर्थ्य के बाहर है।

देवनागरी में भी विगुद्ध उच्चारण की दृष्टि से देखा जाए तो दुबलता मिलती है। इस दृष्टि से आलोच्य भाषा का विगुद्ध उच्चारण की दृष्टि से देवनागरी के माध्यम से सही अंकन हुआ होगा यह सम्भव प्रतीत नहीं होता है। जैसे—जहाँ छटा में अनेकानेक स्थान पर आलोच्य भाषा में 'ए' और 'ओ' को दीघ मान कर उन्हें वा मात्राएँ दी गई हैं वहाँ कुछ ऐसे भी स्थल हैं जहाँ उनका ह्रस्व रूप में उच्चारण होने के कारण उन्हें एक मात्रा प्राप्त हुई है—

दीघ ए तथा आ—एक 'एही', घोए' विगोए

ह्रस्व ए तथा आ मिलिएसि', पठएसि' होइ', साइ'

अस्तु उनका ह्रस्व रूप (ए एव आ) के लिए वणमाला में वण उपलब्ध न होने के कारण दीघ रूप का अंकन करने वाले वणों (ए तथा आ) से ही काम लिया गया है।

१-रा० अर० १८१३

२-रा० बा० ६७८

३-रा० वा० ४३७

४-रा० वा० ४३८

५-रा० गु० १८१७

६-रा० मु० १९१२

७-रा० अर० ५३८

८-रा० अयो० ७१४

फुसफुसाहट वाले स्वर 'इ' 'उ' 'ए' को अंकित करने के लिए भी पृथक-पृथक वण न होने के कारण मूल स्वर 'इ' 'उ' 'ए' को द्योतित करने, वाले वर्णों से ही उक्त फुसफुसाहट वाले रूपों का भी अंकन किया गया है। भाषा शास्त्रियों-डा० बाबूराम सक्सेना, डा० सुनीलकुमार चटर्जी, डा० उदयनारायण तिवारी आदि ने वैज्ञानिक विश्लेषण के आधार पर सिद्ध कर दिया है कि वर्तमान अवधी में फुसफुसाहट वाले स्वरों का अस्तित्व है और इसी आधार पर यह अनुमान किया जा सकता है कि तुलसी की अवधी में भी फुसफुसाहट वाले स्वर रहे होंगे। लिपि रूप में अध्ययन होने के कारण इनके तत्कालीन अस्तित्व के सम्बन्ध में निश्चयपूर्वक कह सकना सम्भव नहीं।

कभी-कभी परम्परा से प्रभावित होकर अथवा उच्चारण सुविधाय स्वच्छन्दता के कारण भी ऋटिपूण वर्णों का प्रयोग चल पड़ता है जैसे- 'ख' के लिए 'फ' (मूढव्य सघर्षी ध्वजन) वण का प्रयोग जैसे-

लपन<sup>१</sup>, झप<sup>२</sup>, भापा<sup>३</sup> (=बोला), दूपा<sup>४</sup>।

२२१ ध्वनि समूह और उसका लिप्यंतरण

उच्चारण लक्षणों की दृष्टि से आलोच्य भाषा में प्राप्त दस स्वरों को इस प्रकार व्यवस्थित किया जा सकता है-

(१) मूल-

(अ) ह्रस्व-अ, इ उ (ब) दीर्घ-आ, ई, ऊ ए, ओ

(२) सयुक्त स्वर-ऐ (अ+इ), औ (अ+उ)

(३) अनुनासिक स्वर-समस्त स्वरों के अनुनासिक रूप भी मिलते हैं यथा-(अ) मूल-अँ, आँ, ईँ, ईँ, उँ, ऊँ, एँ तथा ओ।

(ब) सयुक्त-ऐँ तथा औ।

फुसफुसाहट वाले स्वर (इ, उ ए) और उदासीन स्वर (अ) ह्रस्व ए, ऐँ, औ तथा ओ के अस्तित्व के सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता है क्योंकि इसके लिए कोई ठोस आधार नहीं है। इनके लिए पृथक कोई लिपि चिह्न नहीं है। आधुनिक अवधी में डा० बाबूराम सक्सेना ने इनके अस्तित्व को स्वीकार किया है। इसी आधार पर कल्पना की जा सकती है कि तुलसी की अवधी में भी ये स्वर रहे होंगे। मात्रा-गणना तथा लयात्मक उच्चारण के आधार पर इनके अस्तित्व के अति निकट पहुँचा जा सकता है।

'ऐ' तथा 'औ' के सम्बन्ध में परम्परागत कुछ विचार रह हैं । ऐ (अ+इ) तथा औ (अ+उ) दो स्वरों के समुक्त रूप हैं फिर भी उच्चारण एक ही मात्रा काल में होने के कारण आधुनिक हिन्दी में इन्हें मूल स्वर स्वीकार किया जाने लगा है ।

समुक्त स्वर दो स्वरों का ऐसा मिश्रित रूप है जिसमें ज्ञाना अपना स्वतन्त्र अस्तित्व सोकर एकाकार हो जाते हैं और साँस के एक झटके में उच्चरित होते हैं । दोनों मिलकर एक स्वर जैसे हो जाते हैं और दोनों के योग से एक अक्षर बनता है । उच्चारण जिस स्वर में आरम्भ होता है वह दीर्घता के कारण अत्यन्त सक्षिप्त हो जाता है और जिह्वा दूसरे स्वर का उच्चारण करती है । उच्चारण एक स्वर से होता हुआ दूसरे स्वर की ओर चलता है । दोनों ही स्वर अपूर्ण रहते हैं जिसे दोनों का उच्चारण समुक्त रूप से होता है । अवधी में अधिकांशत ए तथा 'औ' वर्णों का प्रयोग हुआ है, यथा—

ऐसेहुँ, ऐहहिँ, ऐसे', ऐहँ औषध' औरउ', और' आदि ।

यत्र तत्र ए के लिए 'अइ तथा 'औ के लिए 'अउ का भी प्रयोग किया है किन्तु इनकी संख्या नगण्य है—यथा—

अइसेउ एउ तिहहिँ जे खाहीं ।  
अइसेहुँ मति उर विहर न तोग ।  
तनउ अउषि के चन्द की नाई ।

लृस्व तथा दीर्घ स्वर अपने ध्वनि-सन्नेतो (वर्णों) के माध्यम से अंकित हुए हैं—असाधु<sup>११</sup> असुरन<sup>१२</sup> आसस<sup>१३</sup>, आश्रम<sup>१४</sup>, इधन<sup>१५</sup>, ईसा<sup>१६</sup> चमा<sup>१७</sup> उपाय<sup>१८</sup> ऊना<sup>१९</sup>, ओरा<sup>२०</sup> औषध<sup>२१</sup> आदि ।

आलोच्य भाषा में ध्वनि-सन्नेतों के अतिरिक्त इन लृस्व एवं दीर्घ स्वरों के मात्रिक चिह्न भी (व्यंजनों के साथ) प्रयुक्त हुए हैं । व्यंजनों के साथ स्वरों का अस्तित्व बताने के लिए इन्हीं मात्रिक चिह्नों का प्रयोग किया गया है जो क्रमशः इस

१-रा० अयो० १२।३	२-रा० अयो० ३१।१४	३-रा० ल० १।१६
४-पा० म० छ० ७।१	५-रा० अयो० ६।३	६-रा० बा० ३०।१५
७-पा० म० छ० ११।९	८-रा० ल० ४।११	९-रा० ल० २२।४
१०-रा० सु० ३०।१२	११-रा० बा० ७।१९	१२-अरवै रा० ३१।२
१३-अरवै रा० ६६।१	१४-रा० अर० ३०।६	१५-रा० बा० ३२।३२
१६-रा० उ० १११।१९	१७-रा० बा० १।१४	१८-रा० अयो० ३१३।१७
१९-रा० सु० १४।१९	२०-रा० कि० २२।१२	२१-रा० अयो० ६।३

प्रकार है, यथा-निकट' म क + अ, ट + अ के रूप म 'अ' का अस्तित्व मान लेते हैं किंतु इसके लिए मृथक मानिक चिह्न नहीं है। व्यंजन में ही 'अ' की सत्ता समाहित रहती है। अय स्वराँ के लिपि चिह्न स्पष्ट हैं—

- आ के लिए लिपिचिह्न ( 1 ) जैसे मातु', नाना', वाता' ।  
 इ के लिए लिपिचिह्न ( ि ) जैसे छाडि' मुनि' ।  
 ई के लिए लिपिचिह्न ( ी ) जैसे भारी, भाती' ।  
 उ के लिए लिपिचिह्न ( ु ) जैसे कलु', प्रमु' ।  
 ऊ के लिए लिपिचिह्न ( ू ) जैसे केतू', अनूपा' ।  
 ए के लिए लिपिचिह्न ( े ) जैसे रहे', उपजे' ।  
 ऐ के लिए लिपिचिह्न ( ै ) जैसे बठहि', बीदेही' ।  
 ओ के लिए लिपिचिह्न ( ो ) जैसे काऊ', सोमा' ।  
 औ के लिए लिपिचिह्न ( ौ ) जैसे प्रौड', चौथे', समौ' ।

मूल स्वर—ए तथा ओ का प्रयोग पद के आदि और मध्य में तथा अन्य स्वराँ-अ आ, इ ई, उ, ऊ, ए तथा वा पद के आदि, मध्य तथा अन्त तीनों स्थितियों में प्रयुक्त हुए हैं यथा—

आदि	मध्य	अन्त
अ-अपजस', अथ', अघारा', निकट', सारस', भगवाना', अमिअ', धारिअ'		लाईअ'
आ-आवते' आरती', आनन', सिखावन', पिजास', मातु', रोचना', महा'		वजनिया'

१-पा० म० ९७।१	२-रा० अयो० १३।९	३-रा० बा० ३३३।१६
४-रा० वा० ३३३।२	५-रा० बा० ३२२।१४	६-रा० ल० ६०।१३
७-रा० ल० ६२।२२	८-रा० उ० ५८।११	९-रा० उ० ५८।१६
१०-रा० उ० ५८।११	११-रा० उ० ५८।४	१२-रा० कि० १३।५
१३-रा० कि० १५।२३	१४-रा० कि० १५।२४	१५-रा० उ० २६।२
१६-रा० वा० ३३८।३	१७-रा० उ० ४७।७	१८-रा० उ० ४०।४
१९-रा० उ० ११०।९	२०-रा० ल० ७।६	२१-जा० म० २२।१
२२-रा० वा० ७।३२	२३-रा० वा० ६।११	२४-रा० उ० १।१
२५-पा० म० ९७।२	२६-रा० उ० २८।९	२७-रा० वा० १३।७
२८-रा० वा० २।२	२९-रा० वा० ३१९।५	३०-पा० म० १२२।१
३१-पा० म० १०।१	३२-रा० ल० ७।७	३३-रा० ल० १५।११
३४-अरव रा० ६४।१	३५-पा० म० ३७।१	३६-रा० अयो० १३।९
३७-जा० म० ३।१	३८-पा० म० ६।२	३९-रा० वा० ३५१।१५

होता है कि ऐ म अ + इ समुक्त रूप में है । इसी प्रकार औ = अ + उ की स्थिति म है । तुलसी ने अवधी रचनाओं म समुक्त स्वरो का प्रयोग आदि, मध्य तथा अन्त म किया है ।

आदि

मध्य

अन्त

ऐ- एसहु<sup>१</sup>, एह<sup>२</sup>हि<sup>३</sup> एसिउ<sup>४</sup> बमव, कलास<sup>५</sup>, कौरव<sup>६</sup>, बखान, वर<sup>७</sup>, पर<sup>८</sup>, हर<sup>९</sup>,

औ - जौघ<sup>११</sup> औरउ<sup>१२</sup> प्रौड<sup>१४</sup> सौतुख<sup>१५</sup> पहिरावो<sup>१७</sup>, समौ<sup>१८</sup>,  
और<sup>१३</sup> कौसित्पा<sup>१६</sup> देलौ<sup>१९</sup>

३-अनुनासिकता -

आलोच्य भाषा म प्रयोग की दृष्टि से प्रायः समस्त स्वरो का अनुनासिक रूप भी मिलता है । लिपि म यह चंद्र बिन्दु ( ँ ) से प्रदर्शित की जाती है । यह केवल स्वरो के साथ ही उच्चारित अनुनासिक तत्व है जा ह्रस्व के साथ अधिक तथा दीप स्वर के साथ कम प्रयुक्त है । अवधी म स्वरो की अनुनासिकता के लिए चंद्रबिन्दु के अतिरिक्त अनुस्वार का भी प्रयोग हुआ है, यथा—

आदि

मध्य

अन्त

अ - अँदसा<sup>१</sup> अँसिया<sup>२</sup>, कुअँरि<sup>३</sup>, माहँ<sup>४</sup> छाहँ<sup>५</sup>, बिरहँ<sup>६</sup>,  
अ घियारँ<sup>७</sup> बिहँ सिँ<sup>८</sup> कँगूराँ<sup>९</sup>

आ - आचाँ<sup>१०</sup>, आकुँ<sup>११</sup>, निगानाँगँ<sup>१२</sup> छाँहँ<sup>१३</sup>, घुआँ<sup>१४</sup>, जहाँ<sup>१५</sup>  
आखीँ<sup>१६</sup> छाँडेँ<sup>१७</sup> जहूँवाँ<sup>१८</sup>,

१- रा०अयो० ४२।२

२- रा०अयो० ३१।१४

३- रा०अयो० २७।९

४- रा०उ० १४।२६

५- रा०उ० १४।४६

६- रा०अयो० १०।२०

७- जा०म० ८७।२

८- वरव रा० ६।२

९- रा० कि० ३।२

१०- जा०म० छ० ११।४

११- रा०अयो० ६।३

१२- रा०बा० ३०।१५

१३- पा०म०छ० ११।१

१४- रा०उ० ११०।९

१५- पा०म० ६९।२

१६- रा०वा० १६।७

१७- वरव रा० १३।२

१८- जा०म० २२।१

१९- पा०म० ६९।७

२०- रा०बा० १४।२०

२१- वरवरा० ३६।२

२२- वरवरा० ३९।२

२३- जा०म० १४३।२

२४- रा०ल० १९।३

२५- रा०उ० २७।८

२६- वरवरा० १८।१

२७- वरवरा० १८।२

२८- रा०उ० ७।५

२९- रा०अयो० ३२।९

३०- पा०म० ६४।२

३१- रा०अयो० ३१।११

३२- वरवरा० ७४।२

३३- जा०म० ३५।२

३४- रा०बा० १७।३

३५- रा०अर० २१।९

३६- जा०म०छ० १५।४

३७- रा०अर० ७०।१०

	आदि	मध्य	अन्त
ह	— इहि <sup>१</sup> , इहह <sup>२</sup> ,		साजहि <sup>३</sup> , तेहि <sup>४</sup> , भइ <sup>५</sup> ,
ख	— ईधन <sup>६</sup> ,	सोक <sup>७</sup> , नीदह <sup>८</sup> ,	मई <sup>९</sup> , लालही <sup>१०</sup> , लगाई <sup>११</sup>
व	— — पहुनाई <sup>१२</sup> , पहुचाव <sup>१३</sup> , पहुचावहि <sup>१४</sup>		जानिउं <sup>१५</sup> , भयउं <sup>१६</sup> , होउं <sup>१७</sup>
अ	ऊँचि <sup>१८</sup> , ऊँट <sup>१९</sup>	पूछिउं <sup>२०</sup> , पूछहीन <sup>२१</sup> , पूछि <sup>२२</sup>	ढेरऊँ <sup>२३</sup> , काहूँ <sup>२४</sup> , नाऊँ <sup>२५</sup>
ए	— —	जेइ <sup>२६</sup> , मँट <sup>२७</sup> , देहू <sup>२८</sup> ,	बिलोए <sup>२९</sup> , उपजाए <sup>३०</sup> , घोए <sup>३१</sup>
औ	— —	चौच <sup>३२</sup> , जाक <sup>३३</sup>	चयों <sup>३४</sup>

सयुक्त स्वर 'ऐ' 'औ' के अनुनासिक रूप—इन दोना स्वरों के अनुनासिक रूप भी पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं—

ऐं-मैं<sup>३५</sup>, पांच<sup>३६</sup>, ऐहैं<sup>३७</sup>, जहैं<sup>३८</sup>, अहैं<sup>३९</sup>

औं-मौह<sup>४०</sup>, सौपि<sup>४१</sup>, चौंके<sup>४२</sup>, जौं<sup>४३</sup>, बौड<sup>४४</sup>, घरों<sup>४५</sup>, सुनावों<sup>४६</sup>, नावों<sup>४७</sup>

व्यजन ध्वनियाँ—तुलसी की अवधी मापा में निम्नलिखित व्यजन प्रयुक्त हुए हैं—

(१) स्पदा ऋण्ड्य — क, ख, (घ), ग, घ ।

तालव्य — च, छ, ज, झ । मूषय — ट, ठ, ड, ढ ।

दन्त्य — त्, थ, द्, ध । द्वयोण्ड्य — प, फ्, ब, भ् ।

(२) नासिक्य — न्, ह्, म्, म्ह, ङ, ञ्, ।

(३) उर्ध्वप्ल — ङ, ङ । (४) पार्श्विक — ल । (५) लुण्ठित — र ।

(६) सघर्षा — प्, (फ्), स, ह् । (७) अनुस्वार — ँ । (८) विसर्ग —

नासिक्य व्यजन—केवल अवधी में ही नहीं ब्रजमापा में भी इ, अ, तथा ण ध्वनियाँ अपने मूल रूप में सुरक्षित नहीं पाई जाती है । इसके स्थान पर सबत्र अनुस्वार ( ) का प्रयोग मिलता है । ये व्यजन केवल पदमध्य में ही प्रयुक्त हुए हैं ।

१-पा० म० ७६।२	२-जा० म० १३३।२	३-जा० म० ११९।१
४-पा० म० छ० ६।१	५-रा० कि० १६।१५	६-रा० अयो० २५।१४
७-रा० अयो० १।२०	८-रा० वा० ३५।८।१	९-जा० म० १४६।१
१०-जा० म० छ १।३	११-रा० अयो० ११।६	१२-पा० म० छ० १०।१
१३-वरवै रा० ६७।२	१४-रा० वा० ३३७।१३	१५-रा० ल० १६।११
१६-रा० सु० १७।११	१७-रा० कि० ७।६२	१८-रा० वा० ८।१३
१९-रा० अर० ३८।१०	२०-रा० अयो० २१।१३	२१-रा० सु० २५।१
२२-रा० अयो० ३२।३	२३-रा० अयो० १७।५	२४-जा० म० छ० २।१
२५-रा० कि० ६।३	२६-पा० म० १३९।२	२७-रा० सु० ५६।१७
२८-रा० कि० १०।२०	२९-रा० उ० ४९।१०	३०-रा० अर० ३१।१७
३१-रा० उ० ४९।९	३२-रा० अर० १।१३	३३-रा० वा० ५।१०
३४-रा० वा० १०।२४	३५-रा० वा० ३६।१।५	३६-पा० म० ५।१
३७-पा० म० छ० ७।१	३८-रा० वा० ३१।१।८	३९-रा० वा० ३१।१।२०
४०-वरवै रा० ३।१	४१-रा० ल० ६।१९	४२-रा० अयो० ६।१३
४३-रा० सु० ७।९	४४-रा० अयो० ५।१४	४५-रा० सु० ३।४७
४६-रा० सु० २।८	४७-जा० म० २।१	



कवय म पूव ँ टयर्ग म पूव न तया पयग के पूव जू ५ लिपि अनुस्वार का प्रयोग हुआ है यथा—

ट - 'तत' गुप्तग', मगत' प्रगत गुविन्तग कुगत', मकर

ण - कटव कट' वैकूट कठमनि' दण्ट',

धू - कषा'', बिरति' प्रपष' पंधवटा'' मजन' ।

सत्तम दा-तागी म ण अया मू-रूप म मुर्तात है यथा—

प्रनाम'' मगुण' पानि' जाति ।

किन्तु अर्थात्तम म्पा म त' म परिवर्तित हा गया है यथा—

गुन'' परिनाम'', चरा'', दूपा' आति ।

हृ क पूव तागितय व्यजन प्रयोग म हृ का परिवर्तन प म हा गया है ।

सम्पूर्ण रामचरित मानस म यवत् ललावाण्ड क प्रयोगत कुछ स्थला पर तथा जानकी मंगल म गीत तथा रामचरित महद्भू म दा स्थला पर हृ अपरिवर्तित रूप म प्रयुक्त हुआ है । विषय म ँ का परिवर्तन प अथवा हृ अपरिवर्तित रूप में भी प्रयुक्त हुआ है यथा—

हृ 'धू गिहासन-मिषासा'' । मिहिनिहि-मिपिनिहि'' ।

मिह्ला-मिषना'' । मिहृ -सिष'' ।

'हृ' अपरिवर्तित रूप म—

सांर मिहासन गीतरी ।

सिहृ ठबनि इन उन चितव ।

बरहि पूजि नूप दीह मुभय सिहासन ।

धनक लम्भ चहृ आर मध्य मिहासा ।

दसरथ राउ सिहासन गीटि बिराजहिहा ।

१-रा० सु० १९।२	२-रा० वि० १५।३२	३-रा० अयो० १।११
४-रा० बा० १०।१८	५-रा० अयो० २८।१८	६-रा० बा० ७।१५
७-रा० बा २४।०	८-रा० अयो० ३१।१९	९-रा० वि १०।२९
१०-रा० अर० ९।२	११-रा० ँ न० १।१२	१२-रा० उ० १९।५
१३-रा० बा० १२।६	१४-रा० उ० ०।११९	१५-रा० अयो० १८।११
१६-रा० अर० १३।३९	१७-रा० वि० १ । १।१	१८-रा० अर० ११।७
१९-पा० म० ११।२	२०-रा० अर० ११।२१	२१-रा० बा० १४।८
२२-रा० बा० १४।७	२३-रा० बा० १४।५	२४-रा० उ० ९०।९
२५-रा० उ० १०।१०	२६-रा० अयो० ३९।१९	२७-रा० ल० ३९।२३
२८-रा० अर० २२।६	२९-रा० ल० १०६।११	३०-रा० ल० १८।२३
३१-जा० म० १८ ।१	३२-रा० ल० न० ४।३	३३-रा० ल० न० २०।१

'म्ह' तथा 'ह' क्रमशः म् तथा 'न' ध्वनियों के महाप्राण रूप हैं क्योंकि इहे काव्य में एक एक मात्रा ही मिली है। इनका प्रयोग पद मध्य में ही प्राप्त है। 'म्ह' तथा 'ह' की वर्णमाला में स्थान नहीं दिया गया है। दो वर्णों के समिश्रण से महाप्राण रूप अंकित किए गए हैं। तुलसी ने अवधी में 'म्ह' की अपेक्षा 'ह' का प्रयोग अधिक किया है यथा—

“ह=मिह—सखन्ह<sup>१</sup>, लरिह<sup>२</sup>, दरानह<sup>३</sup>, सरोखन्ह<sup>४</sup>, सामुह<sup>५</sup> ।

जिन्हहि<sup>६</sup>, तिहहि<sup>७</sup>, परिजमिह<sup>८</sup>, कमलहि<sup>९</sup> ।

सम्पूर्ण सामग्री में केवल एक स्थल मर 'ह' पदादि में प्रयुक्त मिलता है—

हात खसै जनि बार गहर जनि लावहु<sup>१</sup> ।

म्ह— तुम्ह<sup>२</sup>, तुम्हार<sup>३</sup>, तुम्हारा<sup>४</sup>, तुम्हारे<sup>५</sup>, तुम्हारी<sup>६</sup>, आदि ।

उत्क्षिप्त— उत्क्षिप्त ध्वनियों 'ड' तथा 'ढ' दोनों ही क्रमशः अल्पप्राण तथा

प्रहाप्राण हैं ये ध्वनियां केवल पदमध्य में ही मिलती हैं यथा—

ड — बड<sup>१</sup>, बडाई<sup>२</sup>, जड<sup>३</sup>, गड<sup>४</sup>, तडागा<sup>५</sup>, बडप्पनु<sup>६</sup>, नीड<sup>७</sup> ।

ढ — चडाउव<sup>१</sup>, चडावा<sup>२</sup>, बडाई<sup>३</sup>, बुडाई<sup>४</sup> दड<sup>५</sup> ।

सघर्षी— अवधी में तालम्य 'क्ष' के स्थान पर वत्स्य 'स' का प्रयोग मिलता है जो केवल अवधी की ही नहीं ब्रज की भी उल्लेखनीय विशेषता है। व्यक्तिवाचक सज्ञाओं तक में 'क्ष' का परिवर्तन 'स' में हो गया है तथा कैलाश सुरेशहि, शिव, शम्भु, शंकर, महेश क्रमशः कैलास<sup>१</sup>, सुरेशहि<sup>२</sup>, शिव<sup>३</sup>, शम्भु<sup>४</sup>, शंकर<sup>५</sup>, महेश<sup>६</sup> रूप में लिखे गए हैं।

'ष' ध्वनि का विकास बड़ा अनोरजक है। अवधी में इस ध्वनि के चार रूप प्रयुक्त मिलते हैं, यथा—

१-रा० उ० ११४	२-रा० वा० ३६०।१३	३-रा० सु० ७।२
४-जा० म० ७२।१	५-रा० उ० १११७	६-पा० म० ७६।२
७-पा० म० ७६।२	८-रा० उ० २०।१०	९-जा० म० ५६।१
१०-जा० म० २९।२	११-रा० अर० १३।२	१२-रा० ल० १२।२२
१३-रा० वा० १५।५८	१४-जा० म० ९।१२	१५-रा० अर० १३।९
१६-रा० अयो० १२।१७	१७-रा० उ० १६।८	१८-रा० वा० ७।३३
१९-रा० उ० ५३।१६	२०-रा० उ० २३।१९	२१-रा० वा० १०।१६
२३-रा० वा० ३४६।१२	२३-जा० म० ७।११	२४-रा० अर० १८।२६
२५-रा० अर० १३।१८	२६-रा० कि० १६।४	२७-रा० अर० १०।१४
२८-पा० म० १४६।१	२९-पा० म० ९।५।१	३०-पा० म० २८।२
३१-पा० म० २०।२	३२-पा० म० १६।४	३३-पा० म० ७२।१

(अ) चिह्नित रूप 'व्' परन्तु उच्चारित रूप ग है—

हसि करि कृपामिषु तब भाषा ।

सोपहि सिषु सतिन क्षय व्याग ।

एकउ हरिन न बर गुन दूजन ।

(ब) लिखित रूप 'व्' किन्तु उच्चारित रूप 'वु' है—

मानहु रोष तरगिनि बाड़ी ।

हरये आसिय पाइ ।

उर विद्या बष कष मुमग नज अतिबल ।

सहय सेप महि कहि सकति ।

कृषी निराबहि धनुर किगाना ।

मानग म एक स्थल पर इगवा पत्राणि म वदुन ही शब्द प्रयोग मिलता है । जो इग बात का प्रमाण है कि तुलसी में रचना-का म व का उच्चारण 'म के रूप म भी अवगत रहा होगा, दया-जगु जान पनुमुरा ज-मुगवम ।

(स) 'व' के लिए लिपि म 'व' प्रयुक्त हुआ है—का बरगा जब कृषि सुगानी ।

(द) 'व' के लिए 'ह' का प्रयोग—यह केवल रामलला नहछू म भी एक स्थल पर हुआ है—

गग पुत्र ।"

## २ ० २ ध्वनियों का लक्षण-तरण

समार की की भी ऐसी भाषा नहीं है जिसमें पूर्णाधिक मात्रा म विमा पीय घा प्रयुक्त न हूँ हा । अर्थात् म तत्सम अथ तत्सम तद्भव विदधी प्रातीय उपभाषाया ता क्षीय ब लिया की घात्रली का समावग है जिसका कारण आलोच्य भाषा म रूप—बभिश्रय क साम साय अनेक प्रकार क ध्वनि परि बतन भी दृष्टिगोचर हाते है । परिवर्तन भाषा की सामाय प्रवृत्ति है । तुलसी की अवधी प्रा० मा० आ० भा० से म० म० भा० आ० भा० म होनी हुई इस रूप म प्राप्त है । इस लम्बे समय म घात्रण ध्वनिया म अनेकानेक परिवर्तन हुए होंगे, जिनका मूल म लाप आगम, विषय विषयीकरण, स्वरभक्ति, ह्रस्वाकरण एव दीर्घीकरण आथ तथा महाप्राणी करण आदि हा सकते हैं ।

१-रा० ल० ११७।१८

२-रा० वा० ५५।११

३-पा० म० ५३।१

४-रा० अयो० ३५।२

५-रा० उ० ६।३२

६-जा० म० ५३।१-

७-रा० उ० २६।१९

८-रा० कि० १५।१५

९-रा० वा० १००।१३

१०-रा० अर० २३।७

११-रा० ल० न० १६।३

ध्वनियों के लिप्यंतरण में मिश्रता के चार [कारण ही सकते हैं—

१-उच्चारण-विविध, २-मात्रापूर्ति, ३-लिपि में आलेखन विवल्प, ४-लिपि-वि हो का आभाव

(१) उच्चारण विविध हर सात आठ कोस पर भाषा में कुछ न कुछ परिवर्तन हो जाना स्वाभाविक है जसा कि बोली भूगोल से भी स्पष्ट हो चुका है। आलोच्य भाषा एक विस्तृत क्षेत्र रही है, अतएव उसके क्षेत्रीय रूपांतर होना अति स्वाभाविक है। इन क्षेत्रीय रूपांतरों का प्रयोग होने से ही आलोच्य भाषा में उच्चारण विविध मिलता है जो एक ही शब्द के अनेकानेक ध्वन्यात्मक स्वरूपों से अति स्पष्ट है। ऐतिहासिक दृष्टि से भी ध्वन्यात्मक परिवर्तन हो जाने के कारण उच्चारण-विविध संभव रहता है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

राव'-राउ'-राय'-प्रभाव'-प्रभाउ'-पाव'-पाय'

सतिभाव'-सतिमाय', दीव'-दीउ'-दीइउ',-दीअ'-, सुभाव',-सुमाउ'-  
(सुमाऊ), सुमाय'-स्वभाइ' ठाव'-ठाउ'-ठाऊ', हृदय'-हिरदय',  
हृदउ',-हिय' समय'-समउ'-समी', गाय'-गाइ' (-गाई), गहा'-  
इहा' -विवाह'-विआह'-व्याह', पियास'-पिआस', द्वार'-  
दुआर' -स्वामी'-साई', नाम'-नाउ', (-नाऊ),  
ऋद्धि'-रिधि', परस्पर'-परसपर', सनेह'-नेहा', लोचन'-लोयन',

१-रा० ल० न० १७।३

२-रा० बा० ३६०।९

३-जा० म० १५३।२

४-रा० वा० ३७।१७

५-रा० वा० १०।४

६-रा० उ० ८३।२'

७-जा० म० २६।२

८-वरवै रा० २।१२

९-पा० म० १३।१

१०-वरवै रा० २।११

११-रा० वा० २०।३

१२-जा० म० १०२।२

१३-रा० वा० २०।१८

१४-रा० अयो० १०।३

१५-रा० उ० १।१२

१६-जा० म० ३३।२

१७-जा० म० १४।११

१८-रा० अयो० ९०।६

१९-रा० अर० १३।२९

२०-पा० म० १।२

२१-जा० म० ८५।२

२२-रा० अयो० ३२।९

२३-जा० म० छ० २।४

२४-रा० अ० ४३।

२५-रा० अयो० ४०।७

२६-जा० म० १०।१

२७-रा० अयो० २३।१७

२८-रा० अर० २९।१६

२९-वरवै रा० १।१२

३०-रा० अर० २३।१६

३१-पा० म० ०।१

३२-पा० म० १०७।२

३३-जा० म० ५८।१

३४-पा० म० ३७।१

३५-रा० वा० २२।१४

३६-रा० वा० ३८।८

३७-रा० ल० ४९।१६

३८-रा० अयो० २४।११

३९-रा० उ० १२।१६

४०-वरवै रा० ५०।१

४१-रा० कि० ६।३

४२-रा० ल० न० २०।४

४३-पा० म० ८।२

४४-जा० म० ८५।१

४५-रा० वा० २०।२

४६-वरवै रा० ६९।२

४७-पा० म० २९।१

४८-जा० म० ६२।१

४९-जा० म० ७।१

जम'-जनम' आन'-अन' उतर'-उतर' सत्य'-सात'-सात',  
 घम'-घरम' प्रम'-पेम' जीम'-जोह' त्रिय'-त्रिय' महप'-माहव'  
 जीव'-जिव' जीवन'-जिवन', स्वामल'-सावर'-सावरी', वध्या'-वाध'  
 सनमुख'-समह' भूमति'-भूति', गुप्त'-गुप्त' और'-ओर'-अठर'  
 मूल'-मूरि', नयन'-नैन', मोहावन', सोहावनो' सपर'-सपर'-सपर'  
 बद्ध-बुद्ध-बुद्धा' हान' (-हान)-अस्तान' पच्छ'-पाय'

(२) मात्रा-पूति-

छानुरोप के कारण ध्वनि-परिवर्तन-आलाप्य भाषा में छानुरोप से  
 जहाँ मात्रापूति की समस्या उठी है वहाँ निम्न प्रक्रियाओं से ध्वनि-परिवर्तन कर  
 लिए गए हैं ।

(अ) ह्रस्वीकरण—

नारी—नारि'

नीरस—निरस''

१-जा० म० ५६।२	२-बरवँ रा० ६८।२	३-जा० म० ११०।२
४-जा० म० ५५।२	५-जा० म० छ० ३।१	६-रा० अयो० १३।६
७-जा० म० २४।२	८-रा० अयो० २६।१२	९-बरवँ रा० २४।१
१०-जा० म० २३।२	११-रा० अयो० ३२४।८	१२-बरवँ रा० ६४।२
१३-रा० अयो० ३२६।२९	१४-बरवँ रा० २७/२	१५-रा० बा० २२।१
१६-रा० ल० ३३।९	१७-रा० अयो० २५।५	१८-जा० म० १३१।२
१९-रा० ल० न० ३।४	२०-रा० बा० २७।२	२१-रा० वि० १४।१६
२२-रा० जयो० २१।४	२३-पा० म० १८।२	२४-रा० वि० १।१३
२५-रा० ल० न० १२।१	२६-जा० म० छ० ७।२	२७-रा० उ० १२२।३०
२८-रा० अयो० ७५।३	२९-रा० अयो० ३२६।२६	३०-रा० अयो० ९९।५
३१-रा० अयो० ११।१२	३२-रा० बा० १४।१७	३३-रा० उ० ११३।२१
३४-रा० बा० १।१६	३५-रा० अयो० ७७।१७	३६-रा० अयो० ७७।१८
३७-रा० अयो० १००।१४	३८-रा० अयो० ३४।७	३९-रा० अयो० ३१८।१८
४०-रा० अयो० २७।१६	४१-बरवँ रा० १९।१	४२-जा० म० छ० ८।३
४३-रा० बा० ३१६।५	४४-रा० मु० ३५।३५	४५-रा० ल० ८८।३३
४६-पा० म० ९९।१	४७-रा० उ० ३०।१७	४८-रा० कि० २८।२८
४९-रा० ल० २३।७	५०-जा० म० २९।२	५१-रा० उ० २९।४
५२-	५३-रा० अयो० १९।५	५४-बरवँ रा० १७।१
५५-रा० वि० १०।१३		

बीच—विच<sup>१</sup> नीचहि—निचहि<sup>१</sup>

आर्शाबाद—आमिरवाद<sup>१</sup> ।

(आ) द्वित्व व्यजन का शक्तिपूर्ति रहित सरलीकरण

चित्त—चित<sup>१</sup>, उत्तर—उत्त

चरित्र—चरित<sup>१</sup> विपत्ति—विपत्ति<sup>१</sup> ।

(इ) अनुस्वार का अनुनामिकीकरण

कधा काघ<sup>१</sup> अक्—आक्

आनद—आनद<sup>१</sup> ।

(ई) दीर्घीकरण—यह प्रवृत्ति अधिकांश चरण के अन्तम पद के अत्य

स्वर म प्राप्त है—

विसाल विसाला<sup>१</sup> मूपाल मूरात्रा<sup>१</sup> करतूनि करतती<sup>१</sup> राव राउ राज<sup>१</sup> ।

(३) णिपि मे आन्ध्रवन—विकल्प—आलोच्य भाषा म निम्नलिखित वैकल्पिक रूप प्राप्त हैं जिहे आलेखन सुनिवार्य यथास्थान अपनाया गया है—

(अ) यत्तन ऐ का जइ रूप मे भी लिखा गया है जैसे—

ऐ > जइ मैत्री > मइत्री<sup>१</sup> मिट > मिटइ<sup>१</sup> पैज > पडज<sup>१</sup>

पूज > पूजइ<sup>१</sup> दैष > दइष<sup>१</sup> ऐसे अन्ध्रवै<sup>१</sup> ।

(आ) सयुक्त स्वर ऐ 'अय रूप म भी आलिखित मित्रता है—

ऐ > अय बदेही > बयदेही<sup>१</sup> मत्री > मयत्री<sup>१</sup> वैर > बयर<sup>१</sup> ।

(इ) सयुक्त स्वर औ का अउ रूप मे आन्ध्रवन—

औ > अउ विसमौ > विसमउ<sup>१</sup> और > अउर<sup>१</sup> औधि > अउधि<sup>१</sup>

(ई) अनुनासिकता णे च द्रवि दु बीर अनुस्वार दानो का प्रयाग लगभग

समान रूप स ही हुआ है—

च द्रवि दु द्वारा यक्त अनुनासिकता कही कही अव्यय प्रयुक्त हुई है यथा—

१ रा० अर० ७१६	-रा० वा० ११२०	-रा० वा० १२१४
४-रा० अयो० १११०	१ जा० म० ११०	२ १ १२० ११०
७-रा० सु० १२१२	८ पा० म० १०११	९-पा० म० ६४१२
१० जा० म० ११०१०	११-रा० म० ३६१२०	१२ १० म० ३६१२९
१३-रा० अयो० १११०	१४-रा० वा० ३६११३	१५ रा० उ० २ १२
१६-जा० म० ११११	१७-रा० म० ०१	१८-पा० म० ३६११
१९-जा० म० १०२१०	२०-रा० उ० ६११	२१-रा० अर० ११११
२२-रा० वि० ४१५	२३-रा० वा० १	२४-रा० अ० १ ११
२५ रा० अया १००११४	२६-रा० म० ३६११०	

हृत्प', मुमिनी' कृपा', हिय', समी', जिय', गुमार्ये', राय' ।  
 वही वही अनुस्वार द्वारा अनुनासिकता का छोटन किया गया है यथा—  
 जाक' जाक', भट', गारी', मलाई' सरी' ।

(उ) समुक्त ध्वजनों में आगत नासिकत्व ध्वजना ट् ज्, ण्, न् तथा म्  
 को अनुस्वार द्वारा प्रसंगित किया गया है, यथा—

ट्—अग ' रग ' , प्रसग ' , सकर ' ।

ज्—जज ' , प्रपच् ' , पधानन ' , पच, ' पचउटी ' ,

ण्—दड ' ब्रह्मिड ' , पासड ' , दसाठ ' , कठ ' ।

न्—मगवत ' दुदमी ' , अनत ' मिधु ' मुन्दर ' , ।

म्—जम्बुक् ' , गम्भीर ' , सम्भ ' सम्पति ' , दम्पति ' , सम्पदा ' ।

(४) लिपि-चिह्नो का अभाव—

(अ) आधुनिक अवधी व कर्म्य रूप का विकल्पण करने के बाद भाषाविदों  
 ( यथा—डा० वाकराम सक्सेना आदि ) द्वारा फुमफुसाहट वाले स्वर ( इ, उ ए ),  
 उन्मीन स्वर अ तथा कुछ स्वरा के ह्रस्व रूप यथा—ए ओ) स्पष्ट किए जा चुके  
 हैं । तुलसी की अवधी में फुसफुसाहट वाले स्वर ( इ उ, ए ) तथा उन्मीन  
 स्वर ( अ ) और ह्रस्व ( ए ), ( ओ ) के आलम्बन के लिए कोई अथक लिपि  
 चिह्न न होना व कारण इहें इ उ, ए अ ए तथा ओ वणों द्वारा ही व्यक्त किया  
 गया है । इनके अस्तित्व का ज्ञान मात्रा-गणना तथा स्यात्मक उच्चारण से होता है ।  
 आधुनिक अवधी में प्राप्त उपयुक्त प्रकार के स्वरों के आधार पर भी तुलसी की  
 अवधी में इनके अस्तित्व की स्वीकार करने में कुछ सहायता मिलती है । इसने  
 सम्बन्ध में विस्तृत चर्चा विषय क्रम ( २२१ ) में की गई है ।

१—रा० अयो० १०।८ २—रा० अयो० ८।५, ३—रा० उ० ८।१२, ४—  
 रा० अयो० ३२०।१५ ५—रा० ल० ३९।१९ ६—रा० अयो० ३३।५ ७—रा०  
 अयो० १५।१० ८—रा० अयो० ३०।१८ ९—रा० अयो० ४२।१९, १०—रा०  
 अयो० २१।१२ ११—रा० अयो० ७।१२ १२—रा० वा० ७।२०, १३—रा०  
 वा० ७।४, १४—जा० म० ११।२ १५—वरव रा० ११।१ १६—वरव रा०  
 १३।१ १७—पा० म० ७।८।१ १८—पा० म० छ० ८।४, १९—रा० उ० ३०।८  
 २०—रा० वा० ६।८ २१—रा० ल० १९।१८ २२—जा० म० ७०।१ २३—रा०  
 अर० १३।३० २४—रा० वा० ८५।२३, २५—रा० वा० ८५।२३ २६—रा० अर०  
 २०।२२ २७—रा० ७० २०।१ २८—जा० म० ५३।२। २९—वरव रा० ४२।२  
 ३०—रा० उ० १२।१६ ३१—वरव रा० ४२।१ ३२—रा० उ० २।४० ३३—  
 पा० म० ६७।२, २४—रा० अर० २०।२६ ३५—रा० उ० २८।२६ ३६—पा०  
 म० २०।२ ३७—पा० म० १८।२ ३८—पा० म० १८।१, ३९—रा०  
 ल० ११८।११ ।

(ब) विदेशी ( अरबी फारसी ) व्यजन ध्वनियो म परिवर्तन--क, ख, ग,

अ, तथा फ क्रमश क, ख, ग, ज तथा फ मे परिवर्तित हो गई हैं, यथा —

क	क	कागज	कागद <sup>१</sup>
ख	ख	बन्दीखान	बन्दीखाना <sup>२</sup>
ग	ग	गरीब, गुमान	गरीब <sup>३</sup> , गुमान <sup>४</sup>
ज	ज	बजाज	बजाज <sup>५</sup>
		जहान, हजार	जहान, <sup>६</sup> हजार <sup>७</sup>
		बाज	बाज <sup>८</sup>
फ	फ	सर्राफ, तलफत	सर्राफ <sup>९</sup> तलफत <sup>१०</sup>

इसी प्रकार अरबी - फारसी शब्दो मे प्रमुक्त होने वाले विशिष्ट स्वर भी अवधी के अनुरूप ही परिवर्तित हो गये हैं ।

## २३ ध्वनिग्राम-स्वर तथा व्यजन और अर्ध-स्वर

### २३१ स्वर-ध्वनिग्राम

तुलसी की अवधी रचनाओ में प्राप्त दस स्वर ध्वनियाँ इस प्रकार हैं—

अ, आ इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ ओ, औ । इहे निम्न

प्रकार से व्यवस्थित किया जा सकता है ।

#### १-मूल—

(क) ह्रस्व- अ, इ, उ

(ख) दीर्घ- आ, ई, ऊ, ऐ, औ

२-सयुक्त स्वर-ए (अइ), औ (अउ)

स्वरा के अतगत 'अ तथा 'आ' को ह्रस्व और दीर्घ कहकर अलिहित किया जाता है ।" किन्तु इह एक ही ध्वनिग्राम के सस्वन मान लेना ही अवज्ञानिक एव भ्रमपूर्ण होगा । 'आ' तथा 'आ' म उच्चारण-स्थान-भेद के साथ-साथ मात्रा भेद भी है । यही स्थिति इ, ई, उ, ऊ, के विषय मे है । इन स्वरा के लिपि—चिह्नो की चर्चा विषय-क्रम (२२) म की जा चुकी है ।

१-रा० बा० १।१२

२-रा० ल० १०।८

३-रा० वा० २५।३ -

४-रा० ल० न० १३।४

५-रा० उ० २८।२१

६-रा० बा० ३।८

७-रा० ल० न० १६।४

८-रा० अ० ११।२

९-रा० उ० २८।२१ -

१०-रा० मु० २८।१०

११-डा० उदयनारायण तिवारी भाषाशास्त्र की

रूपरेखा पृ० २६० ।



यही उक्त ध्वनिप्राप्ति रक्षण व निर्माण त त्व परिष्कण एवं व्यतिरकी स्थितिया पर विचार करण—

। अ । — गद की तीना स्थितिया म उपलब्ध है यथा—  
असुराग ' अघारा निरन् ' वमठ अमिअ ' धरिअ'

। आ । — यह भी सन् का तीना स्थितिया म मिलता है यथा—  
आनन आश्रम ' राम ' भाग ' मटा ' सोमा''

(अ) तथा (आ) व मध्य व्यतिरकी स्थितिया—

। अ । — सात'' (सबडा), नई' (त्रिया) वस'' (वस म)

। आ । — सात'' (सात) माई' (माई) वास'' (निवास)

। इ । — यह सन् की ताना स्थितिया म प्राप्त होनी, यथा —

इत'' इव'' इक'' परिछन'' वरित'' निसि, ' विरवि''

। ई । — यह भी सन् की तीना स्थितिया म मुलभ है यथा —

ईस'' ईसना' असीस'' समीत'' मई' मई''

(इ) तथा (ई) व मध्य व्यतिरकी स्थितिया—

(इ) सौवारि'' [ममालवर] (ई) सवारी'' [सवारी]

(उ)—यह सन् की तीना स्थितिया म प्रयुक्त हुआ है—यथा—

उर'' उमा'' मगुन'' धनुष' वट्ट'' वट्ट''

१-पा० म० ३३।२	२-रा० उ० १।१	३-पा० म० ९७।१
४-पा० म० ९९।१	५-रा० वा० २।२	६-रा० वा० १३।७
७-रा० ल० १५।११	८-रा० अर० ३०।६	९-रा० वा० ३५।२०
१०-रा० अयो० २।८	११-पा० म० ६।२	१२-रा० अयो० १४।७
१३-रा० अर० २।१३	१४-वरव रा० २०।१	१५-वरवै र० ३४।२
१६-रा० अयो० ८०।२	१७-रा० अर० १।११०	१८ रा० अर० १३।७
१९-रा० वरव ३।१२	२०-रा० वा० ४।१३	२१-वरव रा० ८।२
२२-जा म० २३।४	२३-रा० वा० ३।१९	२४-रा० ल० १२।६
२५-रा० ल० १६।६८	२६-रा० ल ११२।२०	२७-रा ० उ० १२१।७२
२८-रा० अयो० २।६	२९-रा० ल० १०।१८	३०-जा० म० २४।१
३१-पा० म० २९।१	३२-रा० वा० ३।४।१८	३३-पा० म० ५७।१
३४-रा० अयो० १।२१	३५-रा० वा० १।१४	३६-रा० कि० २६।२६
३७-रा० कि० १८।१६	३८-रा० ल० १०७।१६	३९-रा० ल० १०७।७

(ऊ) — यह भी तीनों स्थितियां म मिलता है, यथा—

ऊना<sup>१</sup>, ऊमर<sup>२</sup> भूप<sup>३</sup>, कूप<sup>४</sup> आपऊ,<sup>५</sup> मयऊ<sup>६</sup>

(उ) तथा (ऊ) के मध्य व्यतिरेकी स्थितियां—

(उ) पुर<sup>१</sup> [ग्राम] (ऊ) पूर<sup>२</sup> [पूण]

(ए) — इस स्वर का प्रयोग भी शब्द की तीनों स्थितियों में हुआ है । यथा—

एहि<sup>१</sup> एक्<sup>२</sup> किएहु,<sup>३</sup> पठएसि<sup>४</sup> डारे,<sup>५</sup> मारे<sup>६</sup>

(ऐ) यह भी तीनों स्थितियां में प्राप्त होता है, यथा—

ऐहै,<sup>१</sup> ऐसे<sup>२</sup> देव<sup>३</sup> वठ<sup>४</sup> जीतै<sup>५</sup>, लै<sup>६</sup>

(ए) तथा (ऐ) के मध्य व्यतिरेकी स्थितियां—

(ए) — वद<sup>१</sup>, [वद] (ऐ) वद<sup>२</sup> [वैद्य]

(ओ) — यह शब्द की तीनों स्थितियों में सुलभ है यथा—

ओरा<sup>१</sup>, ओहार<sup>२</sup> घमोई<sup>३</sup> वियोग<sup>४</sup> सा<sup>५</sup>, को<sup>६</sup>

(औ) — यह भी तीनों स्थितियां में ही प्रयुक्त है, यथा—

औरउ,<sup>१</sup> औपघ<sup>२</sup> फौज<sup>३</sup> सौमित्र<sup>४</sup> जिवौ<sup>५</sup>, जानौ<sup>६</sup>

(ओ) तथा (औ) के मध्य व्यतिरेकी स्थितियां—

(ओ) <sup>१</sup> ओर [तरफ] (औ) <sup>२</sup> और [अय]

(ऐ) तथा (औ) का क्रमण अइ तथा अउ के रूप में (उच्चारणानुसार) भी प्रयोग मिलता है ,

१ रा० सु० १४।१९	२ रा० सु० ५८/८	३ रा० अयो० ३८।१
४ बरवै रा० ६।१	४-जा० म० छ० १०।३	६ रा० ल० १६।१८
७-जा० म० ८९।१	८ रा० ल० ३७।१८	९-पा० म० ७४।१
१० रा० ल० ९७।६	११ रा० वा० ७।१३	१२ रा० सु० १९।२
१३ रा० सु० १८।८	१४ रा० अयो० ६२।१२	१५ पा० म० छ ७।१
१६ रा० ल० ९।१६	१७ रा० सु० ५१।२	१८ रा० वा० ५८।१४
१९ रा० सु० ५५।८	२० रा० वा० ९६।८	२१ रा० वा० ६।७
२२ रा० ल० ५५।१३	२३ रा० कि० २२।१२	२४ रा० वा० ३४।१५
२५ रा० ल० १०।१६	२६ रा० अयो० ३१।३	२७ रा० अयो० ३२।६
२८ रा० अयो० ३२।१८	२९ रा० वा० ३०।१५	३० रा० अया० ६।३
३१ रा० ल० ७९।२४	३२ रा० वा० १७।१६	३१ रा० अया० ३६।१३
३४ रा० कि० १८।४	३५ रा० सु० ९।१ <sup>१</sup>	३६ रा० अयो० ७७।१८

यथा—

(ए)— एम्<sup>१</sup> एहै<sup>१</sup>

(अद्)— अद्मेठ<sup>१</sup> अद्मेठू<sup>१</sup>

इसी प्रकार (ओ) का प्रयोग अठ व रूप म—

(ओ)—ओरउ<sup>१</sup> [अप]

(अठ)—अठर<sup>१</sup> [अप], अठपि<sup>१</sup> [घोषा]

अतएव ए तथा अद् और ओ एव अठ के मध्य किमी प्रकार का ध्वनिरेकी स्थिति नहीं है। अत दो (ए तथा ओ) हा ध्वनिग्राम हैं। साथ हा यह भी स्पष्ट है कि (ए) और (ओ) मयुक्त स्वर हैं।

अतएव स्वरा व परिवर्तन—एण्डि मध्य, अत तथा व्यतिरेक स्थितान वाल युग्म न स्पष्ट है कि अवधी म त्म स्वर ध्वनिग्राम हैं (अ) (आ) (इ) (ई) (उ) (ऊ) (ए) (ऐ), (ओ) तथा (औ)।

अनुनासिकता —

अनुनासिकता स्वरों का अग्ररूप (संशोधन रूप) मानी गयी है। इसक उच्चारणकाल म वायु अगत मुख म और अगत नासिका रुद्र मे बाहर निकलती है। नासिक्य ध्वनियाँ (व्यजन) स्वरों म अलग मुनी जा सकनी हैं, परन्तु अनुनासिकता का स्वरा म अलग मुनना असम्भव है। अत नासिका म सम्बन्धित भाषा म ध्वनिया क दा प्रकार हैं—(१) अनुनासिकता—इसक लिए लिपि म [ ] चिह्न है यथा—  
आकु<sup>१</sup> पांवे<sup>१</sup> छाँह<sup>१</sup> भाँह<sup>१</sup>, चाँद<sup>१</sup> लँका<sup>१</sup> समा<sup>१</sup> वृषा<sup>१</sup> मुमित्री<sup>१</sup> सीती<sup>१</sup> आण्डि।

(२) अनुस्वरा—स्वरों व वाङ् उच्चरित होने वाला नासिक्य तत्व है। जा लिपि म स्वरा क ऊपर त्रिदु ( ) लगाकर अंकित किया जाता है। यह प्राय ह्रस्व स्वरा व परचात आता है। यद्यपि तुलसी की अवधी रचनाओं म एम शब्द अत्यन्त कम मात्रा म प्राप्त हैं। परन्तु मों प्राप्त परवर्ती यजना व साथ मिलकर यह तत्पर्याय नासिक्य व्यजन—रूप म उच्चरित हाता है इसक लिए लिपि चिह्न ( ) है

१ रा० ल० १६।९	२-पा० म० ७० ७।१	३ रा० ल० ४।११
४ रा० ल० २।४	५ रा० उ० ४५।१९	६ रा० कि० ६।७७
७ रा० मु० ३८।२२	८-पा० म० ६४।२	९ पा० म० ११५।२
१-वरव रा० ६६।१	११-वरव रा० ६६।२	१२-वरव रा० १७।२
१३ रा० मु० ५३।३	१४ रा० ल० १६।२०	१५ रा० मु० ५५।१
१६ रा० अया० ८।५	१७ रा० उ० २५।११	

यथा —

कठय—मगल<sup>१</sup>, म ग<sup>१</sup>, सग<sup>१</sup>, कुबिहग, रसमग<sup>१</sup>, सक्ट<sup>१</sup> ।

तालव्य—पच<sup>१</sup>, पचवटी<sup>१</sup>, विरचि<sup>१</sup>, कज<sup>१०</sup> आदि ।

मूष-य—दडक<sup>११</sup>, घमड<sup>११</sup>, श्रीगड<sup>११</sup>, मुड<sup>११</sup>, कुडल<sup>११</sup> आदि ।

वत्स्य—सत<sup>११</sup>, पथ<sup>११</sup>, वघ<sup>११</sup>, कदमूल<sup>११</sup>, आदि ।

द्वयाष्टय—सभा<sup>१०</sup>, कुम<sup>११</sup>, सपति<sup>११</sup>, आदि ।

नि सत्तह अनुनासिकता स्वरो का अपरूप (सशोधित रूप) होने के कारण स्वरो के अति निकट है जबकि अनुस्वार का उच्चारण व्यजनवत होने के कारण व्यजन के अधिक समीप है । अनुस्वार ( ) ध्यजना के पूर्व उनके स्थान प्रयत्ना नुसार अनुकूल बन कर प्रयुक्त होता है । भाषा म इन दोनों का अपना अलग-अलग महत्व है । अनुस्वार वर्णमाला म नासिक्य वर्णों के स्थान पर प्रयुक्त होकर भाषा की जटिलता कम करता है और त्वरालेखन म सहायक हाना है । आवृत्ति (Frequency) के आधार पर वत्स्य नासिक्य 'न' के सस्वन रूप म प्रयुक्त होकर भाषा म अनकानेक नासिक्य व्यजन ध्वनियों को स्पष्ट करता है । अनुनासिकता अभिधाय एव व्याकरणिक अर्थ म अंतर लाती है, अतएव महत्वपूर्ण है, उदाहरणार्थ—

आलोच्य भाषा म अनुनासिकता एव अनुस्वार के मध्य व्यतिरेकी स्थितियाँ—  
अनुनासिकता ( ) हँस<sup>११</sup> = (हँसना)

अनुस्वार ( ) हस<sup>११</sup> = (पक्षी)

निरनुनासिक तथा अननासिक के मध्य व्यतिरेकी स्थितियाँ—

निरनुनासिक—साप<sup>११</sup> = साप, अनुनासिक—साप<sup>११</sup> = सप ।

इसके अतिरिक्त अनुनासिकता व्याकरणिक अर्थों को भी आमध्यक्त करती है, उदाहरणार्थ—

१-रा० वा० ३४६।३	२-रा० अर० ७।१८	३-रा० अयो० २८।१६
४-रा० ल० १३।२४	५-रा० सु० १५।२१	६-रा० अर० २९।४३
७-जा० म० ७०।१	८-रा० अर० १३।३६	९-रा० गा० ३५।१०
१०-रा० वा० १।१७	११-रा० कि० १४।१	१२-रा० उ० ३७।१८
१३-रा० अर० २०।२३	१४-वरव रा० २।१	१५-रा० अर० १२।१२
१६-रा० कि० १६।८	१७-रा० कि० ५।७	१८-रा० अर० १५।१०
१९-रा० नु० १।४	२०-रा० कि० १।३	२१-रा० ल० १२।३
२२-रा० कि० ७।३१	२३-रा० अयो० १३।१३	२४-रा० वा० ३४।१८
२५-रा० अयो० १३।१६	२६-रा० कि० ६।२५	

है' = सहायक त्रिया एक वचन म । हूँ' = सहायक त्रिया बहुवचन म ।

सगी' = एक वचन म । सगी' = बहुवचन म ।

अत स्पष्ट है कि अनुनासिकता ( ) भाषा का स्वतन्त्र ध्वनिप्राप्त है । परि

स्थिति जब भेद से स्वरा व उपस्वर इत्यादि विचलन इन प्रकार है—

(अ) नासिक्य ध्वनियों के पूर्व प्रयुक्त स्वर कुछ अनुनासिक हो जाते हैं जो अपूर्ण और अनुनासिक बड़े जाते हैं यथा—

नाम = नाँम, राम' = राँम  
 काम = काँम, प्राण' = प्राँन—प्राण ।

यदि वतमान अवधि की उच्चारण प्रवृत्ति को ध्यान में रखकर विचार किया जाये तो आगे इस प्रकार के निम्नलिखित विवादे जा सकते हैं—

(अ) अनुनासिक स्वरों के उच्चारण में जिह्वा की स्थिति लगभग निरनुनासिक स्वरों के समान ही होती है केवल अथ विवृत स्वर अपेक्षाकृत कुछ विवृत हो जाते हैं यथा—  
 जाक' चोच' भेंट' ।

(ब) अथ विवृत मध्य स्वर अ 'ह' के पूर्व अधिक अग्रोत्थित होकर उच्चरित होता है यथा—  
 सह' कह' चह' ।

(ग) कठय-वजनों व परवर्ती अग्रस्वर कुछ पश्चवर्ती होकर उच्चरित होते हैं जैसे—  
 गिर' धर' कीन' ।

(घ) पर समुक्त व्यंजन होने से पूर्ववर्ती दीर्घ स्वर कुछ लृप्त हो जाते हैं यथा—  
 देख्यो' तोख्यो' पज्यो' मोच्छ' ।

(ङ) मूषय-व्यंजनों व मध्य आगत पश्चस्वर कुछ आगे से उच्चरित होते हैं,

१-रा० वा० ३१०।६	२-रा० ल० ६३।५	३-पा० म० १०९।१
४-जा० म० १४६।२	५-रा० वि० १०।७	६-वरर रा० १०।१
७-वरर रा० ७।२	८-रा० अयो० ३१६।१०	९-रा० वा० ५।१०
१०-रा० अर १। ३	११-रा० अयो० १७।६	१२-रा० वि० १४।८
१३-वरर रा० २१।२	१४-रा० उ० २।२।५	१५-रा० ल० १९।१२
१६-रा० उ० २।२०	१७-वरर रा० १६।१	१८-रा० उ० ९३।६
१९-रा० उ० ७।३	२०-रा० उ० ११०।११	२१-रा० वा० १४।२२

यथा —

टाट<sup>१</sup>, ठाढ<sup>१</sup> ।

(ब) 'ह' से पूर्व प्रयुक्त स्वरों की मात्रा कुछ हल्की हो जाती है । यथा —  
छाँह<sup>१</sup>, देह<sup>१</sup>, गेह<sup>१</sup>, सनेह<sup>१</sup>, सुबाहु, सोह<sup>१</sup>, मोह<sup>१</sup> ।

### २ ३ २ व्यजन ध्वनिग्राम

आलोच्य भाषा में प्राप्त व्यजन-ध्वनियों को निम्न तालिका द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है

व्यजन<sup>१</sup> —

**नोट** —तालिका के लिए कृपया पृष्ठ संख्या ५८ देखें ।

तुलसी की अवधी में अ, ण, ङ नामिक व्यजन ध्वनियाँ 'न' के अंतर्गत आती हैं । ये ध्वनियाँ अपने मूल रूप में सुरक्षित नहीं रही हैं, 'न' तथा ण व्यजन ध्वनियाँ केवल तत्सम शब्दों में ही प्रयुक्त हुई हैं ।

आलोच्य भाषा में प्राप्त समस्त व्यजन ध्वनियों की यतिरेकी स्थिति एवं उनके परिवेश शब्दों के आदि मध्य और अंत को स्पष्ट करते हुए उनका ध्वनि-ग्राही विश्लेषण किया जा रहा है —

(१) कथय—

क=कथय स्पर्श, अघोष, अल्पप्राण ।

ख=कथय, स्पर्श अघोष, महाप्राण ।

ग=कथय स्पर्श सघोष, अल्पप्राण ।

घ=कथय, स्पर्श सघोष महाप्राण ।

प्रयोग स्थिति—

क-काम<sup>१</sup>

ख-क<sup>१</sup>

ग-ग<sup>१</sup>

१-रा० वा० १४।२

२-रा० वा० २६।१०

३-ख रा० १८।१

४-रा० ज्यो० ७।१२

५-रा० ज्यो० ७।१०

६-रा० ज्यो ६।१०

७-जा० म० ७।२

८-ख रा० ५।२

९-ख रा० १८।२

१०-डा० बाबुराम सबोता

स्वाभूता जाय जवनी पठ मया २८-२५

११-रा० अर० १६।२३

१२-रा० वा० ५।४

१३-रा० अर० १८।२०

	द्वयोऽप्य	द्वय	वस्य	तात्पर्य	सूचय	गठय	स्वर
अप प्राण	प व	त् इ		पू ज्ञ ट	र	ग	
महा प्राण	प म	ध ष		छ ष ठ	र	गू	पू
अप प्राण	मू		पू	र	ष	ह	
गालिय	महू		ह				
गारिक			र				
सुष्टि			र				
उप शिवा					र		
वर्षी			पू	ष	प		ह
अस्वर	पू			पू			

ख—खर, <sup>१</sup>	सिखर, <sup>१</sup>	सुख <sup>१</sup>
गू—गगन <sup>१</sup>	नगर <sup>१</sup>	जग <sup>१</sup>
घू—घटा <sup>१</sup>	गोघात <sup>१</sup>	मघा <sup>१</sup>

व्यतिरेकी स्थितियों द्वारा ध्वनि ग्रामीय मूल्याङ्कन—

क—काल <sup>१</sup>	=	मूष्यु
ख—खाल <sup>१</sup>	=	त्वचा
गू=गाल <sup>१</sup>	=	गाल
घू=घाल <sup>१</sup>	=	मारना

(२) तालव्य—

घ=तालव्य, स्पश, अघोष, अल्पप्राण ।  
 छ=तालव्य, स्पश, अघोष, महाप्राण ।  
 ज=तालव्य, स्पश, सघोष, अल्पप्राण ।  
 झ=तालव्य, स्पश, सघोष, महाप्राण ।

। घ ।	चाप <sup>१</sup>	वचन <sup>१</sup> ,	सींच <sup>१</sup>
। छ ।	छल <sup>१</sup>	लछिमन <sup>१</sup> ,	मुहठा <sup>१</sup>
। ज ।	जीव <sup>१</sup>	भजन <sup>१</sup> ,	रज <sup>१</sup>
। झ ।			माझ <sup>१</sup>

व्यतिरेकी स्थितियाँ—

। च् ।	चल <sup>१</sup>	=	चलना
। छ ।	छल <sup>१</sup>	=	छल
। ज ।	जल <sup>१</sup>	=	पानी
। झ ।	झल <sup>१</sup>	=	वस्त्र

१ रा० ल० २६।५	२ रा० ल० ३९।१४	३ रा० अर० १४।९
४ रा० ल० ८४।१४	५ रा० उ० २५।७	६ रा० ल० २४।२३
७ रा० ल० ३९।१९	८ रा० ल० ३२।४	९ रा० ल० ७३।६
१० रा० ल० ६८।४	११-पा० म० ९९।१	१२ रा० ल० २७।५
१३ रा० ल० ७०।१२	१४ रा० अयो० ९०।८	१५ रा० अर० १४।१६
१६ पा० म० छ० ८।३	१७ रा० बा० ८।६	१८ रा० ल० ८४।७
१९ रा० ल० ८४।५	२० रा० अर० १३।३	२१ रा० अर० १६।१०
२० रा० अर० १४।१४	२३ रा० ल० ३७।५	२४ रा० बा० १२।३
२५ रा० गु० ३।७	२६ रा० उ० ७।६	२७ रा० उ० ७७।१३



(३) मूध-य—

ट = मूध-य	स्पग	अघोप	अल्पप्राण ।
ठ = मूध-य	स्पस	अघाप	महाप्राण ।
ड = मूध-य	स्पग,	सघोप	अल्पप्राण ।
ढ = मूध-य	स्पस	सघाप	महाप्राण ।

प्रयोग—स्थिति—

। ट ।	टीका <sup>१</sup>	कटक <sup>१</sup>	पट <sup>१</sup>
। ठ ।	ठाउ	पठन <sup>१</sup>	पीठ <sup>१</sup>
। ड ।	डीठ	दडक <sup>१</sup>	भुसु ड <sup>१</sup>
। ढ ।	ढिडाइ <sup>१</sup>	—	

एक से ही ध्वन्यात्मक वातावरण में प्रतिरेकी स्थिति में उपयुक्त मूध-य व्यंजना की उपलब्धि नहीं हो सकी लेकिन फिर भी प्रयोग स्थिति से भाषा में उनकी महत्ता स्वयं सिद्ध है ।

(४) दन्त्य —

त = दन्त्य	स्पस	अघोप	अल्पप्राण ।
थ = दन्त्य	स्पस	अघोप	महाप्राण ।
द = दन्त्य	स्पग	सघोप	अल्पप्राण ।
ध = दन्त्य	स्पग	सघोप	महाप्राण ।

प्रयोग स्थिति—

। त ।	तन <sup>११</sup>	प्रताप <sup>११</sup>	तात <sup>११</sup>
। थ ।	थिर <sup>१</sup>	मथन <sup>११</sup>	नाथ <sup>११</sup>
। द ।	दास <sup>१</sup>	वदन <sup>११</sup> ,	पद <sup>११</sup>
। ध ।	धभ <sup>१</sup>	दसकधर <sup>११</sup>	जोध <sup>११</sup>

१— रा०ल० ३८।११	२— रा०ल० ३९।२	३— रा०ल० ११७।१०
४— रा०अर० १३।३०	५— रा०ल० ५९।१२	६— रा०अयो० ९८।२
७— रा०अया० ९८।१	८— रा०अर० १३।३१	९— रा०उ० ६८।१३
१०— रा०ल० ४०।३	११— रा०अयो० ९०।११	१२— रा०ल० ७।१२३
१३— रा०अया० ९५।१६	१४— जा०म० ८५।२	१५— रा०ल० २८।५
१६— रा०उ० ८५।२३	१७— रा०अया० ९१।८	१८— रा०ल० ३१।१४
१९— रा०अया० ९८।२	२०— रा०ल० ३८।२१	२१— रा०ल० ३२।१९
२— रा०ल० ४३।१०		

व्यतिरेकी स्थितियाँ —

। त ।	तन <sup>१</sup>	=	शरीर
। य् ।	यन <sup>१</sup>	=	स्तन
। द् ।	दन <sup>१</sup>	=	द्वार
। घ् ।	घन <sup>१</sup>	=	द्रव्य

(५) द्वयोष्ठय—

प=द्वयोष्ठय,	स्पर्श,	अघोष,	अल्पप्राण ।
फ=द्वयोष्ठय,	स्पर्श,	अघोष,	महाप्राण ।
ब=द्वयोष्ठय,	स्पर्श,	सघोष,	अल्पप्राण ।
म=द्वयोष्ठय,	स्पर्श,	सघोष,	महाप्राण ।

प्रयोग स्थिति—

प—पट <sup>१</sup> , उपल <sup>१</sup> , साप <sup>१</sup> ,	फ—फल <sup>१</sup> , नफीर <sup>१</sup> ,
व—वन <sup>१</sup> , प्रवसि <sup>१</sup> , चितव <sup>१</sup> ,	म्—मवन <sup>१</sup> , सुभट <sup>१</sup> , प्रभा <sup>१</sup> ।

व्यतिरेकी स्थितियाँ—

प—पल <sup>१</sup> , फू—फल <sup>१</sup>	ब—वल <sup>१</sup> , म—मल <sup>१</sup> ।
--	---

(६) नासिक्य व्यञ्जन—

न्—वत्स्य,	नासिक्य,	सघोष,	अल्पप्राण ।
म्—द्वयोष्ठय,	नासिक्य,	सघोष,	अल्पप्राण ।

प्रयोग स्थिति—

म्—मग <sup>१</sup> , कमल <sup>१</sup> , सम <sup>१</sup> ।
न्—नयन <sup>१</sup> , बानर <sup>१</sup> , बसन <sup>१</sup> ।

व्यतिरेकी स्थितियाँ—

न—कान <sup>१</sup> = कान ।
म्—काम <sup>१</sup> = काम ।

१—रा० ल० १२०।२९ २—रा० उ० ६।२१, ३—रा० ल० ११५।११  
 ४—रा० कि० १४।१० ५—रा० अयो० ९०।१४, ६—रा० ल० २६।१४ ७—रा०  
 ल० ५८।१, ८—रा० ल० ३३।१२ ९—रा० ल० ६९।१७ १०—रा० अयो० ५८।१३  
 ११—रा० ल० ८३।१२ १२—रा० सु० १३।३ १३—रा० वा० ५७।६ १४—  
 रा० ल० ४२।१८ १५—रा० अयो० ९७।११ १६—रा० ल० ८१।३ १७—रा०  
 अयो० ३।१९ १८—वरवै रा० ६८।१ १९—रा० अयो० ५।११ २०—रा०  
 वा० ६५।१२ २१—रा० अर० १६।२८ २२—रा० अर० १५।१६ २३—रा०  
 वा० ३१०।१६ २४—रा० ल० ३३।१४ २५—रा० अयो० ९१।६ २६—रा०  
 अयो० ९९।७ २७—रा० अर० १६।२६

‘ट’ तथा ‘म्’ इमय (न) तथा (म) क महाप्राण रूप हैं —  
 म—का महाप्राण रूप ‘म्’ है । ( म् ) तुम्’ तुम्ह’ ।  
 न—का महाप्राण रूप ‘ट’ है । ( न् ) इन’ इह’ ।

पार्श्विक तथा लम्बित—

र—वस्य लम्बित मघाय अल्पप्राण ।  
 ७—वस्य पार्श्विक मघाय अल्पप्राण ।

प्रयाण स्थिति—

र—राम’ घटन’ गकर’ ।  
 ल—लन’ बालन’ भाल’<sup>१०</sup> ।

ध्वनिरेकी स्थितियाँ—

र—धेर’ = गमय ।  
 ७—वर्’ = वग विगय ।

उत्पिण्य—

ड—पूज मघोष अल्पप्राण ।  
 ढ—पूज न मघोष मधुप्राण ।

(८) तथा (७) का कितना इमय । (ड) तथा (ढ) की नीति सीमित है । (ड) और (७) माघ पुरुष कितरण म प्रयुक्त हुए हैं अर्थात् ण स्वरा क मन्त्र ही ड और ७ का प्राण है अर्थात् (ड) (ढ) का ।

(ड)—वडाई’ बड ।  
 (ढ)—वडाव’ मू’<sup>११</sup> ।

अस्य ( ड ) और ( ७ ) इमय ( ड ) और ( ढ ) के सस्वन हैं ।  
 सधर्यो—

म वस्य अघाय ह कात्प अघाय  
 प्रयाण स्थिति—

। स । सम’ निमान’ अकाम’  
 । ह । हार’ अहार’ छाह’

१—या म० १४। २—रा० अर० १३। ३—वरव रा० ३४। ४—दा०  
 ७० १४। ५—रा० वा० २४। ६—रा० अर० १४। ७—रा० वा० ५४। ८—  
 रा० ७० ९०। ९—रा० ड० ३०। १०—रा० ९० ३३। ११—रा०  
 ड० १०। १२—वरव १३। १३—रा० अर० १। १४—रा० वा० ५६। १५—  
 रा० ७० ७३। १६—रा० ७० २३। १७—वरव रा० ३२। १८—वा०  
 म० १० ११ १९—वरव रा० २०। २०—वरव रा० १। २१—वा०  
 म० ५१। २२—वरव रा० १०।

उक्त विवेचन से स्पष्ट है कि क ख ग घ, च छ ज झ, ट ठ ड ढ, त थ द ध, न म, प फ ब भ स ह, र ल, 'यजन ध्वनियाँ अवधी के स्वतंत्र ध्वनिग्राम हैं।

### २३३ अद्ध स्वर

स्वर तथा 'यजन गणना म अद्ध स्वरो का स्थान इन क्षेत्रों से कुछ अक्ष तक भिन्न है अर्थात् य ओ व (अध स्वर) की स्थिति स्वर तथा व्यजन के मध्य की तीसरी श्रेणी है। भारतीय व्याकरण ने इसे अतस्थ कहा है।<sup>१</sup> किंतु अध स्वर नाम अधिक महत्व का है। 'य का इ एव 'ज' म और 'व का 'उ यथा 'व' मे परिवर्तन होना अतस्थ स्थिति का परिचायक है। ध्वन्यात्मकता की दृष्टि से ये स्वरो के अधिक निकट मान गए हैं, अतएव इह अध स्वर नाम दिया गया है। इह अध व्यजन मानने का मुख्य कारण है कि ये न तो स्वरो की भांति मुखर हैं और न बलाघात वहन कर सकते हैं। मुखरता के अभाव में ये अक्षर निर्माण में भी असमर्थ हैं। इसलिए इन दोनों का उच्चारण वही स्वरो जैसा मिलता है तो वही व्यजनों जैसा। ऐतिहासिक दृष्टि से भी यही बात पुष्ट होती है। आलाप्य भाषा में दोनों प्रकार से ही लिप्यंतरण मिलता है। जसा कि उपयुक्त उदाहरणों से स्पष्ट है।

आलोच्य भाषा में जहाँ संस्कृत से य और व अध स्वर (अपने अविकृत रूप में आए हैं वहाँ तद्भव रूपा में इनके परिवर्तित (विकृत) रूप भी प्राप्त हैं, जो इस प्रकार हैं—

व७ब	विधि	विधि <sup>१</sup>	वेद	वेद <sup>१</sup>
	विविध	विविध <sup>१</sup>	सुबवि	सुकवि <sup>१</sup>
व्७उ७ऊ७ँ	दैव	दैउ <sup>१</sup>		
	राव	राउ <sup>१</sup>	प्रमाव	प्रमाऊ <sup>१</sup>
व७य	सत्यभाव	सतिभाव <sup>१</sup>	पाव	पाय <sup>१</sup>

इसी प्रकार—

य७ज	याचक	जाचक <sup>११</sup>
	मर्यादा	मरजादा <sup>१२</sup>
य७उ	समय	समउ <sup>१३</sup>

य तथा व अध स्वरो के उपयुक्त परिवर्तना से यह स्पष्ट होता है कि इनका लूकाव व्यजन और स्वर दोनों की ओर है। इसके अतिरिक्त इनके अविकृत रूप भी

१-डा० विश्वनाथ प्रसाद-भारतीय साहित्य, अप्रैल १९५६, २-रा० अयो० १९।१२, ३-रा० वा० २८।९ ४-जा० म० ११६।१, ५-जा० म० १।२, ६-रा० वा० ९६।२, ७-रा० वा० २१०।९, ८-रा० वा० २।२६, ९-पा० म० १३।२, १०-पा० म० १३।१, ११-जा० म २०।१ १२-रा० सु० ५६।१०, १३-रा० अगा० ४०।७

येष्यट् मात्रा म भी उपलभ्यते । रामचरित मानस क प्रारम्भिक वाण्टा म ष 7 व  
 तथा ष 7 ज का परिवर्तन अथिक् मिलता है अथवा 7 ज उत्तरवाण्ट र ।

स्वरानुक्रममा क उदाहरण

। अ अ । य । व

पय', जय' नय' बय',

मय' नय' अयगर नयल'

। अ आ । दया' गयानी' दयाल', गयानि',

य । ष परवान' जवान' हारवा' ।

। अ ई । य गयी'

। अ ए ऐ । व मवेम'

। अ ओ । य भया' तयो' गया', पयापि' ।

। अ- औ । व पाठनी' नावी', गावी' ।

। आ अ । य । पाय' गुमाय' मनिराय' घाय', गाय',

व आव' पावन', नाय' मावन' गुहावन' ।

। आ आ । व । अनाया', माया' निनाया',

व समुसाया' पावा' धाया नावा', भावा' ।

। आ ई । व मायावी'

। आ ए, ऐ । व । व गाये', पाय'

नाय' सवमुगाव नसाव' पाव' जुडाव' ।

१-वरव रा० ४३।१ २-जा० म० २९।१ ३-जा० म० ३७।२ ८-जा० म० ९।१,

५-रा० वा० २४।१२ ६-पा० म० छ० १।१ ७-रा० वि० १९।१५ ८-पा०

म० १२५।१, ९-रा० अया० ८।१२ १०-रा० अया० ५५।१, ११-रा०

वा० ५७।१४ १२-रा० अयो० ४३।१४ १३-पा० म० छ० १।२ १४-रा०

अयो० ५४।४, १५-वरव रा० १२।१, १६-रा० वा० ५।१३ १७-पा० म० ४।२,

१८-रा० वा० २६।१९ १९-रा० ७० ८४ २४ २०-रा० ल० ८।२२, २१-जा०

म० ४३।१ २२ रा० ल० ६०।१२ २३-जा० म० १।१ २४-जा० म० १।२,

२५-जा० म० ३५।२ २६-रा० उ० ४६।२, २७-रा० ल० १।५, २८-जा०

म० ११।१ २९-जा० म० ११।२ ३०-रा० अया० ३५।३ ३१ जा० म० ४।१

३२-वरव रा० २५।१ ३३-पा० म० २।२ ३४-पा० म० २।१ ३५-रा० ल० १६।६,

३६-रा० वा० ५।१२८ ३७-रा० ७० ५०।१४ ३८-रा० वि० १८।१७ ३९-रा०

कि० ७।८ ४०-रा० ७०-३१।४ ४१-रा० वि० १९।३ ४२-रा० वा० ३९।७,

४३-रा० ल० ३५।८ ४४-रा० ल० न० १९।२ ४५-वरव रा० १९।१, ४६-जा०

म० ७।११ ४७-जा० म० ७५।२ ४८-रा० उ० १२२।१७ ४९-रा०

उ० १२२।१८ ५०-रा० उ० ११७।२९

। आ ।	ओ । य	पायो <sup>१</sup> , बँघायो <sup>२</sup> , घायो <sup>३</sup> , आयो <sup>४</sup> ।
। आ	ओ । व	नावो <sup>५</sup> , गावो <sup>६</sup> , महिरावो <sup>७</sup> , आवो <sup>८</sup> , सुनावो <sup>९</sup> ।
। इ, ई	अ । य ।	प्रिय <sup>१०</sup> , जिय <sup>११</sup> , मानिय <sup>१२</sup> , पिय <sup>१३</sup> , पाइय <sup>१४</sup>
	व्	इव <sup>१५</sup> , सिव <sup>१६</sup> , जिवनु <sup>१७</sup> , जीव <sup>१८</sup> ।
। इ, ई	आ । य् ।	कनगुरिया <sup>१९</sup> , नउनिया <sup>२०</sup> , उजिअरिया <sup>२१</sup>
	व्	मलिनिया <sup>२२</sup> , प्रिया <sup>२३</sup> , निवारे <sup>२४</sup> ।
। इ	ओ । य	वियोगी <sup>२५</sup> , हियो <sup>२६</sup> , दियो <sup>२७</sup> , लियो <sup>२८</sup> , कियो <sup>२९</sup> ।
। उ	अ । व	तुव <sup>३०</sup> , चुव <sup>३१</sup> , त्रिभुवन <sup>३२</sup> ।
। ए, ऐ	अ । व्	दव <sup>३३</sup> , सेवहु <sup>३४</sup> , भेवह <sup>३५</sup> , जेवहि <sup>३६</sup> , जेवनार <sup>३७</sup> , केवट <sup>३८</sup> , ' पेव <sup>३९</sup> , देव <sup>४०</sup> ।
। ए	आ । व	नेवाजे <sup>४१</sup> , सेवा <sup>४२</sup> , सेवार <sup>४३</sup> , देवाई <sup>४४</sup> , नेवारई <sup>४५</sup> ।
। ए, ऐ	इ, ई । व	बनदेवी <sup>४६</sup> , सेवी <sup>४७</sup> दविक <sup>४८</sup> ।
। ओ	अ । य । व	कोय <sup>४९</sup> ह्योय <sup>५०</sup> , खोवहि <sup>५१</sup> , सोवत <sup>५२</sup> ।
। ओ	आ । व	घोवावहि <sup>५३</sup> , सोवा <sup>५४</sup> , ।
। ओ	ऐ ।	खोव <sup>५५</sup>

१-रा० ल० ७३।२४ २-रा० ल० ७३।२३ ३-रा० ल० ७३।१२ ४-रा० ल० ७७।२ ५-जा० म० २।१ ६-जा० म० २।२ ७-वरव रा० १३।१ ८-रा० सु० १।५ ९-रा० सु० २।८ १०-रा० ल० १८।२२ ११-रा० वा० २०।२ १२-जा० म० ७६।१ १३-जा० म० १०८।१ १४-रा० ल० न० ४।३ १५-रा० बा० १७।८ १६-रा० बा० ७९।१५ १७-पा० म० १८।१ १८-रा० वा० २७।२ १९-वरव रा० ३८।२ २०-रा० ल० न० ८।३ २१-वरव रा० ३७।१ २२-रा० ल० न० ७।३ २३-रा० अयो० ३०।९ २४-रा० ल० ८।८ २५-रा० वा० २२।२ २६-रा० ल० ८४।२० २७-रा० उ० ५।३० २८-रा० उ० ५।३२ २९-रा० ल० ८४।१८ ३०-वरव रा० १३।२ ३१-पा० म० १।१२ ३२-जा० म० ४।२ ३३-रा० अयो० ६।१५ ३४-रा० अयो० ५६।५ ३५-पा० म० १३७।१ ३६-पा० म० १३७।१ ३७-पा० म० १३७।२ ३८-रा० वा० ४१।४ ३९-पा० म० छ १५।४ ४०-रा० ल० २१।१ ४१-रा० वा० २५।३ ४२ रा० अयो० २५।३ ४३-रा० बा० ३८।७ ४४-रा० अयो० १९।२ ४५-रा० अयो० २५।१८ ४६-रा० अयो० ५०।५ ४७-रा० अयो० ५६।६ ४८-रा० उ० ६।२३ ४९-वरव रा० ५३।१ ५०-वरव रा० ६३।२ ५१-रा० न० १७।३ ५२-रा० अयो० ९१।१४ ५३-रा० उ० न० १४।० ५४ रा० ति० ११।० ५५-रा० उ ६२।१६

अध स्वर य का वितरण इस प्रकार है—

- (अ) दादादि म यथा—यह<sup>१</sup> या<sup>१</sup> [—य]  
 (ब) दादादि म यथा—घाय<sup>१</sup> पाय<sup>१</sup> गाय<sup>१</sup> घाय<sup>१</sup>, राय<sup>१</sup>  
 (म) स्वर मध्य म यथा—माया<sup>१</sup>, दाया<sup>१</sup> ।  
 (द) व्यञ्जन स्वर मध्य म, यथा—पुय<sup>१</sup> वस्य<sup>१</sup>, जदयि<sup>१</sup>, स्याम<sup>१</sup>,  
 त्यागे<sup>१</sup> ।

अध स्वर व का वितरण इस प्रकार है—

- (अ) दादादि म यथा—वह<sup>१</sup> वेर<sup>१</sup> ।  
 (ब) दादादि मे यथा—हरवा<sup>१</sup> नाव<sup>१</sup> पाव<sup>१</sup>, आव<sup>१</sup> ।  
 (स) स्वर मध्य म यथा—लावा<sup>१</sup>, नावी<sup>१</sup> गावी<sup>१</sup> आवी<sup>१</sup>

य तथा व दोनों अध स्वरों में व्यतिरेकी स्थिति—

[ य ] दया<sup>१</sup>, पाय<sup>१</sup> मय<sup>१</sup>, गाय<sup>१</sup> ।

[ व ] दवा<sup>१</sup> पाव<sup>१</sup>, भव<sup>१</sup> गाव<sup>१</sup> ।

इस प्रकार आगेव्य भाषा में [ य ] और [ व ] व्यतिरेकी स्थिति में होने का कारण ध्वनिप्राणीय स्तर पर <sup>३</sup> और <sup>४</sup> हे हम ध्वनिप्राण भान सकते हैं ।

## २४ स्वर सयोग

तुलसी की अधधी रचनाओं में स्वर-सयोग प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है । तीन स्वर-सयोग की अपेक्षा दो स्वरों के सयोग की प्रधानता है । पदान्त में दीर्घ स्वरों के सयोग ह्रस्व स्वर-सयोग की अपेक्षा प्रचुर मात्रा में मिलते हैं । पद मध्य तथा पदान्त में स्वर-सयोग अधिक मिलता है । स्वर-सयोगों को निम्न प्रकार व्यवस्थित किया जा सकता है —

दो स्वरों का सयोग—

(अ) अ अ—इस प्रकार का सयोग अत्यल्प प्राप्त है—अनअहिवातु<sup>१</sup> ।

अ-वरय रा० ०६१२	०-रा० ल० २३१०	३-रा० अयो० ३५१६	४-जा० म० २६११	५-जा० म० १११३	-जा० म० १११२	७-जा० म० १२३१२
८-रा० अया० ०३११०	९-रा० ल० ७११४	१०-जा० म० ४३११	११-रा० उ० ७८११०	१२-रा० उ० ७८११५	१३-रा० उ० ७६११	१४-रा० स० ५४१८
१५-वरय रा० १११	१६-रा० उ० १८१३	१७-वरय रा० ३२११	१८-वरय रा० ०५१०	१९-वरय रा० ७१२	२०-पा० म० १७११	२१-पा० म० १३११२
२-जा० म० ११	२३-जा० म० ०१०	२४-जा० म० ७०११	२५-रा० अया० ८१	२-जा० म० ३१२	३-जा० म० ३७१०	२८-जा० म० ११११
२९-रा० म० ३१	३०-वरय रा० ३१०	३१-पा० म० ७०	३२-जा० म० २१	३३-रा० अया० ५११४		

अ इ—सेवइ<sup>१</sup>, जानइ<sup>१</sup>, भइ<sup>१</sup>, करइ<sup>१</sup>, गरजइ<sup>१</sup>, फूलइ<sup>१</sup>, गइ<sup>१</sup> ।

अ ई—भइ<sup>१</sup> ।

इस प्रकार के शब्द अत्यल्प प्रयुक्त हुए हैं ।

अ ई—इस कोटि के सयोग प्रचुर मात्रा मे प्राप्त है, यथा—

दई<sup>१</sup>, भई<sup>१</sup>, अनुसरई<sup>१</sup>, करई<sup>१</sup>, गई<sup>१</sup> ।

अ ई—नई<sup>१</sup>, भई<sup>१</sup>

अ उ—इस प्रकार का सयोग पर्याप्त मात्रा मे हुआ है यथा—

गायउ<sup>१</sup>, धायउ<sup>१</sup>, हरउ<sup>१</sup>, राखउ<sup>१</sup>, कटिहउ<sup>१</sup>

अ उँ—इस प्रकार (एक अनुनासिक स्वर सयोग) के उदाहरण भी पर्याप्त मिलते हैं, यथा—

जानउँ<sup>१</sup>, करउँ<sup>१</sup>, करिहउँ<sup>१</sup>, मागउँ<sup>१</sup>, पावउँ<sup>१</sup>

अ ऊ—मायऊँ<sup>१</sup>, मधऊँ<sup>१</sup>, गयऊँ<sup>१</sup>, पायऊँ<sup>१</sup>, ठयऊँ<sup>१</sup>, गायऊँ<sup>१</sup>,

अ ऊँ—तरऊँ<sup>१</sup>, अनुरागऊँ<sup>१</sup>, लहऊँ<sup>१</sup>, करऊँ<sup>१</sup>,

अए—मिलएसि<sup>१</sup>, पठएसि<sup>१</sup>,

अए—मए<sup>१</sup>, गए<sup>१</sup>, पठए<sup>१</sup>, हए<sup>१</sup>

अए—मएँ<sup>१</sup> रएँ<sup>१</sup>, बएँ<sup>१</sup> गएँ<sup>१</sup>, लएँ<sup>१</sup>,

अओ—इस प्रकार के सयोग अत्यल्प हैं—अघओघ<sup>१</sup>

१-रा० उ० २४।१६ २-रा० उ० ४।८ ३-रा० उ० ३।२० ४-रा० कि० १।५।८  
 ५-रा० ल० १३।८ ६-रा० ल० १६।२१ ७-रा० बा० ३५।४।२० ८-रा०  
 कि० १६।१५ ९-पा० म० ११।२ १०-जा० म० १७। ११-रा० उ० २४।१२  
 १२-रा० अ० २२।१३ १३-पा० म० २९।१ १४-जा० म० १७।२ १५-जा०  
 म० १७।१ १६-जा० म० ३।८।२ १७-रा० ल० १२।१।१९ १८-रा०  
 अ० १०।१६।१९-रा० सु० १।८।१२ २०-रा० बा० ३०।३ २१-रा० अ० २०।४  
 २२-रा० कि० १९।१।८ २३-रा० उ० १।८।१३ २४-रा० उ० १४।४।१ २५-रा०  
 ल० ११।६।२६ २६-रा० सु० ६०।१।८ २७-रा० कि० १५।५ २८-रा० कि० १५।६  
 २९-जा० म० ल० १४।३ ३०-रा० ल० १६।१५ ३१-रा० सु० ९०।२०  
 ३२-रा० अ० २३।८ ३३-रा० कि० १०।२२ ३४-रा० बा० १२।१० ३५-रा०  
 अ० २३।७ ३६-रा० सु० १।८।१७ ३७-रा० सु० १९।२ ३८-पा० म० २२।२  
 ३९-रा० ल० ११।२।१६ ४०-रा० अ० १।८।३ ४१-रा० उ० १४।१०  
 ४२-रा० उ० ९।२।१ ४३-रा० अ० ४६।२।४ ४४-रा० सु० ५।८ ४५-रा०  
 कि० २६।४ ४६-रा० कि० २६।४।७ ४७-रा० बा० १६।५



(आ) जाइ—पयाप्न मात्रा म उपलब्ध है—

छाइ<sup>१</sup> कराइ<sup>१</sup> गाइ<sup>१</sup> साहाइ<sup>१</sup> पाइ<sup>१</sup> माइ<sup>१</sup>

(वा) बाइ—इन काटि क स्वर-संयोग प्रचुर संख्या म प्राप्त है यथा—

बाइ मुनाइ<sup>१</sup> पराई<sup>१</sup>, कराइ<sup>१</sup> समुनाइ<sup>१</sup>

जाइ—गावा<sup>१</sup> नाई<sup>१</sup> माइ<sup>१</sup>, बनाइ<sup>१</sup> जाइ<sup>१</sup>

बाउ—राउ<sup>१</sup> वाउर<sup>१</sup> उपाउ<sup>१</sup>, पताउ<sup>१</sup>, मुनाउ<sup>१</sup>,

बाउं—ठाउं<sup>१</sup> जाउं<sup>१</sup> छाउं<sup>१</sup>, उडाउं<sup>१</sup>

बाऊ—इस काटि क संयोग अधिक मात्रा म प्राप्य है यथा—

बाऊ<sup>१</sup> प्रमाऊ<sup>१</sup> पठिनाऊ<sup>१</sup> राऊ<sup>१</sup>,

बाऊ—नाऊ<sup>१</sup> हरपाऊ<sup>१</sup>, बाऊ<sup>१</sup> हेराऊं<sup>१</sup> ठाऊं<sup>१</sup>

बाए—इस काटि का संयोग पर्याप्त मात्रा म प्राप्त है यथा—

बाए<sup>१</sup> बालाए<sup>१</sup> नहाए<sup>१</sup> अन्वाए<sup>१</sup> लाए<sup>१</sup> मुहाए<sup>१</sup>

बाएँ—बाएँ<sup>१</sup> चाएँ<sup>१</sup> जेवाएँ<sup>१</sup> मराएँ<sup>१</sup>

बाएँ—इस प्रकार का संयोग नगण्य है—करनाएँ<sup>१</sup> ।

(इ) इअ—यह संयोग पर्याप्त मात्रा में प्राप्त है यथा—

करिअ<sup>१</sup> पूठिअ<sup>१</sup> देखिअत<sup>१</sup> अमिअ<sup>१</sup>

१-वरव रा० ३३।१ २-रा० कि० ४।७ ३ पा म० छ० १६।३ ४-वरव  
 रा० १२।१ ५-जा० म० छ० १८।४ ६-रा० अयो १७।७ ७-रा० ल०  
 म० १०।२ ८-रा० कि० २०।१७ ९ रा० कि ६।१६ १०-रा० सु० ८।१०  
 ११-रा० उ० २।६ १२-रा० अयो० १७ १३-रा० अयो० २।८ १४-रा०  
 बा० ८९।१२ १५-रा० बा० ८०।१७ १६-रा० बा० ६५।१ १७-रा० बा० ३६०।९  
 १८-पा० म० १७।१ १९-पा० म० २२।१ २०-रा० ल० १०।१७ २१-रा० अयो० ३ १३  
 २२-जा० म० ८२।१ २३-रा० उ० १८।८ २४-रा० उ० ७५।१८ २५-रा०  
 उ० ८०।१६ २६-रा० अयो० ४।९ २७-रा० बा० २।११ २८-रा० अयो० ४।१०  
 २९-रा० अयो० १।७० ३०-रा० बा० २६।९ ३१-रा० उ० ७५।६ ३२-रा०  
 अर० ६।२ ३३-रा० अयो० १७।५ ३४-रा० बा० २६।१० ३५-रा०  
 उ० २५।१२ ३६-रा० अयो० ९।१२ ३७-रा० उ० ११।१४ ३८-रा०  
 उ० ११।९ ३९ रा अर० २१।४ ४०-रा० अर० १४।४ ४१-रा०  
 अर० १२।४ ४२-रा० कि० ०।४ ४३-रा० बा० २५।२६ ४४-रा० कि २२।१६  
 ४५-रा० अयो० १००।७ ४६-पा० म० २५।२ ४७-रा० अर० ९।१३  
 ४८-रा० कि० १५।१७ ४९-रा० बा० ६।१२

- इ आ—पिमास<sup>१</sup>, पिआरा<sup>१</sup>, बिआरो<sup>१</sup>, पतिआन<sup>१</sup>, बिआरो<sup>१</sup>  
 इ इ—इस प्रकार का स्वर सयोग अत्यल्प है, यथा—जिइहि<sup>१</sup>  
 इ उ—जिउ<sup>१</sup>, चारिउ<sup>१</sup>, कपिनिउ<sup>१</sup>, सीनिउ<sup>१</sup>  
 इ उ—उपारिउ<sup>१</sup> जानिउ<sup>१</sup>, दीहिउ<sup>१</sup>, कीहिउ<sup>१</sup>, रहिउ<sup>१</sup>  
 इ ए—दिए<sup>१</sup>, देखिए<sup>१</sup>, हिए<sup>१</sup>, किए<sup>१</sup>, लिए<sup>१</sup>  
 इ ऐ—किऐ<sup>१</sup>, गिऐ<sup>१</sup>, हिऐ<sup>१</sup>, लिऐ<sup>१</sup>  
 इ ऐ—बूनिऐ<sup>१</sup>, चाहिऐ<sup>१</sup>, जानिऐ<sup>१</sup>, जिऐ<sup>१</sup>, हरिऐ<sup>१</sup>,  
 इ औ—इस प्रकार के स्वर सयोग एकाघ ही प्राप्त हैं—जिऔ<sup>१</sup>  
 ई अ—इस तरह के स्वर सयोग नगण्य हैं, यथा—जीअत<sup>१</sup>  
 उ अ—सुअवसर<sup>१</sup>, कुअवसर<sup>१</sup>, मुअयू<sup>१</sup>, सुअजन<sup>१</sup>  
 उ अं—कुअं<sup>१</sup>, कुअरि<sup>१</sup>  
 उ आ—मुआल<sup>१</sup> दुआर<sup>१</sup>, मुआला<sup>१</sup>, निरुअरि<sup>१</sup>, जुआ<sup>१</sup>  
 उ आं—अत्यल्प मात्रा में प्राप्त है, यथा—घुआं<sup>१</sup>  
 उ इ—दुइ<sup>१</sup> अनुसुइया<sup>१</sup>  
 उ ई—मुइ<sup>१</sup>  
 उ ऐ—इस प्रकार का स्वर-सयोग कम मिलता है—कुऐ<sup>१</sup>  
 उ औ—दुऔ<sup>१</sup>

१-रा० वा० ४३।४	२-रा० वा० २२।१४	३-रा० कि० १५।१३	४-रा०
अयो० १६।२०	५-रा० वा० ६७।६	६-रा० अयो० ४९।२०	७-रा० ल०
न० १२।१	८-रा० वा० २२।१२	९-रा० उ० २१।९	१०-रा० अर० २०।७
११-रा० ल० ३४।१४	१२-रा० ल० १६।११	१३-रा० अयो० १५।१	१४-रा०
उ० ११।४।३१	१५-रा० अर० १७।१७	१६-जा० म० २८।१	१७-जा०
म० ९।१२	१८-रा० वा० ४३।१२	१९-रा० अर० ३।२	२०-रा०
अयो० ३१६।१७	२१-रा० अर० २१।१८	२२-रा० सु० ८।१७	३-पा० म०
छ० ३।३	२४-रा० उ० १४।२९	२५-रा० सु० ४३।९	२६-रा० अयो० ३१५।१७
२७-रा० ल० ११३।३१	२८-रा० अयो० १३।२	२९-रा० ल० १११।३८	
३०-रा० अयो० ३६।१३	३१-रा० अर० १९।१२	३२-रा० ल० ११४।२३	
३३-रा० अयो० ३१६।१८	३४-रा० अयो० ४०।२	३५-रा० वा० १।३७	
३६-रा० वा० ३४८।१४	३७-पा० म० ९।१	३८-रा० अयो० ३।१	३९-रा०
उ० २८।१५	४०-रा० अयो० ३५।९	४१-रा० उ० ११।८	४२-जा०
म० १५०।१	४३-रा० अर० २१।९	४४-रा० अयो० ४०।१३	४५-रा०
अर० ५।१	४६-रा० अयो० १३।१०	४७-रा० ल० न० १३।३	४८-रा०
अ० ४।१			

- (क) एह--ऐह' सेइहि' मइ' तेइ', द'हि  
 एइ--जेइ' वइ तुम्हारेइ'  
 ए उ--हउ' तेउ', मोहउ'' किरैउ'' च'उ''  
 ए उँ--तेउ' मारेउ'' देमउँ'' किरउँ''  
 ए ऊ--तऊँ' सगऊँ'', र'ऊँ' पहिरेऊँ'' 'हऊँ''
- (ए) ऐ अ--इम कीटि का स्वर-सयोग अत्यल्प है यथा--दअ''  
 ए वा--इनकी भी सह्या अधिक नहीं है यथा--मआ' मआ''  
 ए इ=ए'हि'' दैइज  
 ए उ-- इस कीटि का स्वर-सयोग भी अत्यल्प प्राप्त है यथा--दउ''
- (ऐ) आ--होइ' मो' माइहि'' होइहि'', कोइ'' जोइ''  
 ओद-- अत्यल्प प्राप्त हैं--हाइ''  
 ओई--गोई'' सोई' उरगोई'' होई'' एतनोई''  
 आउ--होउ'', कोउ', साउ' दोउ  
 ओउ--होउ''  
 ओऊ--ओऊ'' दोऊ'', कोऊ'' सोऊ'  
 आए--घोए' बिगोए''

---

१-जा० म० ८१३	२-रा ल० ३१५	३-रा० मु ११४	४-पा० म० ७६१२
५-रा० अयो० २९११०	६-पा० म० १३९१२	७-रा० अर० ४२१४	८-रा० अर० १३१९
९-रा० अर० १९१२९	१०-रा० अयो० ११ ४	११-जा० म० १८१२	१२-जा० म० २८१२
१३-रा० अयो० ३२११२	१४-रा० उ० २१२४	१५-रा० कि० ८१०	१६-रा० सु० ४११६
१७-रा० कि० ६१२४	१८-रा० वा० ७११०	१९-रा० ल० १४११२	२०-रा० अयो० ३५१७
२१-रा० अया० ३११४	२२-रा० अर० १९११८	२३-रा० अयो० ००११८	२४-रा० अयो० १३१३
२५-रा० अयो० ५३१३	२६-रा० अयो० ३१११४	२७-पा० म० छ० ५१३	२८-रा० अयो० १८११६
२९-रा० अर० ५१३८	३०-रा० अयो० १७११४	३१-जा० म० ५८१२	३२-जा० म० ७११
३३-वरख रा० ३८११	४-पा० म० १२१२	३५-रा० अर० १६१८	३६-रा० अया० ३११६१२
३७-रा० अया० २११३	३८-रा० वा० ३५८१८	३९-रा० कि० ८१८	४०-रा० अयो० ३११६११
४१-रा० ल० १२११३	४२-रा० उ० २२१७	४३-जा० म० ५६११	४४-रा० अया० ०७१४
४५-रा० कि० ७१६२	४६-रा० ल० १०९१८	४७-रा० वा० २५११	४८-रा० वा० २५१२
४९-रा० कि० १३११६	५०-रा० वा० ४३१७	५१-रा० वा० ४३१८	

ओएँ--एग जोटि के स्वर मयोग मन्त्र माना म प्राञ्ज है--प रीं, निमो-

नीन स्वरों का सयोग--

तुलसी की अवधी रचनाओं के अन्तर्गत ११ स्वरों के मयाग के अतिरिक्त तीन स्वरों के मयोग भी पद्यान्त माना में उपलब्ध है। परन्तु तीन स्वर-मयाग की गुणा में दो स्वर-सयोग का प्रयोग प्राच्य कहा जा सकता है,

उदाहरण--

- अइअ — पठइअ, सिमइअ
- अइउ — दयउ, भयउ
- आइअ — करिवाइअ, जाइअ, पाइअ, बहाइअ, नाइअ, बंपाइअ,
- आइउ — लाइउ
- आइऊ — समग्राइऊ
- आइए — गाइए, पाइए
- इअउ — ननिअउरें, जिअउ
- इआउ — जिआउ
- इआई — जिआई, बरिआई
- इआए — जिआए
- उआई — हइआई, कइआई
- रइअ — सेइअ, देइअ

## २५ व्यजन-सयोग

२५० तुलसी की अवधी भाषा सम्पूर्ण वर्णित इन के कारण उसमें व्यजन सयोग का अभाव नहीं है। तत्सम्बन्धों में तीन प्रकारों का मयोग मिलता है। त्रि-व्यंजनात्मक सयोग की अपेक्षा द्वि-व्यंजनात्मक सयोग का मयोग मिलता है। व्यजन-सयोग सर्वाधिक है जबकि अल्प-व्यंजनात्मक सयोग है। मध्य स्थायी

१-रा० उ० ४९१९	२-रा० उ० ४९१०	३-रा० एयो० ९११२	४-रा०
अयो० ३१४११६	५-जा० म० १० १२ ६	६-रा० एयो० ९११४	७-पा० म० ४६११
८-पा० म० ४६१२	९-रा० अयो० ३१११	१०-रा० ल० १२२	११-रा०
सु० ७१८	१२-रा० सु० ६१७	१३-रा० ल० १११	१४-रा० अयो०
१५-रा० उ० २८१२०	१६-रा० उ० २११	१७-रा० अयो० १८११	१८-रा०
अयो० ५११०	१९-रा० ल० ११४११	२०-रा० अयो० ११११७	२१-रा०
२२-रा० उ० २८१७	२३-रा० स० १११	२४-रा० अयो० १०११	
कि० ११४	२६-रा० अयो० ४५११९	२७-रा० वा० १०११	

२ ५ १ द्विव्यजनात्मक सयोग

दो व्यजनो का सयाग पद क आदि मध्य तथा अन्त तीनों स्थितियों में मिलता है

(अ) आदि स्थानीय व्यजन सयोग—

द + व	(द्व)	—	द्विज <sup>१</sup> , द्वारा <sup>१</sup> , द्वार <sup>१</sup> , द्वद
त + य	(त्य)	—	त्याग <sup>१</sup> , त्यागी <sup>१</sup>
स + य	(स्य)	—	स्याम <sup>१</sup>
त + र	(त्र)	—	त्रेता <sup>१</sup> , त्रासा <sup>१</sup> , त्रिय <sup>१०</sup> , त्रिसूलहि <sup>११</sup>
व + य	(व्य)	—	याकुल <sup>१२</sup> , व्याहि <sup>१३</sup>
घ + ध	(ध्व)	—	ध्यानु <sup>१</sup> , ध्वज <sup>१४</sup>
गृ + र	(ग्र)	—	ग्राम <sup>१५</sup>
भ + र	(भ्र)	—	भ्राता <sup>१६</sup>
क + र	(क)	—	क्राघ <sup>१७</sup> , क्रीडा <sup>१८</sup>
प + र	(प्र)	—	प्रेरित <sup>१</sup> , प्रीति <sup>११</sup> , प्रम <sup>११</sup> , प्रेत <sup>११</sup>
वृ + र	(व्र)	—	ब्रह्म <sup>१</sup> , ब्रह्म <sup>११</sup> , वृद्ध
ल + य	(ल्य)	—	ल्याइ <sup>१</sup>
न + य	(न्य)	—	याउ <sup>११</sup>
गृ + य	(ग्य)	—	ग्यान <sup>१७</sup> , ज्ञान
ज + य	(ज्य)	—	ज्यो <sup>११</sup>
क + व	(क्व)	—	क्वो <sup>१</sup>
स + व	(स्व)	—	स्वामी <sup>११</sup> , स्वल्प <sup>११</sup>
जू + व	(ज्व)	—	ज्वाला <sup>११</sup>

---

१-रा० उ० १०।७	२-रा० अया० ३७।१०	३-रा० वा० ३५।१२	३-रा०
ल० ११३।३७	५-रा० सु० ५५।१०	६-रा० अर० ८।१२	७-रा० ल० ५६।११
८-रा० उ० २३।१२	९-रा० अर० २९।१७	१०-रा० ल० ३३।९	११-रा०
ल० ४२।२४	१२-रा० ल० ४२।२२	१३-जा० म० १८०।१	१४-रा०
वा० २७।५	१५-रा० उ० १३।२०	१६-रा० अया० ३२।३	१७-रा० कि० ८।९
१८-रा० कि० १९।२६	१९-रा० उ० ५८।५	२०-रा० मु० ५९।५	२१-रा०
अया० १५।१२	२२-रा० वा० ३५।७	२३-रा० कि० २०।५	२४-रा०
वा० ३४।१९	२५-रा० उ० ३।८	२६-जा० म० १४०।०	२७-रा०
उ० ११८।३९	२८-रा० ल० ६३।७	२९-जा० म० ११।०	३०-रा०
उ० १०२।१०	३१-रा० वा० ३८।९	३२-रा० ल० ५१।६	३३-रा०
सु० ५८।१२			

यदि 'ऋ' का तत्कालीन उच्चारण 'रि' मान लें तो अय व्यजन सयोग इस कार होगे—

कृ+र (कृ.)	—	कृपी <sup>१</sup> , कृप <sup>१</sup> (कृश), कृपामिधु <sup>१</sup> कृतारथ <sup>१</sup> (कृताय)
मृ+र (म)	—	मकुटी <sup>१</sup> , मृग <sup>१</sup>
वृ+र (व)	—	वदा <sup>१</sup> (वृद), वष्टि <sup>१</sup>
तृ+र (त)	—	तून <sup>१</sup> , (तृण), तृपावत <sup>१</sup>
गृ+र (ग)	—	गह <sup>१</sup>
मृ+र (मृ)	—	मृग <sup>१</sup> , मृदु <sup>१</sup>
नृ+र (नृ)	—	नत्य <sup>१</sup> , नप <sup>१</sup>

उपयुक्त विवेचन से स्पष्ट है कि 'रृ' के योग से व्यजन-सयोग अधिक हुआ है।

(ब) मध्य स्थानीय व्यजन-सयोग—अवधी में मध्य स्थानीय सयुक्त-व्यजनो की बहुलता है। इनके अन्तगत व्यजन क्रम—(१) वर्गीय नासिक्य+स्पश-व्यजन (२) स्पर्श+अधस्वर, (३) सघर्षी+स्पश, (४) स्पश+लुण्ठित हैं। इनके अन्तगत सर्वाधिक सयोग स्पश+अधस्वर (य) तथा लुण्ठित (रृ)+अय व्यजन के रूप मिलते हैं, यथा—

मृ+य (म्य)	—	ग्राम्य <sup>१</sup> , रम्य <sup>१</sup>
हृ+म (हृ)	—	ब्रह्म <sup>१</sup> , ब्रह्मानद <sup>१</sup>
वृ+य (व्य)	—	द्रव्य <sup>१</sup> , अव्याहृत <sup>१</sup> दिव्य <sup>१</sup> , अव्यक्त <sup>१</sup>
लृ+य (ल्य)	—	कल्याण <sup>१</sup> माल्यवत <sup>१</sup> कौसल्या <sup>१</sup>
लृ+पृ (ल्य्)	—	वल्प <sup>१</sup> जल्पसि <sup>१</sup> सक्ल्प <sup>१</sup>
नृ+य (न्य)	—	सयासी <sup>१</sup> वय <sup>१</sup> , पुय <sup>१</sup> धन्य <sup>१</sup> , नया <sup>१</sup>

१-रा० कि० १५।१५	२-रा० ल० ११६।२१	३-रा० ल ३७।१९	४-पा०
म० १२७।२	५-वरवै रा० १।१	६-रा० सु० ५६।२६	७-रा० अर० १२।२५
८-रा० ल० ४६।२२	९-रा० ल० २०।१३	१०-रा० उ० २।१२	११-रा०
अर० १३।४०	१२-रा० अयो० १२।४	१३-वरवै रा० १।१	१४-रा०
अर० ३।५	१५-जा० म० २८।	१६-रा० वा० १०।३५	१७-रा० उ० १।८
१८-रा० ल० ११०।९	१९-रा० उ० १५। १	२०-रा० उ० १०।२२	२१-रा०
उ० ११०।२४	२२-रा० अया० ३१।२।६	२३ रा० उ० ११३।२६	२४-रा०
वा० २६।१९	२५-रा० सु० ४०।-	२६-रा० उ० ८।१	२७-रा० उ० ११६।२०
२८-रा ७० ३१।१५	२९-रा सु० ४१।१०	३०-रा० उ० २०।१०	३१-रा०
उ० ४।९	३२-रा० सु० ४।१५	३३-रा० वा० ३५।२।१०	३४-पा० म० २।४

थ + थ	(थथ)	—	मिथ्या <sup>१</sup>
स + थ	(सथ)	—	अस्थि <sup>१</sup>
द + थ	(दथ)	—	अनवद्य <sup>१</sup> , खद्योत <sup>१</sup> रद्य <sup>१</sup> , अविद्या <sup>१</sup> , उद्यम <sup>१</sup>
न + म	(नम)	—	जन्मभूमि <sup>१</sup>
न + घ	(नघ)	—	बन्धु <sup>१</sup>
प + ठ	(पठ)	—	वसिष्ठ <sup>१</sup>
प + ट	(पट)	—	वटि <sup>१</sup> , दुष्ट <sup>१</sup> , वसिष्ठ <sup>१</sup> मुष्टि <sup>१</sup>
प + प	(पप)	—	पपक <sup>१</sup> , पापिष्ट <sup>१</sup>
प + य	(पय)	—	गिप्य <sup>१</sup>
स + त	(स्त)	—	जगस्ति <sup>१</sup> , विस्तार <sup>१</sup> वस्तु <sup>१</sup> पुलस्ति <sup>१</sup>
स + थ	(सथ)	—	रहस्य <sup>१</sup>
म + प्	(सप)	—	पत्स्पर <sup>१</sup>
म + व	(स्व)	—	विम्वात <sup>१</sup>
स + म	(स्म)	—	भस्मि <sup>१</sup>
ष + न	(घन)	—	निबिघ्न <sup>१</sup>
ष + य	(घ्य)	—	मघ्य <sup>१</sup>
प + र	(प्र)	—	प्रिप्र
क + र	(र)	—	चक्र <sup>१</sup>
ग + र	(ग्र)	—	सुग्रीव <sup>१</sup>
ङ + र	(द्र)	—	दृ <sup>१</sup>
ञ + र	(म)	—	अदञ्ज <sup>१</sup>
र + म	(म)	—	कम <sup>१</sup> चम <sup>१</sup> घम <sup>१</sup> , निमल <sup>१</sup>

१-रा० उ० ७।१२२ २-रा० ल० १५।१० ३-रा० उ० ७२।१० ४-रा० ल० ६।२ ५-रा० वा० २।२६ ६-रा० अयो० २९।२२ ७-रा० कि० १५।६, ८-रा० उ० १९, ९-रा० कि० ०।२२ १०-रा० वा० ३५९।५, ११-रा० उ० ११।२ १२-रा० ल० ११३।७ १३-रा० वा० ३५२।१ १४-रा० कि० ८।६, १५-रा० उ० ११७।७, १६-रा० ल० ११।१९ १७-रा० अर० २०।१ १८-रा० उ० ५।२० १९-रा० सु० २।२७ २०-रा० वा० ३०।९ २१-रा० ल० ०।५ २२-रा० म० ५६।२ २३-रा० म० २६।१ २४-रा० वा० ८।३ २५-रा० उ० ११।२ २६-रा० उ० १९।३ २७-जा० म० १३।८ २८-जा० म० १०।७ २९-रा० अर० २।६ ३०-रा० कि० ९।११ ३१-रा० कि० ५।२ ३२-रा० उ० ७।९ ३३-रा० उ० १३।४ ३४-रा० उ० १।६, ३५-रा० कि० ९।९ ३६-रा० उ० २५।२६,

र+क	(क)	—	मकट <sup>१</sup> , मधुपक <sup>१</sup>
र+ज	(ज)	--	गजहि <sup>१</sup> , भूज <sup>१</sup>
र+घ	(घ)	--	ध्यध <sup>१</sup>
र+ग	(ग)	--	दुर्गा <sup>१</sup>
र+द्	(द)	—	मद <sup>१</sup>
र+प	(प)	--	वर्पा <sup>१</sup>
र+क्ष	(क्ष)	--	निधर <sup>१</sup>
र+ल्	(ल)	—	दुलभ <sup>१</sup>
र+ष	(ष)	—	वर्तर्षानि <sup>१</sup>
र+व	(व)	--	सवग्य <sup>१</sup>
द+ष्	(ढ)	--	बद्ध <sup>१</sup> , सिद्ध <sup>१</sup> , बुद्धि <sup>१</sup>
त+त्	(त)	—	रत्न <sup>१</sup>
त्+य	(त्य)	—	जीत्यो <sup>१</sup> , मत्यु <sup>१</sup> , सत्य <sup>१</sup> असत्य <sup>१</sup>
त+व	(त्व)	—	तत्व <sup>१</sup>
द+म	(दम)	--	अदमृत <sup>१</sup>
क्ष+य	(क्षय)	--	देह्यो <sup>१</sup>
ज+य	(ज्य)	—	पूज्य <sup>१</sup>
प+य	(प्य)	--	तोष्यो <sup>१</sup>
त+र	(त्र)	—	विचित्र <sup>१</sup> मित्र <sup>१</sup>
प्+त	(प्त)	—	मुप्त <sup>१</sup>
च्+य	(च्य)	—	रच्यो <sup>१</sup>
क्ष+र	(क्षर)	--	आश्रम <sup>१</sup> , वरनाश्रम <sup>१</sup> आश्रमहि <sup>१</sup>

१-रा० ल० ९३१८,	२-पा० म० १२१२	३-रा० ल० ६४	४-रा०
उ० १२१३१	५-रा० उ० १०९१११	६-रा० उ० ९११४,	७-रा०
उ० ९११४	८-रा० उ० ६६२३	९-रा० ल० ८७१९	१०-रा०
अयो० ४११५	११-रा० उ० १३५२,	१२-रा० उ० १२१४	१३-रा०
उ० ३१४,	१४-रा० अर० १५१६	१५-रा० ल० १५१७	१६-रा०
उ० २३१८,	१७-रा० ल० १०७१४	१८-रा० अर० २१११	१९-रा०
अयो० १९१८	२०-रा० अयो० १९१९,	२१-रा० सु० १५१११,	२२-रा०
ल० ४७१४,	२३-पा० म० छ० ४११,	२४-रा० उ० ७०१	२५-रा०
ल० ९३१६	२६ पा० म० छ० ११२,	२७-वरव रा० ६७१	२८-रा०
उ० १०२१२१	२९-जा० म० ३११	३०-रा० अयो० १२१४,	३१-रा०
उ० २०११७	३२-जा० म० ३७२,		



न + व	(व)	—	भरद्वाज <sup>१</sup>
ग + य	(य)	—	माग्य <sup>१</sup>
म + र	(भ)	—	सुभ्र <sup>१</sup>
क + त	(व)	—	भक्ति <sup>१</sup> मुक्ति <sup>१</sup> सक्ति <sup>१</sup>
त + थ	(त्य)	—	जुत्य <sup>१</sup>
स + थ	(स्य)	—	अस्थि <sup>१</sup>
च + छ	(च्छ)	—	दच्छिन <sup>१</sup> दक्षिण

अच्छकुमार<sup>१</sup> अशकुमार, रच्छ<sup>११</sup> रक्ष

दच्छ<sup>११</sup> दक्ष, रच्छक<sup>११</sup> रक्षक

राच्छमा<sup>११</sup> राक्षसी सुलच्छन<sup>११</sup> सुलक्षण

नासिक्य व्यजनों के याग से मध्य स्थानीय व्यजन-सयुक्तता ढ ढ, ढ, फ र ल, व श् य तथा ह को छोड़कर सभी व्यजना के साथ सयुक्तता उपलब्ध है यथा—

सकट<sup>११</sup>, सकर<sup>११</sup> मगन<sup>११</sup> भुअग<sup>११</sup> आदि ।

कटक<sup>११</sup> कठ<sup>११</sup> दठ<sup>११</sup> अरठ<sup>११</sup>, घमठ<sup>११</sup> आदि ।

गुजत<sup>११</sup> भंजित<sup>११</sup> कुजर<sup>११</sup> विरचि<sup>११</sup>, कवन<sup>११</sup> आदि ।

कप<sup>११</sup>, कपति<sup>११</sup> मपनि<sup>११</sup> अक<sup>११</sup> सपुट<sup>११</sup> आदि ।

जगत्या<sup>११</sup>, अवर<sup>११</sup> अलवन<sup>११</sup>, दम<sup>११</sup>, समुहि<sup>११</sup> सभासी

सता<sup>११</sup> सतोषी<sup>११</sup> हनुमतहि<sup>११</sup> भगवत<sup>११</sup> बमत<sup>११</sup>

१—रा० ल० १०१।६	२—रा० उ० ११।११	३—रा० कि० १३।११	४—रा० ल० ११।१५
५—रा० कि० १।१	६—रा० ल० १।०।१२	७—जा० म० १४।११	८—रा० कि० ७।२०
९—रा० ल० १२।२७	१०—रा० सु० १२।१२	११—रा० उ० १३।१६	१२—रा० उ० १३।१५
१३—रा० ल० १०५।२०	१४—रा० सु० १।११	१५—रा० बा० ७।२५	१६—वरव रा० ४७।१
१७—रा० वा० २४।२	१८—रा० उ० १५।१०	१९—पा० म० १२०।१	२०—रा० अयो० ३११।९
२१—रा० कि० १०।२९	२२—रा० उ० १९।५	२३—रा० अयो० ४२।५	२४—रा० कि० १३।२
२—जा० म० १०४।१	२७—रा० अया० ३२६।१३	२८—रा० ल० २७।१९	२९—रा० बा० १२।६
३०—रा० ल० १४।१	३१—रा० ल० ५।२३	३२—रा० कि० १५।१०	३३—रा० अया० १२४।१४
३४—रा० अया० ३१६।११	३५—रा० उ० २४।१८	३६—रा० उ० १२।२८	३७—रा० उ० १४।२३
३८—रा० अर० १६।२३	३—रा० ल० ११।५।६	४०—रा० उ० १८।५	४१—रा० सु० ७।८
४२—रा० ल० १२०।७	४३—रा० ल० १२।११	४४—रा० उ० १९।२८	४५—रा० उ० २५।४

द्वित्व व्यजन—द्विव्यजनात्मक-सयोग के अतगत द्वित्व व्यजन भी आते हैं। तुलसी की अवधी रचनाओं के अन्तगत इनका प्रयोग ता हुआ है किंतु प्रचुर मात्रा में नहीं। रामचरितमानस के अतगत 'सुंदर तथा 'लका' काण्डों में द्विव्यजनो का प्रयोग कुछ अधिक हुआ है। पावतीमंगल जानकी मंगल तथा बरवै रामायण में इनका प्रयोग नहीं के बराबर है। प्रायः क, ग्, च ज ट, त द, न, प्, ल के द्वित्व रूप प्रयुक्त हुए हैं। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

च+च्	(च्च)	—	सच्चिदानन्द <sup>१</sup> , सच्चर <sup>२</sup> , साखाच्चार <sup>३</sup>
ज्+ज्	(ज्ज)	--	कज्जलगिरि <sup>४</sup> , अमज्जन <sup>५</sup> , कज्जल <sup>६</sup> , मज्जि <sup>७</sup> मज्जनु <sup>८</sup> , निमज्जन <sup>९</sup> , निलज्ज <sup>१०</sup>
ल+ल्	(ल्ल)	—	बल्लम <sup>११</sup> , भिल्लनि <sup>१२</sup> , भुजबल्ली <sup>१३</sup> , मिल्ल <sup>१४</sup>
ट+ट्	(टट)	—	भटटा <sup>१५</sup> , अटटहास <sup>१६</sup> , घटटा <sup>१७</sup> , दाटटहि <sup>१८</sup>
द्+द	(द्द)	—	ज्द्वि <sup>१९</sup>
त+त्	(त्त)	--	बतिस <sup>२०</sup> , उत्तम <sup>२१</sup> , उत्तर <sup>२२</sup> , बिमत्त <sup>२३</sup>
न+न्	(न्न्)	--	सम्पन्न <sup>२४</sup> , प्रसन्न <sup>२५</sup> , भिन्न <sup>२६</sup>
क+क	(क्क)	--	चक्क <sup>२७</sup> , चिक्करहि <sup>२८</sup> , कटक्कटइ <sup>२९</sup>
प+प्	(प्प)	—	सप्पर <sup>३०</sup> , सप्परहि <sup>३१</sup> , बडप्पनु <sup>३२</sup>
ग+ग्	(ग्ग)	—	गग <sup>३३</sup>

### २५२ त्रिव्यजनात्मक सयोग

आलोच्य भाषा में त्रिव्यजनात्मक सयोग अत्यन्त मात्रा में मिलते हैं। त्रिव्यजनात्मक सयोग पद मध्य में ही मिलते हैं। इस प्रकार के सयोग के अतगत

- १—रा० उ० २५।२९ २—रा० सु० ४।२७, ३ पा० म० १०८।१२, ४ रा० ल० १९।८, ५—रा० वा० ५। ६—रा० अर० १८।८, ७—रा० वा० ४५।४, ८—रा० ल० १२०।२४ ९—रा० अयो० ३१२।९, १०—रा० सु० ९।१८, ११—रा० ल० ४२।१६, १२—रा० अयो० २८।१९ १३—रा० वा० ३२८।३९, १४—रा० अयो० ३२१।३, १५—रा० ल० ८७।३, १६—रा० सु० २५।२१, १७—रा० ल० ८७।४, १८—रा० ल० ८८।१८, १९—रा० अर० १३।२३, २०—रा० सु० २।१६, २१—रा० ल० २०।१, २२—रा० उ० ४।१०, २३—रा० उ० १३।१७, २४—रा० उ० २३।११ २५—रा० अयो० ३।१५, २६—रा० उ० १२।३७ २७—जा० म० छ० १३।४, २८—रा० ल० ८१।२३, २९—रा० ल० ८८।१५, ३०—रा० ल० ८८।१३, ३१—रा० ल० ८८।२३, ३२—रा० उ० १०।१६, ३३—रा० ल० ८८।२३

व्यजन क्रम—(१) यर्गीय नाविक्य + स्पर्श + लुण्ठित । अथस्वर तथा (२) सघर्षी + स्पर्श । लुण्ठित, यथा—

- न + त + र (त्र) — गुमत्र<sup>१</sup> वृमत्र<sup>१</sup> स्वत्र<sup>१</sup>  
 न + र + र (द्र) — रामचद्र<sup>१</sup> पाद्रिका<sup>१</sup> इद्रजीत<sup>१</sup>  
 न + द + व (व) — इद्र<sup>१</sup>  
 स + त + र (स्त्र) — अस्त्र<sup>१</sup> दास्त्र<sup>१</sup>

## २६ अक्षर वितरण

आलोच्य भाषा में अक्षर वृत्त प्रकार निर्मित हैं यथा—

[ म + व = स्वर व = व्यजन ]

(१) म-व-वृत्त एक ही स्वर अक्षर रूप में प्राप्त होता है यथा—

मई<sup>१</sup>, नई<sup>१</sup>, नए<sup>१</sup>, जए<sup>१</sup>, मए<sup>१</sup>।

(२) अ + व—एक स्वर और एक व्यजन व योग में अक्षर का निर्माण होता है यथा—

अम्र<sup>१</sup> अल्प<sup>१</sup> इच्छा<sup>१</sup> अछा<sup>१</sup>।

(३) व + अ—एक व्यजन तथा एक स्वर व योग से अक्षर निर्माण, यथा—  
 साई<sup>१</sup> घाए<sup>१</sup> नए<sup>१</sup>, मए<sup>१</sup>।

(४) व + अ + व—एक व्यजन एक स्वर तथा एक व्यजन के योग से अक्षर का निर्माण होता है यथा—

लजन<sup>१</sup> (म + ) मजन<sup>१</sup> (म + ) घटटा<sup>१</sup> (घट) ठटटा<sup>१</sup> (ठट)

भट्टा<sup>१</sup> (भट) रुड<sup>१</sup> (रुण) मुड<sup>१</sup> (मुण) सब<sup>१</sup>, सर) घम<sup>१</sup>

(घर) गव<sup>१</sup> (गर) घुमि<sup>१</sup> (घुर) चम<sup>१</sup> (चर)

१-रा० अर० २१।१९	२-रा० अयो० ५।२	३-रा० अर० ९९।५	४-रा० अयो० १।६
५-पा० म० ७०।१४	६-रा० उ० ५८।७	७-रा० उ० १४।३९,	८-रा० ल० ९२।६
९-रा० ल० ९२।६	१०-पा० म० २९।२	११-पा० म० १७।१,	१२-जा० म० ३०।२,
१३-जा० म० ११२।१	१४-पा० म० ०२।२	१५-रा० वा० ६८।११	१६-रा० वा० १४।७
१७-रा० ल० ११८।०	१८-रा० वा० ८।७	१९-रा० वा० ८९।१२	२०-रा० ल० ५।८,
२१-जा० म० ३०।२	२२-पा० म० २२।०	२३-रा० उ० ३०।१६	२४-रा० ल० ८७।४
२५-रा० ल० ८७।४	२६-रा० ल० ८८।३	२७-रा० ल० ८८।३	२८-रा० ल० ८८।२
२९-रा० ल० ८८।१९,	३०-रा० ल० ७७।८	३१-रा० ल० ८०।२१	३२-रा० ल० ७८।१९,
३३-रा० ल० ८७।१८,	३४-रा० ल० ८७।२८		

(५) यन् तुलसी की अवधी में फुगफुसाहट वाले स्वरों व अस्तित्व को स्वीकार कर लिया जाए तो निम्न प्रकार अक्षर निर्माण स्वीकार किया जा सकता है—  
अ+ब+अ (फुगफुसाहट)—एक स्वर+एक व्यंजन+एक फुगफुसाहट वाले स्वर के योग से अक्षर निर्माण प्राप्त है, यथा—

मिलिएसि<sup>१</sup>, पठएमि<sup>१</sup>

आलोच्य भाषा में शब्दों में अक्षर वितरण इस प्रकार है, यथा—

(१) एकाक्षरी शब्दों में—इस कोटि के शब्दों में अक्षर निर्माण इस प्रकार मिलता है, यथा—

(अ)—इस कोटि के शब्द अत्यल्प हैं, यथा—आ<sup>१</sup>

(आ)—वा<sup>१</sup>=वा, तो<sup>१</sup>=तुम, तै<sup>१</sup>=तुम

जे<sup>१</sup>=जो (सम्बन्धवाचक सबनाम)

को<sup>१</sup>=कोन, हा<sup>१</sup>=सम्बोधन

रे<sup>१</sup>=सम्बोधन, मै<sup>१</sup>

हौं<sup>१</sup>=मैं मो<sup>१</sup>=मैं

सो<sup>१</sup>=वह त<sup>१</sup>=वे, ता<sup>१</sup>=वह, ये<sup>१</sup>=यह

जो<sup>१</sup>= (सम्बन्ध वाचक सबनाम)

२—द्व्यक्षरी शब्द—

(१) अ अ --इस कोटि के शब्दों की संख्या अत्यल्प है, यथा—

आई<sup>१</sup>, आए<sup>१</sup>

(२) अ क अ --इस कोटि के शब्द पर्याप्त मात्रा में प्राप्त हैं, जैसे—  
अज<sup>१</sup>, अनी<sup>१</sup>, आसा<sup>१</sup>, आहि<sup>१</sup>

(३) क अ व अ --इस कोटि के शब्द अधिक नहीं हैं उदाहरणार्थ—  
त्याग<sup>१</sup>, बयारी<sup>१</sup>, तुन<sup>१</sup>

१-रा० सु० १८१७,	२-रा० सु० १९१२,	३-रा० सु० ४५१८,	४-वरवै
रा० २०१२	५-रा० अयो० १५१२	६-रा० सु० १११८,	७-रा० वा० १२११,
८-पा० म ६४१२,	९-जा० म० १३११,	१० रा० अर० २९१९,	११-रा०
अर० २१२४	१२-रा० वा० ९६१४,	१३-रा० अर० २६१८,	१४-रा०
३० ८११२,	१५-रा० अयो० १६१६,	१६-रा० उ० १२८१५,	१७-रा०
वा० ६३१३,	१८-रा० वा० २११४,	१९-रा० सु० ५३१२	२०-रा०
कि० २०१९	२१-रा० उ० ७२१६	२२-रा० कि० १८१५,	२३-रा०
कि० १६११२	२४-रा० ल० २३१३,	२५-रा० सु० ५२१३	२६-रा०
कि० १५११३,	२७-रा० अर० १५१६		

- (४) कव अ अ—इस वग के दा-की सख्या सीमित है यथा—  
‘पाठ’ स्याद्’
- (१) कअ अ—इस वग के दा-पर्याप्त मात्रा में हैं यथा—  
‘पाठ’ हिए भाई’
- (६) कअ कअ—इस कोटि के दा-भी पर्याप्त मात्रा में तुल्य हैं यथा—  
‘सुत’ यत् ‘दान’, ‘वास’ ‘साज’, ‘पुर’
- (७) कअक कअ—इस प्रकार के दा-सरल तुल्य हैं यथा—  
‘रुठ’ ‘मुंठ’ ‘सठ’

३—त्रयगरी—

- (१) अकअकअ—इस कोटि के दा-पर्याप्त हैं यथा—  
‘अकाजु’ ‘अजित’ ‘आधीन’ ‘अजसु’
- (२) कअ कअ कअ—  
‘मूरति’ ‘सुगति’ ‘कमल’, ‘बचन’ ‘चरन’, ‘नगर’,  
‘कपाल’ ‘सपथ’
- (३) कअ कअ अ—इस वग के कुछ दा-उपलब्ध हैं यथा—  
‘रहेउ’ = ‘दहेज’, ‘सुहाद्’ ‘सुमाऊ’
- (४) कअ अ कअ—इस कोटि की सख्यावली सीमित है यथा—  
‘भुआल’ = ‘भूपाल’, ‘कुअरि’ ‘कुअर’
- (५) अ कअ अ—इस वग के दा-अत्यल्प मिलते हैं यथा—  
‘अमिअ’ = ‘अमृत अतिश्री’, ‘उपाई’ = ‘उपाय’

---

१-रा० कि० २।१।	२-जा० म० १४०।२	३-बरख रा० २२।१,	४-जा०
म० छ० ५।१	५-रा० सु० १३।१४	६-रा० अयो० १९।१५	७-जा०
म० १३९।१	८-जा० म० १४४।७	९-रा० अर० १३।३३	१०-रा०
अयो० ३११।५	११-रा० अर० १।५	१२-रा० ल० ८८।२१	१३-रा०
ल० ८८।१९	१४-रा० ल० ८३।६	१५-रा० अया० २७ १५	१६-रा०
ल० ११०।१२	१७-रा० अयो० ३३।६,	१८-रा० अयो० ३३।११	१९-जा०
म० २०।१,	२०-रा० बा० २४।१७	२१-रा० कि० १७।३	२२-रा० बा० १।२०,
२३-रा० बा० ३।२३	२४-रा० कि० ७६।२१,	२५-रा० अर० २ १२९	
२६-रा० सु० १३।१८	२७-रा० सु० ५४।१३	२८-रा० अयो० १।१६	
२९-रा० अयो० १।१९	३०-रा० अया० ३।२।	३१-पा० म० १।२	
३२-रा० बा० ३५०।३	३३-रा० या० ८।१४	३४-बरख रा० ३६।२	३५-रा०
मु० ५।११			

- (१) अक क अ क अ—इस वर्ग के शब्दों की मात्रा पर्याप्त है यथा—  
अन्तर<sup>१</sup>, अम्बर<sup>१</sup>, अगार<sup>१</sup>, अगद<sup>१</sup>
- (७) क अ क क अ क अ—इस ध्वनि क्रम के शब्दों का अभाव नहीं है, यथा—  
सकर<sup>१</sup>, पकज<sup>१</sup>, सकुल<sup>१</sup>
- (८) अ क अ क क अ—इस कोटि के शब्द सरल सुलभ नहीं हैं, यथा—  
असत्<sup>१</sup>, असका<sup>१</sup>
- (९) क क अ क अ क क अ—इस वर्ग के शब्द अत्यल्प हैं, यथा—  
प्रसग<sup>१</sup>, प्रचड<sup>१</sup>
- (१०) क अ क अ क क अ—इस ध्वनि क्रम के शब्द भी अधिक मात्रा में नहीं हैं, यथा—  
कूसग<sup>१</sup>, पतग<sup>१</sup>, तरग<sup>१</sup>, पिपग<sup>१</sup>, ताटक<sup>१</sup>

#### ४—चतुरसरी शब्द

- (१) अ क अ क अ क अ—इस कोटि के शब्द यथेष्ट मात्रा में प्राप्त हैं, यथा  
अनुरूप<sup>१</sup>, अवगुन<sup>१</sup>, अनामय<sup>१</sup>  
अविवेका<sup>१</sup> = अविवेक, आवरज<sup>१</sup> = आश्चय,  
उपवास<sup>१</sup>
- (२) अ क अ अ क अ—इस कोटि के शब्द अत्यल्प मात्रा में प्रयुक्त हुए हैं, यथा—  
अधिघार<sup>१</sup> उताइल<sup>१</sup> = उतावला
- (३) क अ क अ क अ क अ—इस कोटि की शब्दावली अच्छी संख्या में है, यथा—  
मनोहर<sup>१</sup>, सरासन<sup>१</sup>

१-रा० सु० ५८१२, २-रा० ल० ११७११२, ३-रा० सु० १२११५, ४-रा० ल० ११७ ५-रा० कि० ११८ ६-रा० वा० १७११७, ७-रा० ल० १२११२०, ८-रा० उ० १३०१३०, ९-रा० वा० १२११५ १०-रा० वा० १०१३२, ११-रा० ल० ८०११५, १२-रा० कि० १५१३२, १३-रा० कि० १५१३०, १४-रा० उ० ३१३० १५-रा० ल० १३११२ १६-रा० ल० १ १७ १७-रा० म० १४१२ १८-रा० कि० १११२ १९-रा० ल० ११०१११, २०-रा० वा० १५१४, २१-रा० अयो० ३८१२ २२-अरवै रा० ५२११ २३-अरवै रा० ३९१२ २४ रा० अर० २९१६ २५-रा० वा० ३५१२ २६-रा० म० ६१११ ।

(४) व अ क अ क अ क अ -इस कोटि के शब्द अत्यल्प हैं यथा—  
मदादरी<sup>१</sup>

(५) क अ क अ क अ क अ —  
मकरदा<sup>१</sup> हनुमत<sup>१</sup> जामवत<sup>१</sup> मगवत<sup>१</sup>

(६) अ क अ क क अ व अ -इस कोटि के अत्यल्प शब्द हैं यथा—  
अमगल<sup>१</sup>

#### ५—पंचमाक्षरी शब्द—

(१) अ क अ क अ क अ क अ -इस कोटि के शब्द अधिक नहीं हैं यथा—  
अपनपन जमरावति<sup>१</sup> अमरावलि<sup>१</sup>

(२) व अ व अ क अ क अ व अ -इस वर्ग के शब्द अधिक नहीं प्रयुक्त हुए हैं यथा—  
कठिनपन<sup>१०</sup> सचराचर<sup>११</sup> बरदायक<sup>१२</sup> परस  
पर<sup>१३</sup>, मुखदायक<sup>१</sup>

(३) क अ क अ व अ क क अ क अ -इस कोटि के शब्दों का अधिक प्रयोग नहीं मिलता यथा—  
दसकदर<sup>१४</sup> रघुनदन<sup>१५</sup>

पाँच से अधिक अक्षरों वाले शब्द आलोच्य भाषा में बहुत ही कम हैं और जो हैं भाषा में सामासिक हैं, यथा—

करुणानिधान<sup>१</sup>, मगलायतन<sup>१६</sup>

तुलसी की अवधी रचनाओं में द्वयक्षरी तथा त्रयक्षरी शब्दों की बहुलता है। चतुरक्षरी शब्द भी पर्याप्त संख्या में मिल जाते हैं। किंतु द्वयक्षरी तथा त्रयक्षरी शब्दों का प्रयोग अत्यल्प है।

१-रा० ल० ८।१३ २-रा० उ० २३।८ ३-रा० सु० ८।७ ४-रा० ल० १।१०,  
५-रा० उ० ११।२८, ६-रा० बा० १०।३ ७-जा० म० ५२।२ ८-रा०  
उ० २७।१० ९-रा० बा० १६।३, १०-जा० म० ४८।२, ११-रा० कि० ३।१९  
१२-रा० बा० २५।१८, १३-रा० अयो० २४।६, १४-रा० अयो० २१।८ १५-रा०  
सु० ५५।५ १६-जा० म० २८।२ १७-रा० बा० १८।१४ १८-रा०  
बा० ३६।१२८।

३०—आलोच्य सामग्री में, रचना की दृष्टि से, सुलभ शब्दावली के दो स्रोत हैं—

१—घातु—ऐसे शब्द जिनकी रचना घातु के व्युत्पादक प्रत्ययों के योग से होती है अर्थात् वे शब्द जिनकी प्रकृति क्रिया घातु में हो, यथा—

चलन<sup>१</sup>, मिलन<sup>१</sup>, बठन<sup>१</sup>, देखन<sup>१</sup>, कहन<sup>१</sup>, मारन<sup>१</sup> आदि शब्दों की शब्द-प्रकृतियाँ क्रमशः चल, मिल, बठ, देख, कह, मार, आदि घातुमें हैं।

२—अघातु (रूढ शब्द)—ऐसे शब्द जिनकी रचना अघातु (रूढ शब्द) में व्यात्पादक प्रत्ययों के योग से हो अर्थात् वे शब्द जिनकी प्रकृति घात्वितर रूप में दृष्टगत् होती है। इनकी रचना रूढ शब्दों पर आधारित है यथा—

लोहारिन, अहीरिन<sup>१</sup>, तेंबोलिन<sup>१</sup>, दरजिन<sup>१</sup>, आपन<sup>१</sup>, लरिकाई<sup>१</sup>, द्विठाई<sup>१</sup>, आदि शब्दों की प्रकृतियाँ क्रमशः लोहार, अहीर, बोली, दरजी, आप, लरिका (लडका), डीठ, आदि घात्वितर रूप (रूढ शब्द) में हैं। उपयुक्त शब्द प्रकृतियों से निर्मित शब्द समूह का अध्ययन दो प्रकार से कर सकते हैं—

१—इतिहास के आधार पर २—रचना के आधार पर

यदि ऐतिहासिक दृष्टि से आलोच्य शब्दावली का वर्गीकरण करना चाहें तो तत्सम, मद्ध तत्सम तद्भव तथा विदेशी (अरबी फारसी) आदि वर्गों में विभाजित कर सकते हैं यथा—

तत्सम शब्द—

तुलसी ने एक ओर जहाँ तत्सम रूपों को श्लोकों एवं स्तुतियों में ज्यों का त्यों



ग्रहण करके देवदासी के प्रति अपनी पौराणिक परम्परागत श्रद्धा को व्यक्त करते हुए सस्कृत व पक्षपातियों को सतुष्ट किया तो दूसरी ओर सवहारा वग की जन भाषा-मोह को अक्षण्य रच्य अपन आराध्य राम व मयोगान को जन जीवन तक पहुँचा कर अपन ममग्रयात्मक दृष्टिकान का परिचय दिया है तत्सम शब्द श्लोकों तथा स्तुता के अनिरिक्त फूटकर रूप में भी पर्याप्त मात्रा में प्रयुक्त हैं। अवधी की अग्य रचनाओं की अपभ्रंश मात्रा में तत्सम शब्दों का अनुशात कही अधिक है, यथा—

ब्रह्म<sup>१</sup> श्रद्धि<sup>२</sup> श्रुति<sup>३</sup>, आता<sup>४</sup>, प्राकन<sup>५</sup> प्रथम<sup>६</sup> घम, मडु<sup>७</sup>, सिद्धि<sup>८</sup>

तत्सम सामासिक रूप भी प्रचुर मात्रा में प्राप्त हैं। इस प्रकार के पदों का प्रयोग मानस में व्यापक रूप से मिलता है। बरव<sup>९</sup> रामायण<sup>१०</sup>, रामलला नहछू में ऐसे पद अत्यल्प मात्रा में प्रयुक्त हैं यथा—

देवलोक<sup>१</sup> मगलोचन<sup>२</sup>, श्रद्धि<sup>३</sup> सिद्धि<sup>४</sup> मोदमय<sup>५</sup> नृप समाज<sup>६</sup>  
गिरिग्रह<sup>७</sup>

अथ तत्सम शब्द—तत्सम शब्दों में किञ्चित् ध्वन्यात्मक परिवर्तन होने से उन्हें हम अद्वैतसम कोटि में रखते हैं। आलोच्य सामग्री में इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग पर्याप्त मात्रा में मिलता है, यथा—

मुकुता<sup>१</sup> परम<sup>२</sup> वरतव<sup>३</sup>, वरम<sup>४</sup> रतन<sup>५</sup> भगति<sup>६</sup> दिशि<sup>७</sup> मुरछा<sup>८</sup>  
तद्भव शब्द—

तद्भव शब्दों में ही प्रत्येक भाषा के स्वभाविक रूप के दगन होते हैं। भाषा को सरल एवं सुमोघ बनाने के लिए तुलसी ने तद्भव शब्दों का खूबकर प्रयोग किया है। अतएव आलोच्य सामग्री में तद्भव शब्दों का बाहुल्य है यथा—

आमर<sup>१</sup> देह<sup>२</sup>, वाठरि<sup>३</sup> भिखारि<sup>४</sup>, समी<sup>५</sup> जीम<sup>६</sup> घरी<sup>७</sup>, दइज<sup>८</sup>

- १-रा० कि० ६३१ २-रा० ल० न० २०१४ ३-रा० कि० ७११२ ४-रा०  
अर० ५१२६ ५-रा० अया० ३१८१२ ६-जा० म० ६९११ ७-जा० म० २३१२  
८-पा० म० ३०१२ ९-रा० ल० न० १४१२ १०-रा० ल० न० २३१ ११-रा०  
ल० न० ८१२ १२-रा० ल० न० २०१४ १३-पा० म० छ० ९११ १४-जा०  
म० ८९१२ १५-पा० म० ८१२ १६-जा० म० ५३१२ १७-रा० वा० ३११८  
१८-रा० वा० १२१२ १९-रा० ल० न० २१४ २०-पा० म० ४७१२ २१-रा०  
कि० १३११४ २२-रा० उ० २८१२५ २३-रा० अर० ४३११७ २४-वरव  
रा० ४९१२ २५-रा० ल० ९६१९ २६-पा० म० १७११ २७-रा० कि० १६१२२  
२८-जा० म० ८६११ २९-वरव रा० २७१२ ३०-पा० म० ७४११ ३१-पा० म०  
छ० १५१३

विदेशी शब्दावली—अन्य रचनाओं की अपक्षा 'मानस' में विदेशी (अरबी, फारसी) शब्दों का अपक्षावत् अधिक प्रयोग हुआ है; यथा—

गरीब', बाज', (अनुस्वार छदानुरोध से), फीज', साहिब', निवाज', बजाज', सर्राफ', गुमान' हजार', बाजार', दर' ।

(२) रचना के आधार पर—

प्रस्तुत अध्याय में साकालिक दृष्टि से शब्द रचना विधान पर विस्तार पूर्वक विचार किया जा रहा है। रचना के आधार पर शब्दावली को प्रमुखतः तीन वर्गों में विभाजित कर अध्ययन किया जा सकता है—

(१) मूल (२) यौगिक और (३) सामासिक

३१ मूल

वह प्रकृति तत्व जो अपना ध्व-यात्मक रूप परिवर्तित किए बिना (बिना प्रत्यय-योग के) स्वतंत्र शब्द के रूप में भाषा में स्थाय प्रहण करता है और अर्थ की दृष्टि से जिसका विभाजन पुन सम्भव न हो। यह भाषा की अविभाज्य इकाई होती है। प्रत्यय रहित होने के कारण प्रकृति और मूल शब्द एक रूप होते हैं। केवल प्रकृति ही अभिधाय द्योतन में पूण समर्थ होती है। शब्द प्रकृति (मूल शब्द) घातु और अघातु रूप में हो सकती है। किंतु आलोच्य भाषा में कितने ही विदेशी (अरबी, फारसी) तथा प्रादेशिक भाषाओं के शब्द आ गए हैं। जिनके कारण घातु-निष्पन्न में दुर्बलता उत्पन्न हो गई है। ऐसे मूल शब्द जो घातु रूप में दृष्टिगोचर होते हैं, अत्यल्प हैं, यथा—

पठ', मार' ।

ऐसे मूल शब्द जो अघातु रूप में दृष्टिगोचर होते हैं अधिक मात्रा में उपलब्ध हैं और सज्ञा, सर्वनाम विशेषण, अव्यय आदि शब्दावली के अधिकांश भाग का निर्माण करते हैं। रचना की दृष्टि से तद्भव तथा अय इतर शब्दों को अघातुज मानकर मूल शब्द के अन्तर्गत परिगणित किया गया है यथा—

छाह', आग', काम', साप', नाम', दिन', मै', तुम्ह' ।

१-रा० वा० २५।३ २-रा० अर० ११।१२ ३-रा० ल० ७६।२४ ४-रा० वा० १३।१४ ५-रा० वा० १३।१३ ६-रा० उ० २८।२१ ७-रा० उ० २८।२२ ८-रा० ल० म० १३।४ ९-रा० ल० न० १६।४ १०-रा० उ० २८।१७ ११-रा० ल० ११।११ १२-रा० कि० ६।९ १३-रा० ल० ५३।११ १४-बरवै रा० १८।२ १५-बरवै रा० २३।२ १६-पा० म० २९।१ ७-रा० कि० ६।२५ १८-बरवै रा० ६६।१ १९-रा० अयो० ३२।१ २०-रा० कि० २।१९ २१-पा० म० १५।१

### ३२—योगिक शब्द

योगिक शब्द की संरचना प्रकृति एवं प्रत्यय के योग से होती है। धातुओं और मूल शब्दों में व्युत्पादक प्रत्ययों के योग से नवीन-नवीन अर्थों के शब्दों की संरचना होती है। यह व्युत्पत्ति विचार दो दृष्टियों से सम्भव है— (१) ऐतिहासिक दृष्टि से तथा (२) वर्णनात्मक दृष्टि से। प्रस्तुत अध्याय में केवल वर्णनात्मक दृष्टि से विचार किया जा रहा है।

प्रत्यय दो प्रकार के होते हैं— (१) व्याकरणिक एवं (२) व्युत्पादक। व्याकरणिक प्रत्ययों का विवेचन पर विचार के अन्तर्गत होगा। यहाँ केवल व्युत्पादक प्रत्ययों पर विचार प्रस्तावित है। (२) व्युत्पादक प्रत्यय वे हैं जो धातु अथवा प्रातिपदिक के पूर्व अथवा परभाग में जुड़कर योगिक शब्दों की रचना करते हैं। कभी कभी शब्दों के पूर्व तथा पर दोनों ही भागों में ये प्रत्यय जुड़कर नए-नए शब्दों का निर्माण करते हैं।

ये व्युत्पादक प्रत्यय दो प्रकार के हैं—

(१) पूर्व प्रत्यय जिस संस्कृत में उपसर्ग कहते हैं।

(२) पर प्रत्यय—ये दो प्रकार के होते हैं कृत तथा तद्धित।

प्रत्ययों का योग धातु रूप तथा अधातु रूप (रूपांशु) दोनों प्रकार की प्रकृतियों में होता है। आलोच्य सामग्री में प्रत्ययों का सर्वाधिक योग अधातु रूपों (शुद्ध शब्दों) में हुआ है।

(१) पूर्व प्रत्यय (उपसर्ग)—

तुलसी जी अवधी में ऐसे अनेक शब्द सुलभ हैं जिनकी संरचना पूर्व प्रत्ययों के योग से हुई है। आगे के भागों के शब्दों की मुख्यतः दो वर्गों में रख सकते हैं—

(अ) ऐसे शब्द जिनमें ऐतिहासिक दृष्टि से पूर्व प्रत्यय और प्रकृति स्पष्ट हैं। शब्द प्रकृति तथा पूर्व प्रत्यय के प्रकार घुल मिल गए हैं कि उन्हें पूर्व प्रत्यय रूप में पकड़ करना असंभव है—

निचोल<sup>१</sup> उदास<sup>२</sup> अनस<sup>३</sup> अखिल, अधम<sup>४</sup> अधिकार<sup>५</sup> आसीत निसर (निसरी<sup>६</sup>)।

(ब) ऐसे शब्द जिनमें साकालिक दृष्टि से भी पूर्व प्रत्यय और प्रकृति स्पष्ट हैं यथा—

।नुराग<sup>१</sup>, अनुग्रह<sup>२</sup>, कुमति<sup>३</sup>, कुसगति<sup>४</sup>, कुमोग<sup>५</sup>, कुमुख<sup>६</sup>, कुमग ,

तुलसी की अवधी में रचना की दृष्टि से पूव प्रत्ययों को तीन वर्गों में

विभाजित किया गया है—

(अ) वे पूव प्रत्यय जो सज्ञा, विशेषण अथवा धातु से पूव जुड़कर तदवर्गीय शब्दावली व्युत्पन्न करते हैं ।

(ब) वे पूव प्रत्यय जो सज्ञा, विशेषण या धातु के साथ जुड़कर मित्र वर्गीय शब्दावली की रचना करते हैं ।

(स) वे पूव प्रत्यय जो उपयुक्त दोनों वर्गों की शब्दावली का निर्माण करते हैं ।

पूव प्रत्ययों का योगिक विधान एवं व्युत्पन्न शब्दावली अवधी में प्रत्ययों का संयोग सज्ञा, विशेषण, क्रिया विशेषण तथा धातुआ के साथ होता है और उनके योग से सज्ञा, विशेषण क्रिया विशेषण आदि शब्दावली व्युत्पन्न होती है । इसका सामोपाग विवेचन इस प्रकार है—

(१) पूव प्रत्यय	+	सज्ञा	—	सत्ता	अथ
अ-		विवेक		अविवेक <sup>६</sup>	हीनता
अ-		दाया		अदाया <sup>१</sup>	"
अ-		सौच		असौच <sup>१</sup>	"
अ-		सुम		असुम <sup>११</sup>	"
अ-		गुन		अगुन <sup>१२</sup>	"
अ-		सरन		असरन <sup>११</sup>	"
अ-		जाचक		अजाचक <sup>१४</sup>	"
आ-		तप		आतप <sup>१५</sup>	"
अप-		मानि माना		अपमाना <sup>१६</sup>	"
अप-		बाद		अपवाद <sup>१</sup>	'
अव-		आराधन		अवराधन <sup>१६</sup>	'
अव-		गुन		अवगुन <sup>१२</sup>	"

१-रा० बा० १११२२ २-रा० बा० ११३ ३-रा० अयो० २०१२ ४-रा०  
 बा० ३१९५-रा० उ० १४१२४ ६-रा० अयो० ४३११३ ७-रा० अयो० ३१५११०  
 ८-रा० ल० १६१६ ९-रा० ल० १६१६ १०-रा० ल० १६१६ ११-रा०  
 अयो० ३८११६ १२-रा० बा० ५१५ १३-रा० उ० १८१५ १४-रा० उ० १२११८  
 १५-रा० कि० ११२६ १६-रा० मु० १०११ १७-पा० य० ४१ १८-पा०  
 म० २०१७ १९-रा० उ० ११११

अवि-	बल	अविचल <sup>१</sup>	हीनता
अन-	हित	अनहित <sup>२</sup>	"
अन-	मल	अनमल <sup>३</sup>	,
अनु-	राग	अनुराग <sup>४</sup>	श्रेष्ठता
अनु-	ग्रह	अनुग्रह <sup>५</sup>	
अनु-	सासन	अनुसासन <sup>६</sup>	अभाव
अनु-	मान	अनुमान <sup>७</sup>	
अ-	पून	अपून <sup>८</sup>	,
कु-	मग	कुमग <sup>९</sup>	"
कु-	जुगुति	कुजुगुति <sup>१०</sup>	,
कु-	मित्र	कुमित्र <sup>११</sup>	,
कु-	बधि	कुबधि <sup>१२</sup>	,
स-	गुन	सगुन <sup>१३</sup>	श्रेष्ठता
स-	रोप	सरोप <sup>१४</sup>	हीनता
सु-	बानी	सुबानी <sup>१५</sup>	श्रेष्ठता
सु-	तीरथ	सुतीरथ <sup>१६</sup>	"
सु-	कृपा	सुकृपा <sup>१७</sup>	
सु-	पथ	सुपथ <sup>१८</sup>	
सु-	राज	सुराज <sup>१९</sup>	
सु-	रुचि	सुरुचि <sup>२०</sup>	"
सु-	धरम	सुधरम <sup>२१</sup>	,
सु-	लोचनि	सुलोचनि <sup>२२</sup>	
सु-	बास	सुबास <sup>२३</sup>	
बि-	बुध	बिबुध <sup>२४</sup> (सजावत प्रयोग)	
बि-	मोग	बिभोग <sup>२५</sup> (बिभोगी)	

१-रा० ल० १०७।१५      २-रा० अयो० १९।४      ३-रा अयो० १६।१४  
 ४-वरव रा० ६३।२      ५-जा० म० २५।२      ६-रा० उ० ११।१४      ७-वरव  
 रा० २।१      ८-रा० कि० १५।०७,      ९-रा० अयो० ३१।११०,      १०-पा०  
 म० ६६।२      ११-रा० कि० ७।१६      १२-रा० अर १०।९,      १३-रा० उ० ९।२३  
 १४-पा० म० ४।१२,      १५-रा० अयो० ३२।१७      १६-रा० अयो० ६।२  
 १७-रा मु० १४।१८      १८ रा० कि० ७।७      १९-रा कि० १५।६      २०-रा०  
 वा० १।०२      २१-रा अयो० ३१।१४      २२-रा० अ० २५।२०      २३-रा०  
 वा० १।२२      २४-रा० अयो० १२।१०      २५-वरव रा० ८०।१

वि-	मुक्त	विमुक्त <sup>१</sup>	श्रेष्ठता
बि-	राग	विराग <sup>१</sup>	"
दुर-	आसा	दुरासा <sup>१</sup>	हीनता
दुर-	वाद	दुर्वाद <sup>१</sup>	"
परि-	तोष	परितोष <sup>१</sup>	"
परि-	जन	परिजन <sup>१</sup>	परायाभाव
परि-	हास	परिहास <sup>१</sup>	हीनता
प्र-	बोधु	प्रबोधु <sup>१</sup>	श्रेष्ठता
प्र-	सग	प्रसग <sup>१</sup>	श्रम
प्र-	मोद	प्रमोद <sup>१०</sup>	श्रेष्ठता
सद-	गुर	सदगुर <sup>११</sup>	"
सद-	गुन	सदगुन <sup>११</sup>	"
सत-	धर्म	सद्धर्म <sup>११</sup>	'
सत-	कर्मा	सतकर्मा <sup>११</sup>	श्रेष्ठता
उ-	सास	उसास <sup>११</sup>	'
उप-	बन	उपबन <sup>११</sup>	स्थान-वाचक
नि-	बास	निबास निवास <sup>११</sup>	'
निर्-	आदर	निरादर <sup>११</sup>	'
अन-	अहिवात	अनअहिवात-अनअहिवातु <sup>११</sup>	'
(२) पूवप्रत्यय	+	विरोपण	अथ
अ-	पार	अपार <sup>१</sup>	श्रेष्ठता
अ-	गुन	अगुन <sup>११</sup>	हीनता
अ-	मान	अमान <sup>११</sup>	"
अ-	नाम	अनाम <sup>११</sup>	अभाव

१-रा० उ० १५।९    २-वरव० रा० ४८।१,    ३-रा० वा० २४,    ४-रा०  
 ८० १०८।३०    ५-पा० म० ७८।१    ६-पा० म० ३०।२,    ७-रा० अयो० ३२।१०,  
 ८-रा० अयो० १८।१८,    ९-रा० अयो० २२।११    १०-रा० वा० ३५।६  
 ११-रा० कि० १७।१९,    १२-रा० उ० २।४०    १३-रा० कि० १५।२८,  
 १४-रा० अर० २१।१६,    १५-रा० अयो० ०।१९    १६-रा० उ० २६।८,  
 १७-रा० अयो० १२।११    १८-रा० ० १४।१८    १९-रा० अर० २५।१८,  
 २०-रा० वा० ७३।१८    २१-पा० म० ४९।७,    २२-पा० म० ८०।२    २३-ग०  
 ८० ११०।११

अ-	सट	असट <sup>१</sup>	श्रष्टता
अभि-	भन	अभिमन <sup>१</sup>	'
स-	गुन	मगुन <sup>१</sup>	'
स-	बिनय	सबिनय	'
म-	नमा	सनेमा <sup>१</sup>	'
स-	नाषा (-नाष)	सनाषा <sup>१</sup>	'
म-	जल	सजल	'
म-	भीत	सभीन <sup>१</sup>	"
ग-	रस	सरस <sup>१</sup>	'
अनु-	रूप	अनुरूप <sup>१</sup>	"
प्र-	बल	प्रबल <sup>११</sup>	श्रेष्ठता
र-	लभ	दुर्लभ <sup>११</sup>	हीनता
क-	चाली ( चालि)	कूचाली <sup>११</sup>	
नि-	रस	निरस <sup>१</sup>	
नि-	काम	निकाम <sup>११</sup>	
निर-	दम	निदम <sup>११</sup>	
निर-	गुन	निगुन <sup>१</sup>	
निर-	ल्प	निरल्प <sup>१</sup>	
मु-	चानो ( चालि)	मुचाली <sup>११</sup>	श्रष्टता
मु-	फल	मुफल <sup>१</sup>	"
बि-	बाकी	बिबाकी <sup>११</sup>	
बि-	कल	बिकल <sup>११</sup>	अभाव
बि-	सेप	बिसप बिपेपु <sup>११</sup>	श्रष्टता
बि-	रथ	बिरथ <sup>१</sup>	हीनता

१-रा० ल० १११।२९ २-रा० अयो० ५।८ ३-रा० अर० १३।२६, ४ रा०  
 अयो० ३१।८ ५-रा० अयो० ३२।३१ ६-रा० ल० १ ८।१५, ७-रा०  
 उ० १७।२८ ८-जा म० ३४।१ ९-रा० अर० १।७ १०-रा० अर० १७।१७  
 ११-रा० ल० १०९।११ १२-रा० उ० २५।८, १३-रा० अयो० १४।८,  
 १४-रा० वा० २।१० १५-रा० अर० ९।५ १६-रा० उ० २१।१३ १७-रा०  
 उ० १३।१ १८-रा० अयो० ३१७।१५ १९-रा० अयो० ३१९।१० २०-रा०  
 वि० ९।६ २१-रा० वा० ०४।८ २२-रा० वि० ८।५ २ पा० म० १४।२,  
 २४-रा० सु० १०।१०

३) पूव प्रत्यय	+	सज्ञा	क्रिया विशेषण
अ-		भय	अभय <sup>१</sup>
अनु-		दिन	अनुदिन <sup>१</sup>
स-		भय	सभय <sup>१</sup>
स-		कोप	सकोप <sup>१</sup>
स-		प्रेम	सप्रेम <sup>१</sup>
स-		प्रीति	सप्रीति <sup>१</sup>
स-		जग	सजग <sup>१</sup>
कु-		मांति	कुभाति <sup>१</sup>
(४) पूव प्रत्यय	+	विशेषण	विशेषण
अ-		लौकिक <sup>१</sup>	अलौकिक <sup>१</sup>
अ-		साध्य	असाध्य <sup>१</sup>
अ-		विरल	अविरल <sup>१</sup>
अन-		बच	अनवच <sup>१</sup>
वि-		मूढ	विमूढ <sup>१</sup>
(५) पूव प्रत्यय	+	विशेषण	सज्ञा
अ-		मृत	अमृत <sup>१</sup>
(६) पूव प्रत्यय	+	घातु	विशेषण
अ-		चल	अचल <sup>१</sup>
अन-		मिल	अनमिल <sup>१</sup>
स-		जग	सजग <sup>१</sup>
सु-		जान	सुजान <sup>१</sup>
द-		सह	दुसह <sup>१</sup>

अस्तु तुलसी की अवधी में प्रमुख पूव प्रत्यय अ-, आ- अन-, अनु-, अव- अप-, अभि- स- सु-, नि- निर-, क-, कु-, प्र-, दुर- वि-, सद-, उप-आदि हैं ।

१-रा० कि० २०।	२-वा० म० १।२,	३-रा० अर० २।२१,	४-रा०
सु० ५७।७७,	५-रा० वा० ३६।२६	६-रा० वा० ४।२६	७-रा०
अयो० २ ।१९	८-रा० अयो० ३९।१५,	९-रा० अयो० २।२५	१०-रा०
अयो० ३५।१७,	११-रा० अर० १३।२१	१२-रा० ल० ११।२२९,	१३-रा०
अर० १।३	१४-रा० अयो० ४२।६	१५-रा० ल० ७।२०	१६-रा०
वा० १५।११	१७ रा० अयो० २२।१९	१८-जा० म० ७० ३।५,	
१९-रा० कि० १।२६			



(२) पर प्रत्यय—जो प्रत्यय धातु तथा अधातु (सना, सबनाम, विशेषण आदि) व अत म जुड़कर तत्सम्बन्धी नवीन शब्दावली का निर्माण करते हैं, पर प्रत्यय कहलाते हैं। कतिपय परप्रत्यय धातु म संलग्न होकर सज्ञा, विशेषण आदि की रचना करते हैं यथा—

लड + आई = लड़ाई चल + अत = चलत आदि। कुछ प्रत्यय रट्ट शब्दो म समुक्त होकर सना विगणन त्रिया विशेषण आदि का निर्माण करते हैं। अत स्पष्ट है कि आलोच्य भाषा म दो प्रकार के परप्रत्यय प्रयुक्त हुए हैं—

(१) कृत—जो धातुओ म समुक्त होकर सज्ञा विगणन आदि का निर्माण करते हैं।

(२) तद्धित—जो रट्ट शब्दो म समुक्त होकर अनुपमो सना विशेषण धातु आदि को व्युत्पन्न करते हैं जैसे—चतुर + आई = चतुराई मीख + आरी = मिखारी, घन + ई = घनी आदि।

(अ) कृत परप्रत्यय—आलोच्य भाषा मे प्रयुक्त परप्रत्यय (कृत) इस प्रकार हैं—

(१) अन — न के याग से सज्ञाओ की रचना होती है—

धातु	+ पर प्रत्यय	त्रियार्थक सज्ञा
चल	-अन	चलन <sup>१</sup>
रह	-अन	रहन <sup>१</sup>
मिल	-अन	मिलन <sup>१</sup>
कर	-अन	करन <sup>१</sup>
खेल	-अन	खेलन <sup>१</sup>
बह	-अन	बहन <sup>१</sup>
पाल	-अन	पालन <sup>१</sup>
चेत	-अन	चेतन <sup>१</sup>
बठ	-अन	बठन <sup>१</sup>
देख	-अन	देखन <sup>१</sup>
दल	-अन	दलन <sup>१</sup>
छाड (- छोड)	-अन	छाडन <sup>१</sup>

१ रा० अयो ३१८।१२ २-रा उ० १९।६ ३-रा० उ० १२१।२६ ४-रा० ल० ७।३ ५-पा० म० ७१।० ६-रा० उ० १७।६ ७-रा० ल० १५।१२, -रा० वा० ६।१९, ९-रा० अर० २।९ १०-रा ल० १०८।१९ ११ रा० यो० ३२६।१२ १२-रा० ल० २८।१९

हर्	-अन	हरन <sup>१</sup>
मार्	-अन	मारन <sup>२</sup>
ले	-न	लेन <sup>१</sup>

(२) अन प्रत्यय के योग से सज्ञा का निर्माण होता है, यथा—

घातु	+	परप्रत्यय	सज्ञा
सुमिर		-अन	सुमिरन <sup>१</sup>
लग्		-अन	लगन <sup>१</sup>
राख		-अन	राखन <sup>१</sup>
बिनास्		-अन	बिनासन <sup>१</sup>
बँध (-बाँध)		-अन	बधन <sup>१</sup>
भज्		-अन	भजन <sup>१</sup>

(३) आवन प्रत्यय के योग से सज्ञाओ का निर्माण होता है, यथा—

घातु	+	परप्रत्यय	सज्ञा
सोह		-आवन	सोहावन <sup>१०</sup>
देख		-आवन	देखावन <sup>११</sup>
सिख		-आवन	सिखावन <sup>१२</sup>
बचा		-आवन	बचावन <sup>१३</sup>

(४) अना - ना प्रत्यय के योग से सज्ञा शब्द बने है यथा—

घातु	+	परप्रत्यय	सज्ञा
मर्		-अना	मरना <sup>१४</sup>
सराह्		-अना	सराहना <sup>१५</sup>
चर		-अना	चरना <sup>१६</sup>
रच्		-अना	रचना <sup>१७</sup>
ताड		-अना	ताडना <sup>१८</sup>
ले		-ना	लेना <sup>१९</sup>
दे		-ना	देना <sup>१०</sup>
जा		-ना	जाना <sup>११</sup>

१-रा० अर० १०।२८, २-रा० सु० १०।१३, ३-जा० म० ८।२, ४-वरव  
 रा० ६०।२, ५-रा० अयो० १८।१२ ६-रा० अर० २५।९ ७-रा० उ० १४।५  
 ८-रा० उ० १२।१३, ९-रा० अयो० ४।१४, १०-जा० म० ८६।१ ११-जा०  
 म० छ० ६।२ १२-रा० उ० ७।१५ १३-रा० सु० ५८।२ १४-रा०  
 अर० २६।९, १५-पा० म० १५।२, १६-रा० कि० २।९ १७-रा० कि० २।२९,  
 १८-रा० सु० ५९।१२ १९-रा० सु० ३९।१३, २०-रा० उ० ३९।१३,

(५) अनी—नी—आनी—अनि—नि व योग से मनायें बनती हैं यथा—

घातु	+	परप्रत्यय	मना
कर		-अनी	करनी <sup>१</sup>
नव		-नि	नवनि <sup>१</sup>
बह		-आनी	बहानी <sup>१</sup>
मिल		-अनि	मिलनि <sup>१</sup>
रह		-अनि	रहनि <sup>१</sup>
पछिना		-नि	पछितानि <sup>१</sup>
बाल		-अनि	बालनि <sup>१</sup>
बिलाक		-अनि	बिलाकनि <sup>१</sup>
कर		-अनि	करनि <sup>१</sup>
चल		-नी	चलनी <sup>१</sup>
मिल		-नी	मिलनी <sup>१</sup>
हो		-नी	होनी <sup>१</sup>

(६) आ—ना,—ता परप्रत्यया व योग से कृत मनायें बनती हैं यथा—

घातु	+	परप्रत्यय	कृत मना
दख		आ	देखा <sup>१</sup>
मार		-आ	मारा <sup>१</sup>
चीख्		-आ	चीखा <sup>१</sup>
जा		-ना	जाना <sup>१</sup>
आ		-ता	आता <sup>१</sup>
जा		-ता	जाता <sup>१</sup>

(७) अन तथा—अन परप्रत्ययों के योग से कृत वाचक मनायें बनती हैं यथा—

घातु	+	परप्रत्यय	कृत वाचक मनायें
मज		-अन	मजन <sup>१</sup>
रज्		-अन	रजन <sup>१</sup>

१-रा० अर० २२।६ २-रा० अर० २५।१३ ३-रा० वा० २१।१३ ४-रा०  
वा० ४२।१७ ५-रा० अयो० ३१४।६ ६-रा० अयो० १०।१५ ७-रा०  
उ० १९।७ ८-रा० उ० १९।७ ९-जा० म० २७।२ १०-रा० उ० १९।७  
११-रा० उ० २९।८ १२-रा० वा० ३।६ १३-रा० ल० ८८।१९ १४-रा०  
कि० ९।२० १५-रा० अयो० ४७।६ १६-रा० ल० २२।५ १७-रा० उ० २०।६,  
१८-रा० उ० २० ६ १९-रा० उ० ३०।१९ २०-रा० ल० ११३।३७ ।

हर्	-अन	हरन <sup>१</sup>
दल	-अन	दलन <sup>१</sup>
तार	-अन	तारन <sup>१</sup>
खड	-अन	खडन <sup>१</sup>
दह	-अन	दहन <sup>१</sup>
हर	-अना	हरना <sup>१</sup>
पाल	-अक	पालक <sup>१</sup>
पोष	-अक	पोषक <sup>१</sup>
निद ( निदा)	-अक	निदक <sup>१</sup>
सोष	-अक	सोषक <sup>१</sup>

(८) बार-बारा, हार-हारा प्रत्ययों के योग से निर्मित क्त वाचक सज्ञायें बनती हैं, यथा—

धातु	+	परप्रत्यय	क्त वाचक सज्ञायें
रख (+अ)		-बार	रखवार <sup>११</sup>
रख (+अ)		-बारा	रखबारा <sup>११</sup>
राख (+अनि)		-हार	राखनिहार <sup>११</sup>
निवाह (+अनि)		-हारा	निवाहनिहारा <sup>१</sup>

(९) एरा के प्राग स भी अत्यल्प शब्द सरचित हैं यथा—

घात	+	परप्रत्यय	सज्ञा
बस		-एरा	बसेरा <sup>११</sup>

(१०) अत-इत के योग से कृत विशेषणा की रचना हुई है यथा—

धातु	+	परप्रत्यय	विशेषण (कृदन्त)
सोह		-अत	सोहत <sup>११</sup>
निरख		-अत	निरखत <sup>११</sup>
रस		-अत	रसत <sup>११</sup>
चल		-अत	चलत <sup>११</sup>

१-रा० अर० २१।३ २-पा० म० १९।२ ३-रा० ल० १ १।३, ४-रा० ल० १११।४१, ५-रा० बा० १।८ ६-रा० बा० २।६ ७-रा० ल० ७।८ ८-रा० बा० ७।३१, ९-रा० उ० १२।१ ७ १०-रा० बा० ८।३१ ११-रा० बा० ८।४।२२, १२-रा० सु० ५३।१३ १३ जा० म २५।२ १४-रा० अयो० २४।८, १५-रा० ल१० ५।१८ १६-वरव रा० १७ २ १७-वरवै रा० १५।१, १८-जा० म० १०९।१ १९-रा० सु० ६।१२ ।

(ब) तद्धित परप्रत्यय—आलोच्य भाषा की शब्दावली में निम्न प्रत्यय निकाले जा सकते हैं—

(१) आई ई इ प्रत्ययों के योग से सजाएँ सरचित हैं यथा—

सजा	+	परप्रत्यय	सजा
लोग		—आई	लोगाई <sup>१</sup>
तरुण		—ई	तरुणी, तरुना <sup>१</sup>
निसिचर		—ई	निसिचरी <sup>१</sup>

(२) इनी-नी-नि-इन-इनि प्रत्ययों के योग से सजाएँ बनी हैं यथा—

सजा	+	परप्रत्यय	सजा
कुमुद		—इनी	कुमुदिनी <sup>१</sup>
चाँद		—नी	चाँदनी <sup>१</sup>
तवाली (-तवाल)		—नि	तवालिनि <sup>१</sup>
पातकी		—नि	पातकिनि <sup>१</sup>
दरजी ( दरजि)		—नि	दरजिनि <sup>१</sup>
मोची (-माचि)		—नि	मोचिनि <sup>१</sup>
सेवक		—नि	सेवकनि <sup>१</sup>
नाऊ (-नाउ)		—नि	नाउनि <sup>१</sup>
साँप		—इन	साँपनि <sup>१</sup>
बहीर		—इनि	बहीरिनि <sup>१</sup>
लोहार		—इनि	लोहारिनि <sup>१</sup>

(३) '—निया के योग से भी कतिपय शब्द बने हैं, यथा—

माली (मलि)	—निया	मलिनिया <sup>१</sup>
नाऊ (नउ)	—निया	नउनिया <sup>१</sup>

(४) —इया के योग से स्त्री० शब्दों का निर्माण यथा—

अनुहार	—इया	अनुहरिया <sup>१</sup>
उजिआर	—इया	उजिअरिया <sup>१</sup>

१—रा० अयो० ११।६ २—रा० बा० ११।३ ३—रा० ल० १०।७।६ ४—रा० उ० ९।२९ ५—वरव रा० ४।१।१ ६—रा० ल० न० ६।१, ७ रा० अयो० २२।१७, ८—रा० ल० न० ६।२, ९—रा० ल० न० ७।१ १०—रा० बा० २४।१७, ११—रा० न० १०।१, १२—रा० अयो० १३।१६ १३—रा० ल० न० ५।३ १४—रा० न० ५।२ १५—रा० ल० न० ७।३ १६—रा० ल० न० ८।३ १७—वरव ० २।२ १८—वरव रा० ३।७।१ ।

(५) '—इक्-क्' के योग से सज्ञाएँ निमित्त हैं, यथा—

सज्ञा	+	परप्रत्यय	कृतवाचक सज्ञा
रस		-इक्	रसिक <sup>१</sup>
पथ		-इक्	पथिक <sup>१</sup>
सेवा (सेव)		-क्	सेवक <sup>१</sup>
निदा (निद)		-क्	निदक <sup>१</sup>
घषा (घष)		-क्	घषक <sup>१</sup>
बाधा (बाध)		-क्	बाधक <sup>१</sup>
उपास		-क्	उपासक <sup>१</sup>

(६) '—हारा-हारी' प्रत्यय के योग से कृतवाचक सज्ञायें निमित्त हैं, यथा—

सज्ञा	+	परप्रत्यय	कृतवाचक सज्ञा
श्रम		-हारी	श्रमहारी <sup>१</sup>
तापनि		-हारा	तोपनिहारा <sup>१</sup>

(७) '—आरी' पर प्रत्यय के योग से, यथा—

भीख (भिक्ष)	-आरी	भित्तारी <sup>१</sup>
-------------	------	-----------------------

(८) '—ई' परप्रत्यय से बनी कर्तवाचक सज्ञायें, यथा—

सज्ञा	+	परप्रत्यय	कृतवाचक सज्ञा अथवा विशेषण
उपकार		-ई	उपकारी <sup>१</sup>
नेग		-ई	नेगी <sup>१</sup>
अधिकार		-ई	अधिकारी <sup>१</sup>
गुन		-ई	गुनी <sup>१</sup>
बास		-ई	बासी <sup>१</sup>

(९) '—पन' परप्रत्यय के योग से भाववाचक सज्ञायें निमित्त हुई हैं, यथा—

सज्ञा	+	परप्रत्यय	सज्ञा (भाववाचक)
कुटिल		-पन	कुटिलपन <sup>१</sup>
जरठ		-पन्	जरठपन जरठपनु <sup>१</sup>

१--रा० वा० ११५, २--रा० उ० २११५, ३--रा० उ० २२१५ ४--रा० उ० १२११७, ५--रा० वा० १२१८, ६--पा० म० ३२११, ७--रा० वा० १८१५  
 ८--रा० सु० १११८, ९--रा० अयो० ४११५ १०--रा० अर० १७१२९ ११--रा० उ० २२१३ १२--रा० वा० ३५३११ १३--रा० वा० ३०१८ १४--रा० उ० ०४११० १५--रा० उ० ४११३ १६--रा० अयो० १८११७ १७--रा० अयो० २११४।

गना	+	परप्रत्यय	सज्ञा (भाववाचक)
बडा		-पन	बडप्पन-बडप्पनू <sup>१</sup>
कठोर		-पन्	कठोरपन् <sup>१</sup>
वाल		-पन्	वालपन <sup>१</sup>
सवनाम	+	परप्रत्यय	सज्ञा (भाववाचक)
अपन		-पन्	अपनपन <sup>१</sup>

(१०) —ना पर प्रत्यय क योग स बनी भाववाचक सज्ञायें, यथा—

विगण	+	परप्रत्यय	सज्ञा (भाववाचक)
म्याम		-ता	स्यामता <sup>१</sup>
विम		-ता	विमलता <sup>१</sup>
कठिन		-ता	कठिनता <sup>१</sup>
विषम		-ता	विषमता <sup>१</sup>
सीतल		-ता	सीतलता <sup>१</sup>
मनाहर		-ता	मनोहरता <sup>१</sup>
हीन		-ता	हीनता <sup>१</sup>

(११) —आई पर प्रत्यय के योग स निर्मित भाववाचक सज्ञायें यथा—

सज्ञा । विगण	+	परप्रत्यय	सज्ञा (भाववाचक)
दर		-आई	दराई <sup>१</sup>
मल (मला)		-आई	मलाई <sup>१</sup>
बड (बडा)		-आई	बडाई <sup>१</sup>
सक		-आई	सेकवाई <sup>१</sup>
तरुण (तरुन)		-आई	तरुनाई <sup>१</sup>
प्रम (-ता)		-आई	प्रमुता <sup>१</sup>

(१२) —इ परप्रत्यय क योग बने विगण इस प्रकार हैं यथा—

सज्ञा	+	परप्रत्यय	विगण
घन		-इ	घनी <sup>१</sup>

१-रा० बा० १०।१६ २-रा० अयो० ४१।५, ३-रा० बा० ३०।१९, ४-जा० म० ५।२ ५-रा० ल० १२। ४ ६-रा० ल० ६।१ ७-रा० अयो० ४१।२ ८-रा० उ० २।१५ ९-वरव रा० ३३।१ १०-जा० म० ३२।१, ११-रा० उ० २। १२-रा० मु० १५।२० १३-रा० बा० ७।४ १४-रा० ल० ११।८, १५-रा० कि ७।३० १६-रा० अर० ५।३८ १७-रा० उ० १।१३ १८-रा० २०।१०

सना	+	परप्रत्यय	विशेषण
विजय		-ई	विजयी <sup>१</sup>
दिनय		-ई	दिनयी <sup>१</sup>

(१३) '—आरी' परप्रत्यय के योग से बने विशेषण, यथा—

दुख		-आरी	दुखारी <sup>१</sup>
-----	--	------	---------------------

(१४) '—वत' पर प्रत्यय के योग से बने विशेषण, यथा—

बिरह		-वत	बिरहवत <sup>१</sup>
भाग्य		-वत	भाग्यवत <sup>१</sup>
बल		-वत	बलवत <sup>१</sup>
क्रोध		-वत	क्रोधवत <sup>१</sup>

(१५) '—र' परप्रत्यय के योग से निर्मित विशेषण यथा—

सजा	+	परप्रत्यय	विशेषण
रुचि		-र	रुचिर <sup>१</sup>
मुख		-र	मुखर <sup>१</sup>
मधु		-र	मधुर <sup>१०</sup>

(१६) '—ऊ' तथा '—ई' प्रत्यय के योग से बने विशेषण—

बजार (बाजार)		-ऊ	बजारू <sup>११</sup>
भार		-ई	भारी <sup>१२</sup>
गाढ		-ई	गाढी <sup>१३</sup>
बिचार		-ई	बिचारी <sup>१</sup>

(१७) '—वान' के योग से बने विशेषण अत्यल्प हैं यथा—

बल		-वान	बलवान <sup>१४</sup>
----	--	------	---------------------

(१८) '—ए मी —जे अउधि' परप्रत्यय के योग से तिथिवाचक सजाएँ बनती हैं, जैसे—

पाँच		-ए	पाँचै <sup>१५</sup>
मी		-मी	मीमी <sup>१६</sup>

१-रा० उ० २५।१३, २-रा० उ० २५।१३, ३-रा० अर० २९।१२, ४-रा० उ० १२।२०, ५-रा० अर० १२।२४ ६-रा० अर० १९।१९ ७-रा० अर० २६।३३ ८-रा० उ० २७।६ ९-रा० उ० २८।५ १०-रा० ल० ५।११ ११-रा० उ० २६।१६ १२-रा० अर० २९।१११ १३-रा० सु० १४।१ १४-रा० सु० ७।२ १५-रा० उ० ११।६।२८, १६-पा० म० ५।१ १७-रा०



दा ( -ह)	-र	दूर'
चार ( -ब)	-अउपि	चउपि'

हिदायात व्युत्पन्न परप्रत्यय—

य प्रत्यय गता गतनाम विन्त्यत तथा हिदा विन्त्यत धर्मों म जुड़कर नाम धातुओं का निमाण बाग है । —० —आ प्रत्ययों व धातु म नाम धातुओं व्युत्पन्न हैं हैं यथा—

(१) गता	+	परप्रत्यय	नाम धातु
उत्पन्न	—०	उत्पन्न (उत्पन्ना')	मूलकालिक कृन्त रूप
विरोध	—०	विरोध (विरोधि')	मूलकालिक कृन्त रूप
गतमान	—०	गतमान (गतमान)	मूलकालिक कृन्त रूप
गह	—०	गह (गहउ')	मूलकालिक कृन्त रूप
आन्तर	—०	आन्तर (आन्तरी)	मूलकालिक कृन्त रूप
दुलार	—०	दुलार (दुलारी)	मूलकालिक कृन्त रूप
बिगार	—०	बिगार (बिगारी')	मूलकालिक कृन्त रूप
हृष्य ( -हृष)	—०	हृष्य (हृष्य')	मूलकालिक कृन्त रूप
जगम	—०	जगम (जगम')	मूलकालिक कृन्त रूप
(२) गतनाम	+	परप्रत्यय	नाम धातु
भरना	—०	भरना (भरनाई')	मूलकालिक कृन्त रूप
(३) विन्त्यत	+	परप्रत्यय	नाम धातु
अधिक	—आ	अधिका (अधिकार')	मूलकालिक कृन्त रूप
विपुन (-नह)	—आ	ठरना (ठरनाई')	मूलकालिक कृन्त रूप
दृडा	—आ	दृडा (दृडाई')	मूलकालिक कृन्त रूप
विपुल	—आ	विपुला (विपुलाई')	मूलकालिक कृन्त रूप
हिदा विन्त्यत	+	परप्रत्यय	नाम धातु
निअर	—आ	निअरा (निअराया')	मूलकालिक कृन्त रूप

१-रा० बा० २७।५    २-रा० सु० ३८।१२    ३-रा० अयो० २।१५,    ४-रा०  
 अर० २।१६    ५-रा० बा० २९।१५    ६-रा० अयो० २५।१८    ७-रा०  
 उ० १३।१८    ८-रा० बा० ३५।८    ९-रा० ल० ८९।१२,    १०-रा०  
 वि० ५।१८    ११-रा० बा० १२।१    १-रा० अयो० १८।११    १३-रा०  
 बा० ३५९।२०    १४-रा० ल० १८।८    १५-रा० सु० ५६।९    १६-रा० सु० ५६।१  
 १७-रा० वि० १।१०

तुलसी की अवधी रचनाओं में ऐसे शब्द भी उपलब्ध हैं जिनमें पूव प्रत्यय एवं परप्रत्यय दोनों का योग एक ही शब्द प्रकृति के साथ हुआ है। उदाहरणार्थ शब्द इस प्रकार हैं—

पूव प्रत्यय	+	शब्द प्रकृति	+	परप्रत्यय	समा। विशेषण
सु-		-कुमार		-ई	सुकुमारी <sup>१</sup>
सु-		-चाल		-ई	-सुचाली <sup>१</sup>
कु-		चाल		-ई	कुचाली <sup>१</sup>
अ-		विकार		-ई	-अविकारी <sup>१</sup>
अ+वि		नास		-ई	अविनासी <sup>१</sup>
स्व-		-अथ		-ई	स्वारथी <sup>१</sup>
वि-		राग		-ई	विरागी <sup>१</sup>
अ-		भाग		-ई	अभागी <sup>१</sup>
अनु-		राग		-ई	अनुरागी <sup>१</sup>
कु-		सेवा (-सेव)		-क	कुसेवक <sup>१</sup>
अ-		नाथ		-नि	अनाथनि <sup>१</sup>
सु-		करम		-आ	सुरकमा <sup>१</sup>

तुलसी की अवधी के यौगिक शब्द रचना विधान में प्रयुक्त पूव एवं परप्रत्ययों का समाहित योग निम्न चाट द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है—

पूव प्रत्यय	प्रकृति	प्रथम परप्रत्यय	तृतीय परप्रत्यय	उदाहरण
+				स-पूत = सपूत
+				क-पूत = कपूत
+				अनु-राग-ई = अनुरागी
+				कु-चाल-ई = कुचाली
+				सु-सीत-ल-ता-आई = सुसीतलताई
+				सीत-ल-ता = सीतलता
+				निठुर-आई = निठुराई

१-रा० ल० न० १५४, २-रा० अयो० ३१९।१२ ३-रा० अयो० २०।७, ४-रा० बा० २३।१३, ५-रा० ल० ११०।९ ६-रा० ल० ११०।३ ७-रा० ल० ७।१२, ८-रा० ल० १२१।३० ९-रा० बा० ३४६ १०-रा० ल० २८।७, ११-रा० ल० १४।१५ १२-रा० बा० २।२२

आलोच्य भाषा में प्रकृति में तीन परप्रत्ययो तब का योग सम्भव हुआ है किन्तु तीन प्रत्ययो के योग उदाहरण की दृष्टि में नगण्य हैं । सर्वाधिक प्रयोग एक या दो पर प्रत्ययो के योग से सरचित शब्दावली का हुआ है ।

### ३३ सामासिक

दो या दो से अधिक मूल शब्दों के योग से बन बृहत्तर शब्द को समास कहते हैं । सामासिक शब्दों के मध्य कोई सयोजक अथवा विभाजक शब्द नहीं रहता है । अर्थात् जहाँ प्रातिपदिक या धातु प्रत्यय विहीन मूल शब्द रचना तथा प्रत्यय युक्त स्थिति में धौगिक शब्द रचना करते हैं वहाँ दूसरी तरफ़ दो या दो से अधिक प्रातिपदिक अथवा धातुओं सयुक्त होकर बृहत्तर शब्द (समास) रचना करते हैं । आलोच्य भाषा की मूल प्रकृति दो शब्द प्रकृतियों का योग से निर्मित समास की ओर है । किन्तु जहाँ कहीं संस्कृत छाया के दान हात है वहाँ समासों की छटा देखने में आती है ।

दो प्रातिपदिकों के योग से व्युत्पन्न समास इस प्रकार हैं, यथा -

प्रातिपदिक	+	प्रातिपदिक	समास
कवि		कविद	कवि-कविद <sup>१</sup>
भाषा		मोह	भाषा-मोह <sup>१</sup>
प्रीति		रीति	प्रीति-रीति <sup>१</sup>
दुःख		दोष	दुःख-दोष
सुर		भूष	सुर-भूष <sup>१</sup>
सौख्य		रोग	सौख्य-रोग <sup>१</sup>
पितृ		मातृ	पितृ-मातृ <sup>१</sup>
निस		दिन	निस-दिन <sup>१</sup>
असन		वसन	असन-वसन <sup>१</sup>
माय		बाप	माय-बाप <sup>१</sup>
हाट		वाट	हाट-वाट <sup>१</sup>
अस्त्र		शस्त्र	अस्त्र-शस्त्र <sup>१</sup>
नरक		स्वर्ग	नरक-स्वर्ग <sup>१</sup>
नर		नारी	नर-नारी <sup>१</sup>

१-रा० वा० १४।३९ २-रा० कि० ३।३ ३-रा० वा० ३५।१५ ४-रा० वा० ७।६ ५-रा० अर० १२।१०, ६-रा० उ० २०।२० ७-प० म० २२।२-रा० अर० १२।१६ ९-रा० अयो० ३२।७ १०-वरव रा० ५०।१, ११-रा० यो० ११।५ १२-रा० ल १४।२ १३-रा० उ० १२।१९ १४-रा० ० २२।१५ ।

प्रातिपदिक	+	धातु	समास
भू		घर	भूघर <sup>१</sup>
करन <sup>१</sup>		वेघ -	करनवेघ <sup>१</sup> - ।
रजनी		चर	रजनीचर <sup>१</sup>
धातु	+	धातुस	समास
रचि -		पचि	रचि पचि <sup>१</sup>
कह		मुन	कह मुन <sup>१</sup>
उठ		बठ	उठ बठ <sup>१</sup>
हिल		मिल	हिल मिल <sup>१</sup>

अध्ययन की सुविधा के लिये उपयुक्त समास रचना को निम्न वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

१—समस्त पद सज्ञा, २—समस्त पद क्रिया

३—समस्त विशेषण, ४—समस्त पद अव्यय

१—समस्त पद क्रिया—कुछ उदाहरण देखे जा सकते हैं—

असन वसन<sup>१</sup> गुन गान<sup>१</sup>, मोद विनोद<sup>१</sup>

२—समस्त पद क्रिया—कुछ उदाहरण यहाँ दृष्ट्य हैं—

कह मुन<sup>१</sup>, उठ बठ<sup>१</sup>, देत लेत<sup>१</sup>

३—समस्त पद विशेषण—

नील-पीत<sup>१</sup> = नीला पीला

दुइ-दुइ<sup>१</sup> = दो दो

४—समस्त पद अव्यय—

दिनहुँ दिन<sup>१</sup> = दिनादिन

इत उत<sup>१</sup> = इधर उधर

भीतर-बाहर<sup>१</sup> = भीतर बाहर

जहाँ-तहाँ<sup>१</sup> = जहाँ-तहाँ

१—रा० अया० ११७ २—रा० अयो० १०१११ ३—रा० सु० १८१११ ४—रा० अयो० १८११७ ५—रा० अयो०—३१२११८, ६—रा० वि० ९१०, ७—रा० ल० न० १८१३, ८—रा० अयो० ३२४१७, ९—रा० सु० ६०१२६, १०—रा० बा० ३ ०१० ११—रा० अयो० ३१ ११८ १२—रा० वि० ९१२, १३—रा०

आलोच्य भाषा में ऐतिहासिक दृष्टि से निम्नलिखित भेदों के अन्तर्गत रचे जा सकते हैं । सख्या की दृष्टि से तत्सम + तत्सम शब्दों से बने समासों की बहुलता है । कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं यथा—

(अ) तत्सम + तत्सम—

कृपाधाम<sup>१</sup> सुख धाम<sup>२</sup>, सुनवध<sup>३</sup>, वधनिघन<sup>४</sup> गगनचर<sup>५</sup>, राजसमाज<sup>६</sup>  
 ब्रह्म अस्त्र नृपनारी<sup>७</sup> भवताप<sup>८</sup> राजघाट<sup>९</sup>, नृपसमाज<sup>१०</sup>, मुष्टि प्रहार<sup>११</sup>

(आ) तत्सम + अथतत्सम—कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं जैसे—

वृत्तजुग<sup>१२</sup> मुनिपतिनी<sup>१३</sup> गजमुकुता<sup>१४</sup> राजधरम<sup>१५</sup>, मुनिगत<sup>१६</sup>, सुरकाज<sup>१७</sup>  
 अटकोप<sup>१८</sup>

(इ) तत्सम + अथतत्सम—कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं, यथा—

मनिगत<sup>१९</sup> करमबस<sup>२०</sup> तिमनि<sup>२१</sup>

(ई) अथ तत्सम + तत्सम—कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं यथा—

तीरथराज<sup>२२</sup> जनमफल<sup>२३</sup>, गुननिधि<sup>२४</sup> चरनपीठ<sup>२५</sup> गनपति<sup>२६</sup>

(उ) अथ तत्सम + तद्भव—जैसे— राजदुआर<sup>२७</sup> तियरिस<sup>२८</sup>

तद्भव + तद्भव— कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं जैसे—

माइ बाप<sup>२९</sup> हाट बाट<sup>३०</sup> घर घर<sup>३१</sup>

अथ तत्सम + विदेशी—कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—बदीखाना<sup>३२</sup>

विदेशी + विदेशी—गरीब नबाज = दीन बाघु<sup>३३</sup>

अथ प्रक्रिया की दृष्टि से समास रचना विचार-शब्दों की समास रचना में सम्मिलित होने वाले दोनो अवयवों में से कभी दोनो अवयव समानार्थी होते हैं तो कभी उनमें एक व्यतिरेकी या अर्थार्थी हाता है यथा—

- १—रा० ल ११७।२ २—रा ल० १२१।३१ ३—रा० सु० १८।१ ४—रा० सु० १९।६ ५—रा० सु० ३।६ ६—जा० म० ८।७, ७—रा० सु० १९।१९, ८—रा० अर० २५।४, ९—रा उ० १४।२ १०—रा० उ० २९।७ ११—जा० म० ८९।२ १२—रा० कि० ८।६ १३—रा० उ० २३।१२, १४—रा० उ० १३।२६ १५—रा० ल० न० ४।१ १६—रा० अयो० ३१६।१, १७—रा० अयो० ४१।१७ १८—रा० अर० २७।१२, १९—रा० उ० ८१।९ २०—रा० अयो० ६।७, २१—रा० अयो० १२।७ २२—पा० म० ६।२ २३—रा० वा० २।२२ २४—जा० म० ५६।२ २५—रा० सु० १७।५ २६—रा० अयो० ३१६।९ २७—रा० अयो० ६।१० २८—रा० उ० २८।१५ २९—रा० अर० २५।५ ३०—अरव रा० ५०।१ ३१—रा० अयो० ११।५ ३२—पा० म० ३०।१ ३३—रा० उ० ९०।८, ३४—रा० वा० १।१९ ।

(१) समानार्थी (एकार्थी)

कुसल खेम<sup>१</sup>, कवि कोविद<sup>२</sup>, असन, वसन<sup>३</sup>, गिरि मरु<sup>४</sup>, मोद विनोद<sup>५</sup>,  
वाद् विवादु<sup>६</sup>, सुधि बुधि<sup>७</sup>, जीव जतु<sup>८</sup>, मोद प्रमोद<sup>९</sup> आदि ।

(२) अनुकार—बहुर बहोरि<sup>१</sup>

(३) व्यतिरेकी अवधारी—

हरिहर<sup>१</sup>, सुरतर<sup>२</sup>, नर नारि<sup>३</sup>, जलयल<sup>४</sup>, पिता पुत्र<sup>५</sup>, लोग लुगाई<sup>६</sup>

(ब) चर अचर<sup>१</sup>, जह चेतन<sup>२</sup>, शत्रु मित्र<sup>३</sup>, पाप पुण्य<sup>४</sup>, दुख सुख<sup>५</sup>, साधु असाधु<sup>६</sup>

परम्परागत वर्गीकरण—तुलसी की अवधी भाषा में सभी परम्परागत प्रमुख  
समास इस प्रकार हैं—

ऋद्धि सिद्ध<sup>१</sup>, कवि कोविद<sup>२</sup>, सुख दुख<sup>३</sup>, साधु असाधु<sup>४</sup>, खग मग<sup>५</sup>,  
सत्र मित्र<sup>६</sup>

दो से अधिक पदों से विरचित समास, यथा—

साधु असाधु सुजाति कुंजाति<sup>१</sup>, छित जल पावक गगन समीरा<sup>२</sup>

दुल सुख पाप पुण्य दिन राती<sup>३</sup> । माया ब्रह्म जीव जगदीमा<sup>४</sup> ।

सख नरक अनुराग विराग<sup>५</sup> । रधि सिधि सम्पति गिरि गृह<sup>६</sup> ।

गुरु पितृ मातु स्वामि<sup>७</sup> । तप तीरथ भख दान<sup>८</sup> ।

खग मग तस तून गिरि वन वागा<sup>९</sup> । देव दनुज नर नाग खग<sup>१०</sup> ।

(२) तत्पुंष्य समास—कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं—

(अ) कम-मनोहर<sup>१</sup>, बहु-ह समत<sup>२</sup> सन सहित<sup>३</sup>, आदि ।

१-रा० अयो० २४१४, २-पा० म० ८१२, ३-रा० ल० ११७११ ४-रा०  
बा० १२११, ५-रा० बा० ३५०१२३, ६-पा० म० ६५११, ७-पा० म० २९११,  
८-रा० लु० ३१३, ९-रा० बा० ३४६११, १०-रा० ल० २६११३, ११-रा०  
बा० ३१२१, १२-रा० अर० १४११७, १३-पा० म० ५७१२ १४-रा०  
बा० ८१७, १५-रा० अर० १७१९, १६-रा० अयो० १११६, १७-रा०  
अयो० ३२११२२, १८-रा० बा० ७१३३ १९-रा० कि० ७१३५, २०-रा०  
बा० ६१९, २१-रा० बा० ६१९, २२-ग० बा० ७११९, २३-रा० ल० म० २०१४,  
२४-रा० बा० १४१३१, २५-रा० कि० ७१३५ २६-रा० बा० ७११९ २७-रा०  
अयो० ३२११११ २८-रा० कि० ७१३५, २९ रा० बा० ६११०, ३०-रा०  
कि० १११७ ३१-रा० बा० ६१९ ३२-रा० बा० ६१३३, ३३-रा० बा० ६११७  
३४-पा० म० ८१२ ३५-रा० अयो० ३१५१९ ३६-धरख रा० ५२११ ३७-रा०  
अयो० ३१२१४ ३८-रा० बा० ८७१३ ३९-ग० अर० १७१७ ४०-ग०  
बा० ३४८१२ ४१-रा० ल० १११२

- (धा) करण—साच विकल<sup>१</sup>, पूरन काम<sup>२</sup>, मोह जीवन<sup>३</sup> आदि ।  
 (द) -सम्प्रदान—नयन अमिअ, सुवनामृत<sup>४</sup>, चित्रसाला<sup>५</sup> आदि ।  
 (ई)—अपाग्न—जलहीन, घनहीन<sup>६</sup>, पतिहीन<sup>७</sup>, विषय विमुख<sup>८</sup>  
 (उ)—नीन हिन<sup>९</sup>, मुखधाम<sup>१०</sup>, कोप ग्रह<sup>११</sup> जातहित<sup>१२</sup>, छविधाम<sup>१३</sup>  
 (ऊ) अधिकरण—रनधीर<sup>१४</sup> प्रेम मगन<sup>१५</sup>, सनह मगन<sup>१६</sup>, रनिवासु<sup>१७</sup> आदि ।

(३) अव्ययीभाव समास—प्रमुख उदाहरण इस प्रकार हैं—

जयाजागु<sup>१</sup> जयामति<sup>२</sup>, जया धिर<sup>३</sup>, निघरक<sup>४</sup>, निरमय<sup>५</sup>

तुलसी की अवघो म ऐसे भी छंद दृष्टव्य हैं जिनम प्रति का उपयोग न कर मना की ही द्विदक्ति करके अव्ययीभाव समास बनाए गए हैं। सज्ञा की रक्ति मिटान के लिए ही प्रति का उपयोग किया जाता है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं—

निन दिन<sup>१</sup> रोम रोम<sup>२</sup>, घर घर<sup>३</sup> तीर तीर<sup>४</sup>, अग अग<sup>५</sup>

(४) कमधारय समास—कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं—

(अ) विगणण पूर्वपद—बाल विधु<sup>१</sup>, महावष्टि<sup>२</sup>, महाबल<sup>३</sup>, महारस<sup>४</sup>  
 महाधुनि<sup>५</sup>, बक्रगति<sup>६</sup> ।

(आ) विशपणोत्तर पद—पुरुषोत्तम<sup>१</sup>, मूनिवर<sup>२</sup>, नागमहा<sup>३</sup> ।

(इ) उपमान पूर्वपद—कमल कुल<sup>१</sup>

(ई) उपमानोत्तर पद—पद कज<sup>१</sup>, पद सरोज<sup>२</sup> मुख कमल<sup>३</sup> चरण-सरोज<sup>४</sup> चरन नलिन<sup>५</sup> आदि

१-रा० अया० ३९।५	२-रा० अर० ३०।३३	३-रा० वा० २।६	४-रा०
वा० ३।२	५-रा० सु० १३।१३	६-रा० उ० २७।२५,	७-पा० म० ६०।१,
८-रा० कि० १८।१६	९-पा० म० २७।१	१०-जा० म० ४५।१	११-रा०
अर० ८।११	१२-रा० ल० ११।११	१३-रा० अयो० २२।१८,	१४-रा०
वा० २।२९	१५-रा ल ११।१२२	१६-रा० कि० ७।२७	१७-रा०
अर० १०।८२	१८-रा० वा० २५।१५	१९-रा० वा० ३५।६३,	२०-रा०
उ० ६।१	२१-जा० म० २।२	२२-रा० कि० १४।४,	२३-रा० अयो० ४१।१
२४-रा० अर० २९।२	२४-रा० वा० ३६०।७,	२६-पा० म० ११२।२	
२७-पा म० २०।१	२८-रा० उ० २९।७	२९-रा० ल० १५।७	३०-पा०
म० १९।२	३१-रा० कि० १५।१३,	३२ रा० कि० ७।२२	३३-रा० उ० १३।२५
३४-रा० कि० ८।४	३५-रा० अया० ४२।१०,	३६-रा० उ० १३।७	३७-जा०
म० १।१	३८-रा० ११।७	३९-रा० वा० १८।१९	४०-रा० वा० १।१७
४१-रा० वा० १।८	४२-रा० उ १५	४३-रा० उ० १७।८	४४-रा०
४५-रा०			

(५) द्विगु समास—'तिभुवन', 'सतखडा', 'सहस सीस', 'पटकध' आदि ।

(६) बहुव्रीह समास—'नीलकठ', 'दससीसा', 'दसकधर', 'दसानन' आदि ।

तुलसी की अवधी रचनाओं में विगण रूप से 'रामचरितमानस' में संस्कृत के लम्बे-लम्बे समासों का प्रयोग है। 'बरवै रामायण', 'रामलला नहछू', 'जानकी मगल', 'पावती मगल' में इस प्रकार के लम्बे-लम्बे समासों का प्रयोग अप्राप्य है। तुलसी ने लगभग सभी सकार के समासों का प्रयोग पर्याप्त मात्रा में किया है। उनके तत्पुरुष समास व्यापकता एवं जटिलता की दृष्टि से उल्लेखनीय हैं।



४०

तुलसी की अवधी रचनाओं में सज्ञा रूप-सरचना प्रातिपदिका में लिंग-वचन कारक सम्बन्धदर्शी विभक्ति प्रत्ययों के योग से हुई है। आलोच्य सामग्री में सज्ञा रूप-सरचना का स्पष्ट करने के लिये प्रातिपदिक अण तथा विभक्ति-प्रत्ययों के सम्बन्ध में विचार किया जा रहा है। प्रातिपदिक रचना की दृष्टि से ये प्रातिपदिक तीन प्रकार के उपलब्ध हैं—एक यौगिक और सामासिक। एक यौगिक और सामासिक प्रातिपदिकों का सविस्तार विवेचन प्रातिपदिक रचना विधान (विषय क्रम ३) के अंतर्गत किया गया है। अध्ययन की सुविधा के दृष्टि से इसे चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

१—प्रातिपदिक अण २—लिंग ३—वचन और ४—कारक

### ४१ प्रातिपदिक अण

किसी सज्ञा के समस्त रूपों में प्राप्त प्रकृति-तत्त्व (अभिधायवाचक) ही प्रातिपदिक अण होता है। रूप रचना प्रातिपदिक अण में लिंग-वचन-कारक सम्बन्ध दर्शी विभक्ति प्रत्ययों के योग से होती है। अन्य ध्वनि की दृष्टि से प्रातिपदिकों के निम्न प्रकार उपलब्ध हैं—

(१) अ—आलोच्य सामग्री में प्राप्त समस्त सज्ञा शब्दों के लगभग ६०% प्रयोग इसी अण में आते हैं। अनुपात की दृष्टि से बरक रामायण में इनका प्रयोग अपत्याकृत अधिक हुआ है यथा—

तात<sup>१</sup>, राम<sup>२</sup> दान<sup>३</sup> फल<sup>४</sup> नाक<sup>५</sup> रमस<sup>६</sup>

पन (प्रण), राज कुल<sup>७</sup>, नाग<sup>८</sup> बात<sup>९</sup>, हित<sup>१०</sup>

१—रा० सु० ६१५ २—रा० सु० ५७२७ ३—रा० अयो० ८१८ ४—जा० म० ५३२ ५—जा० म० ६६२ ६—रा० वा० १४३ ७—जा० म० ६१२१, ८—रा० अयो० ३२२०, ९—रा० अयो० १५६ १०—रा० सु० ३३३, ११—जा० म० ५८१ १२—रा० उ० १२५३२।

(२) आ--आकारात् सज्ञा शब्दो वा प्रयोग प्रचुर मात्रा मे मिलता है किन्तु अकारात् सज्ञाओं की अपेक्षा इनका प्रतिशत कम है, यथा--

जटा', सुधा', सभा', बविता', कथा', ममता', सारदा', विपदा' ।

(३) इ--इस वग के शब्द भी प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध हैं, यथा--

लटि', छवि', मुनि', सिधि', भूमि', दुलहिनि', मूरति', राति'

(४) ई--ईकारात् सज्ञावा का भी पर्याप्त मात्रा मे प्रयोग हुआ है, यथा--

हाथी', रिस्ती', गाडी', सारथी', जवाली', सखी', चादती', गली'  
झाई', बदेही'

(५) उ--उकारान्त सज्ञाओं की भी अच्छी संख्या मिल जाती है यथा--

गुरु', विद्यु', भृत्यु', प्रभु', मधु', इन्दु'

(६) ऊ-ऊकारात् सज्ञाओं का प्रयोग उकारात् सज्ञाओं की तुलना मे कम है, यथा--

साधू', कद्', बधू', नहारू (बछडा)', नाऊ', नहछ', आँसू'

(७) आ--हियो' (हृदय), वषाजना ' मरामा ' खरो ' (=तिनका या खर)

(८) औ--आलोच्य सामग्री मे एक आघ शब्द उपलब्ध है, यथा--  
समो' (समउ-समय), भी '

ओकारात् प्रातिपत्तिक ब्रजभाषा की प्रकृति के अनुकूल ही प्रयुक्त हुए हैं जिन्हें ब्रजभाषा के ही विस्तृत रूप स्वीकार करना अधिक समीचीन जा पड़ता है ।

- १-रा० कि० ९।६, २-रा० अर० २।१२ ३-रा० ल० न० १८।३ ४--रा० बा० १०।२३ ५--रा० बा० १०।२२, ६--रा० बा० १६।४ ७-रा० ल० न० १।१, ८--रा० उ० १४।२६, ९-जा० म० ५४।१, १०--जा० म० ४४।२, ११--रा० ल० न० १९।४, १२--रा० ल० न० २०।४, १३--रा० व० १७।१४, १४--रा० बा० ३५।०६, १५--रा० अयो० ११।१४ १६--पा० म० ३०।२, १७-रा० ल० न० १६।३, १८-पा० म० ११।१ १९-रा० ल० न० १७।१, २०-पा० म० छ० १३।२ २१-रा० अयो० ३१९।१११ २२-पा० म० १०९।३, २३--वरव रा० ४१।१, २४-पा० म० १०९।२, २५-रा० ल० १२।१० २६-रा० उ० १२।१२१ २७--वरव रा० ४१।२ २८--जा० म० १९।२ २९--रा० सु० ५३।८, ३०--रा० उ० ५।।१ ३१-रा० सु० ३।२२ ३२-रा० उ० १२।४२ ३३--रा० बा० ५।१७ ३४--रा० अयो० १९।१७, ३५--रा० बा० ३५।११५, ३६--रा० अयो० ३६।१६ ३७--रा० ल० न० १७।१ ३८--रा० ल० न० १।२ ३९--रा० अयो० १३।१२ ४०--रा० ज० ८४।२० ४१--पा० म० छ० ९।४ ४२--रा० अयो० ३१३।९ ४३--रा० अयो० ३१४।९, ४४--जा० म० ८६" ४५--रा० ल० न० ८।३ ।

अत्य स्वरान्तर परिवर्तन—

आज्याय मामघी में अत्य स्वरान्तर की स्थिति यही परिवर्तनशील है । अथि कांसन छानानुरोध म तीथ स्वरात् सजाएँ ह्रस्व स्वरान्तर और ह्रस्व स्वरान्तर सजाए तीथ स्वरात् ही गई हैं यथा—

आ > अ गग' भरोस' आस' रस' जमुन' सरित'

वस्तुतः य स्वर आकारान्तर प्रातिपत्तिका ही हैं छानानुरोध स अकारान्तर हो गए हैं ।

अ > आ दासा मोदा' सतीया' मगवाना' गारा' प्रामा' अभिमामा', सप्रामा', शोधा' परिनामा'

उप्युक्त मजा प्रातिपत्तिका मूलतः हैं ता अकारान्तर किन्तु छानानुरोध स अकारान्तर हो गए हैं । इस प्रकार क अकारान्तर रूप तुलसी की अक्षरी रचनामा म मूलतः है । अतएव इन रूपा की गणना अकारान्तर प्रातिपत्तिका क अन्तर्गत ही की जा सकती है ।

तन्मयी वाक्य म ऐसे मजा प्रातिपत्तिका भी प्राप्त हैं जो वस्तुतः हैं अकारान्तर किन्तु कही-कही पर उनका प्रयोग उकारान्तर पर उकारान्तर रूपा म भी हुआ है । ऐसा जान पड़ता है कि अकारान्तर पु० मजा शब्द तत्कालीन जन भाषा (अक्षरी) म उकारान्तर रूप म उच्चरित होत रहेंगे । जिन्हें तुलसी ने अपनी रचनामा म स्थान दिया । यह प्रवृत्ति आज भी प्रवृत्ति म मजबूत है इस प्रकार क प्रयोगों को वक्तव्य प्रयोग माना जा सकता है । य (उकारान्तर घट ही चरणान्तर म आकर छानानुरोध स उकारान्तर मी हा गए हैं यथा—

-अ -उ बचा' सुर' दुख' बीज' समाजु' फल' राव' जतनु'  
स्वारमु', प्रातु' (प्रात) वेपु' नरेमु'

१-रा० अयो० ८७।१०	२-रा० वा० ७।७	३-वस्व रा० ४४।८	४-रा०
अयो० २१।१३	५-रा० अयो० ६९।१	६-रा० वा० ३५।१८	७-रा०
अर० २९।५	८-रा० कि० १८।११	९-रा० कि० १।१६,	१०-रा० उ० ६१।१२
११-रा० सु० १२।२०	१२-रा० सु० ८।	१३-रा० कि० १०।१५,	१४-रा०
कि० ७।५८	१५-रा० सु० १९।६,	१६-रा० अयो० २३।१२	१७-रा०
सु० १४।१३	१८-रा० यो० २१।८,	१९-रा० अयो० १९।१७	२०-रा०
अयो० १९।१२,	२१-रा० अयो० २३।१३	२२-रा० अयो० ०१।१०	३-रा०
अ १ ११।१०	२४-रा० ल० ७।१	२५-रा० अयो० ३१।५६	२६-रा०
प्रयो० ३३।१७	२७-गा० म० ५४।१	२८-रा० अर० २५।१३	

-अ -उ -ऊ प्रतापू', देसू', मीचू' (मत्पु) राजू', नामू', कलेसू'

अकारात सज्ञा प्रातिपदिक वही वही पर इकारात सथा 'वारात' रूप मे भी प्रयुक्त हुए हैं। ऐसा जान पडता हे कि अकारात स्त्रीलिंग सथा शब्द जन भाषा (अवधी) म 'वारात' रूप म उच्चरित हाते रहे हागे, जिह तुलसी ने अपनी अवधी रचनाओ म स्थान लिया। यह प्रवृत्ति आज भी अवधी मे प्राप्त है। इस प्रकार के प्रयोग वैकल्पिक प्रयोग प्रतीत होत हैं। य (इकारात) शब्द ही चरणात मे पढकर छदानुरोध से ईकारात भी हा गए है। अय रचनाओ की अपेक्षा यह प्रवृत्ति मानस' म अधिक व्यापक रूप मे प्राप्त है, यथा--

-अ > -इ फनि, खानि', दुर्लाहनि', मूरि' (जड), मुरि'' (घल), किकिनि''  
-अ > -ई- ई पाती'' (पत्र), करतूती'', देही'' (देह), बहिनी''

ईकारात भज्ञा प्रातिपदिक इकारात हो गए है यथा--

ई > -इ रानि', नारि'', बेरि'', स्वामि', भाइ''

इकारात सज्ञा प्रातिपदिक इकारात हो गए हैं, यथा--

इ > -ई प्रीती'', नीती'', विमूती'', रीती'', रासो'', खरारी'' (दिव)

## ४२ लिंग-विधान

आलोच्य सामग्री मे सज्ञा या ती पुल्लिंग में प्राप्त होती है या फिर स्त्रीलिंग म। इन दोना लिंग के अतगत सम्पूर्ण प्राणिवाचक और अप्राणिवाचक सज्ञाएँ आती हैं। नसर्गिक लिंग विधान का नितात अभाव है। लिंग निर्धारण मे कोई निश्चित नियम नहीं बनाए जा सकते। फिर भी दो आधार बनाए जा सकत है। पहला है शब्दगठन अर्थात अत्य स्वरो के आधार पर कुछ लिंगाभास मिल जाता है और दूसरा है प्रयोग अर्थात वाक्यगत प्रयोगों के आधार पर लिंग का पता चलता है।

अकारात (या व्यञ्जनात) सज्ञाओं का लिंग निर्धारण करना अति दुष्कर है। इस प्रकार की सज्ञाएँ दाना लिंग म ही पर्याप्त मात्रा मे उपलब्ध हैं।

१-रा० वा० २४।१२,	२-रा० अयो० ८९।१	३-रा० वा० १।१२	४-रा०
अयो० ४२।१,	५-रा० वा० २६।११	६-रा० अयो० ७५।१५	७-पा० म० ६०।१
८-रा० कि० १।२,	९-जा० म० ५८।२	१०-रा० अयो० ३१-१।२८	११-रा०
अयो० ३१८।१७	१२-रा० ल० न० ११।३	१३-रा० सु० ५२।१५	१४-रा०
अयो० १५।११	१५-रा० वा० ३१०।२	१६-रा० अर० १७।५,	१७-रा०
अयो० २५।२१,	१८-रा० ल० १६।१	१९-रा० अयो० १४ १९,	२०-रा०
वा० १५।७	२१-रा० ल० न० १२।४	२२-रा वा० २८।०	२३-रा०
अर० १७।४	२४-रा० अयो० ३१५।१४,	२५-रा० वा० ३००।२	२६-रा०
वा० २६।२	२७-रा० कि० २९।१५।		

उदाहरणार्थ—

अकारान्त पुल्लिङ्ग सत्ता रूप—

जल<sup>१</sup> बल<sup>१</sup> नम<sup>१</sup>, घेघ सर<sup>१</sup> जग<sup>१</sup> नरेग<sup>१</sup>

अकारान्त स्त्रीलिङ्ग सत्ता रूप—

सेज<sup>१</sup>, सीय<sup>१</sup> जमाल<sup>१</sup> बरान<sup>१</sup> मीन<sup>१</sup> ।

आकारान्त (—आ) सत्ताएँ प्रायः पुल्लिङ्ग हैं (स्त्रीलिङ्ग में भी प्राप्त होती हैं) यथा—  
मुता<sup>१</sup> मता<sup>१</sup> माया<sup>१</sup> ज्या<sup>१</sup> माया<sup>१</sup> ममता<sup>१</sup> मुद्रिका<sup>१</sup>

आन्ति तमम गन्त जयकि—इत्यादि अक्षर होने वाली मशायें प्रायः स्त्रीलिङ्ग हैं यथा—मलिनिया<sup>१</sup> वरिनिया<sup>१</sup> नउनिया<sup>१</sup> आन्ति ।

उकारान्त और ङकारान्त सत्ताएँ प्रायः पुल्लिङ्ग हैं जबकि इकारान्त और ईकारान्त सत्ताएँ प्रायः स्त्रीलिङ्ग हैं । ब्रज भाषा के प्रभाव से जो ओकारान्त शब्द प्रयुक्त हुए हैं वे सब पुल्लिङ्ग ही हैं । वाक्या में क्रिया रूपा द्वारा सत्ताया का लिङ्ग स्पष्ट होता है यथा—

तेहि निसि नौद परी नहि काहू ।<sup>१</sup> मगल रचना रची बनाई ।<sup>१</sup>

मुनि मन कीह प्रणाम बचन आसिस दी ।<sup>१</sup>

अम कहि कुटिल मई उठि ठाढ़ी ।<sup>१</sup> कपट छुरी उर पाहन टई ।<sup>१</sup>

सिद्ध बदन होम साया होन लागी भावरी ।<sup>१</sup>

बर दुलहिनिहि लिबाइ सखी कोहबर गई ।<sup>१</sup>

नाउनि अति गुनखानि ती बगि बोलाई हो ।<sup>१</sup>

मानहु रोष तरगिनि जाती ।<sup>१</sup>

सामान्य रूप से कर्ता के लिङ्ग के अनुसार क्रिया का लिङ्ग परिवर्तित होता है किन्तु 'मानस में एक स्थल पर कर्ता स्त्रीलिङ्ग में होने हुए भी क्रिया पुल्लिङ्ग में है ।

- १-रा० वा० ८१२ २-रा० वा० ८१२ ३-रा० अर० १२१२९ ४-रा० वा० ११८  
५-रा० कि० १६१९ ६-रा० वा० ५११२ ७-रा० अयो० ४११ ८-रा०  
अयो० ३२६१९ ९-जा० म० १२११२, १०-जा० म० १२०११ ११-जा० म०  
छ० १५११ १२-पा० म० ६७११ १-रा० वा० ५८१२ १४-रा० अर० १११६  
१५-रा० वा० १४११० १६-रा० मु० ५२११४, १७-रा० अर० १५१३ १८-रा०  
ल० १४१११ १९-रा० अर० १३११ २०-रा० ल० न० ८१ २१-रा० ल०  
न० ८१३ २२-रा० ल० न० ८१४ २३-रा० अयो० ३७११५ २४-रा०  
वा० ४५१३ २५-पा० म० १११२, २६-रा० अयो० ३१११ २७-रा० अयो० २२१०  
२८-जा० म० छ० १८१३ २९-जा० म० १४६१२ ३०-रा० ल० न० १०११,  
३१-रा० अयो० ३४१२ ।

इसका प्रमुख कारण यही जान पड़ता है कि प्राचीन जवही में कमणि प्रयोगो मे कम के अनुसार ही क्रिया का रूप परिवर्तित होता रहा होगा, यथा—

मम वचन जब सीता बोला<sup>१</sup> ।

इस प्रकार यदि क्रिया रूप स्त्रीलिंग (प्राय इकारात् अथवा इकारात्) है तो स्पष्ट हो जाता है कि सज्ञा स्त्रीलिंग है अथवा पुल्लिंग, यथा—

अस कहि रघुपति चाप चढावा<sup>२</sup> । प्रभु सुभाव परिजनिह तुतावा<sup>३</sup> ।

इहा अर्घनिनि रावनु जागा<sup>४</sup> । देव ह समाचार तब पाए<sup>५</sup> ।

इसके अतिरिक्त विशेषण रूपो से भी लिंग का स्पष्टीकरण हाता है—

स्त्रीलिंग—रजनी अधिआरी<sup>६</sup> घटा अतिकारी<sup>७</sup>, ऊँचि रुचि<sup>८</sup>,

बीचि टहल<sup>९</sup>, राति निमली<sup>१०</sup> प्रीति गाढी<sup>११</sup>

कया पावनी<sup>१२</sup>, मति पोची<sup>१३</sup>, जीम विचारी<sup>१४</sup>, प्रीति—

थोरी<sup>१५</sup>, जीम दूजी<sup>१६</sup>

पुल्लिंग—पडित मू<sup>१७</sup>, पद पावन<sup>१८</sup> दीन वचन<sup>१९</sup>, कुश गान<sup>२०</sup>, काल कराल<sup>२१</sup>

पुरुष वाचक सम्बन्ध कारकीय रूपो (सवनाम) से भी सज्ञाओ का लिंग स्पष्ट होता है । अनुपात की दृष्टि से मानस मे यह प्रवृत्ति अधिक पाई जाती है । मोरि—मोरी (छदानुरोध से), तोरि—तोरी (छदानुरोध से), राउरि—राउरी (छदानुरोध से), तुम्हारि—तुम्हरी—तुम्हागी आदि से स्त्रीलिंग सज्ञाओ का बोध होता है, यथा—

मुनहु प्राण पति बिनती मोरी<sup>२२</sup> । माया भनित मोरि मति मोरी<sup>२३</sup> ।

तुम अति कीह मोरि सेववाई<sup>२४</sup> । सुप्रीवहु मुधि मोरि विसारी<sup>२५</sup> ।

चल न चातुरी मोरि<sup>२६</sup> । अतकाल गति तोरि<sup>२७</sup> ।

मुनु मथरा बात फुरि तोरी<sup>२८</sup> । बहु तिय होहि मयानि मुनहि सिख राउरि<sup>२९</sup> ।

राम निकाइ रावरी है सबही का ठीक<sup>३०</sup> ।

- १—रा० अर० २८।९    २—रा० सु० ५८।११    ३—रा० उ० १९।१०    ४ रा० ल० १००।१३,    ५—रा० वा० ८८।७    ६—रा० अर० ४४।१४    ७ रा० ल० १३।१०    ८—रा० वा० ८।१३    ९—रा० उ० १८।३    १०—रा० उ० १००।२  
११—रा० सु० १४।१    १२—रा० उ० १।११    १३—रा० अयो० १२।१    १४—रा० सु० ७।२,    १५—रा० वा० २।२।१६,    १६—रा० ल० १६।२    १७—रा वा २८।१२,    १८ जा० म० २।२    १९—जा० म० २६।२    २० रा० उ० १।२२  
२१—बरवै रा० ४।११,    २२—रा० ल० १४।१४    २३—रा० वा० १५।१३,    २४ रा० उ० १६।७    २५—रा० वि० १८।७    २६—रा वि० ९।२२,    २७—रा वि० ९।७४  
२८—रा० अयो० २०।०    २९—पा० म० ६३।१,    ३०—रा० वा० ७।७१ म

हैं तुम्हारे मेवा बस राज । जरि तुम्हारे चह सबनि उखारो  
 नाथ सकल सम्पदा तम्हारा । जानउ महिमा बछुक तुम्हारी ।  
 तम्हारी कृपा सुख सोउ मोर । मरजादा पुनि तुम्हरी ही ही ।  
 इसी प्रकार मोर—मोरा मोर तार—तोरा (छानुरोण स) तार राउर,  
 तुम्हारे—तुम्हारा आदि से पुल्लिङ्ग सजाओ का पता चलता है यथा  
 मोर अहार जहा लगी चारा । मोर याउ मैं पूछउ साई ।  
 जानत प्रिया एक मन मारा । प्रियाहोन डरपत मन मोरा ।  
 मैं भवक रघुपति पति मोर । कहु कछु पाप न तार ।  
 जात पुर दहउ हतउ सुत तोरा । मा विधि घटब काज मैं तारे ।  
 राजन राउर नामु जसु । गिरिजाहू लय हमार जितनु सुख ।  
 नर कपि भालु अहार हमार । आवा काल तुम्हार ।  
 साथ ही सम्बन्ध कारक क परसर्गों द्वारा भी लिंग वाच हाता है यथा—  
 स्थावाचक—वनक पकज की कली । सोइ करतूति विभीक्ष्ण केरी ।  
 गिरिजा रघुपति क यह रीति । सूपनिखा रावन क वहिनी ।  
 पुल्लिङ्ग वाचक—रघुपति कर सदेसु अब ।  
 समय मिधु गहि पद प्रभु कर । धुआ दलि खर दूपन केरा ।  
 पिपु के दत कपिहू तव जान । ताके भय रघुवीर कृपाला ।  
 पुल्लिङ्ग सजाओ का स्त्रीलिंग बनात समय जनकी अन्त्य ध्वनिया म अनक  
 प्रकार के परिवर्तन होते हैं जिन्हें इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है—

१-जाकारात् पुं सजाओ म—आ क स्थान पर निम्न प्रत्यया का योग  
 दया या सनता है—  
 - सखा — सखी दुरा — दुरी

- १-रा० अया० २१।१६      २-रा० अयो० १।१५      -रा० वा० ३६०।११
- ४-रा० अर० १।१०      ५-रा० वा० १४।२१      -रा० सु० ५९।१      ७-रा०
- सु० ६।५      ८-रा० कि० २।१५      ९-रा० सु० १५।२      १-रा० वि० १४।७
- ११-रा० अर० ११।११      १२-रा० अया० ५।१८      १३-रा० सु० ५६।१३
- १४-रा० कि० ८।२      १५-रा० अयो० ३।१७      १६-रा० म० १८।२      १७-रा०
- १८-रा० वा० १५।२०      १९-रा० सु० ४२।२०      २०-रा० ल० १०९।३२      २०-रा
- वा० २९।१३      २१-रा० ल० ११।१      २२-रा० अर० १७।१      २३-रा०
- सु० १५।१      २४-रा० सु० ५९।१      २५-रा० अ० २१।९      २६-रा० सु० ५।३३
- २७-रा० कि० ६।२३      २८-रा० म० १४।५

- इनि दूल्हा - दुल्हनि<sup>१</sup>  
 -इनी लरिका (लडवा) - लरिबिनी<sup>१</sup>  
 -इयाँ .. बहना - बहनियाँ<sup>१</sup>

२-ईकारा त पुल्लिग सनाओ मे 'ई' का '-इ' मे परिवर्तन होकर आगे निम्न प्रत्ययो का योग होता है, यथा-

- नि दरजी - दरजिनि<sup>१</sup>, तँबोली - तँबोलिनि<sup>१</sup>  
 मोची - मोचिनि<sup>१</sup> जोगी - जोगिनि<sup>१</sup>  
 -निया माली - मलिनिया<sup>१</sup>

३-ऊकारान्त पुल्लिग सनाओ मे 'ऊ' का परिवर्तन 'उ' मे होकर आगे 'नि' या निया प्रत्यय का योग होता है-

- नि नाऊ - नाउनि<sup>१</sup>  
 -निया नाऊ - नउनिया<sup>१</sup>

४-अकारा त पुल्लिग सज्ञाओ मे 'अ' क स्थान पर निम्न प्रत्यया का याग प्राप्त है यथा-

- इ देव - देवि<sup>१</sup>, कुमार - कुमारी<sup>१</sup>  
 कुअर - कुअरि<sup>१</sup>  
 -ई मराल - मराली<sup>१</sup>  
 सजन - सजनी<sup>१</sup>, चांद - चादनी<sup>१</sup>  
 -इनि अहीर - अहीरिनि<sup>१</sup>  
 लोहार - लोहारिनि<sup>१</sup> पिसाब - पिसाचिनि<sup>१</sup>  
 -आई लोग - लीगाई<sup>१</sup>  
 -इनी सेवक - सेवकिनी<sup>१</sup>  
 -इया उजिअर - उजिअरिया<sup>१</sup>, अटहार - अनुहरिया<sup>१</sup>  
 -नि पहराव - पन्निराबनि<sup>१</sup>  
 -इत साँप - साँपिनि<sup>१</sup>  
 -आ प्रिय - प्रिया<sup>१</sup>

१-पा० म० ८०।१ २-रा० बा० ३५५।१५ ३-रा० ल० न० ८।१ ४-रा० ल० न० ८।१ ५-रा० ल० न० ६।१, ६-रा० ल० न० ७।१, ७-रा० ल० ८८।१३ ८-रा० ल० न० ७।३, ९-रा० ल० न० १०।१ १०-रा० ल० न० ८।३ ११-रा० बा० ४८।१, १२-पा० म० ७० ५।२ १३-पा० म० ९।१, १४-रा० अयो० २०।८, १५-रा० अयो० १३।१ १६-बरवै रा० ४ १।१, १७-रा० ल० न० २।३, १८-रा० ल० न० ५।२, १९-पा० म० ५०।२ २०-रा० अयो० ११।६ २१-रा० ल० ३४।९ २-बरवै रा० ३७।१ २-बरवै रा० ३।२ २४-जा० म० १९१।१, २५-रा० अयो० १३।१७ २६-रा० अयो० ३२ १८।



### ४३ वचन-विधान

वचन विधान की दृष्टि से आलोच्य भाषा में सज्ञाओं के दो रूप मिलते हैं । एक रूप से एकत्व का बोध होता है तो दूसरे से एक से अधिक का । इही दोनों रूपों का क्रमशः सज्ञा का एक वचन और बहुवचन रूप कहा जा सकता है । यहाँ यह उल्लेखनीय है कि सज्ञा-रूपा में पाए जाने वाले वचन के विभक्ति-प्रत्ययों का कारक-सम्बन्ध का घातन विभक्ति-प्रत्ययों से पथक करके नहीं देखा जा सकता है । अतएव इस प्रकार के विभक्ति प्रत्ययों को कारक-विधान (४४) के अंतर्गत स्पष्ट किया जा रहा है ।

कही-कही विशिष्ट विधा से अर्थात् पथक से गन-गण लोग लोग आदि शब्द जोड़ कर भी एक वचन से बहुवचन का बोध कराया गया है यथा—

(१) गन-गण—आलहि वांस के माडव मनिगन पूरन हो ।<sup>१</sup>

मुदित जनकपुर परिजन नपगन लाजहि ।<sup>२</sup>

प्रम मगन प्रमत्तगन तन न संभारहि ।<sup>३</sup>

(२) लोगू— सुनि कठोर कवि जानहि लोगू ।<sup>४</sup> (कवि लोग)

इसके अतिरिक्त निम्न प्रणालियों से भी बहुवचनत्व का घातन किया गया है यथा—

(१) इवारागत सजाओ में अनुस्वार के योग से यथा—

मगउ निधान विलोकि लायन लाह लूटति नागरी ।<sup>५</sup>

बहुरि बहुरि भेंटहि महतारी ।<sup>६</sup> बलिहि वरात मुनत सब रानी ।

सिद्धर वदन होम लावा होन लागी भावरी ।<sup>७</sup>

(२) पुनरुक्ति द्वारा यथा—गउ गह प्रति मनि दीप विराजहि ।<sup>८</sup>

ऊपर लोक अग अग विश्रामा ।<sup>९</sup>

समाचार सब सखि ह जाइ घर घर कहे ।<sup>१०</sup>

लिन लिन प्रति अति हाहि सोहाए ।<sup>११</sup>

राम रोम छवि निदति दाम मनोजनि ।<sup>१२</sup>

मुख समाज लखि गनि ह आनद छिनु छिनु ।<sup>१३</sup>

१—रा० ल० न० ३।<sup>१</sup> २—जा० म० ९७।२ ३—रा० म० ३६।२ ४—

रा० अयो० २१।४ ५—जा० म० छ० १२।१, ६—रा० वा० ३३।१५ ७—

रा० वा० ३३।३ ८—जा० म० छ० १८।३ ९—रा० उ० १७।१६ १०—रा०

ल० १५।२, ११—पा० म० ३०।१ १२—रा० अर० १३।४ १३—जा० म० ९५।१,

१—जा० म० २१०।२ ।

- (३) परसर्गों द्वारा—पर हित हानि लाभ जिह वेरें ।  
 सिय भुबुर के भए उनीदे नैन । ए किरोट दसक धर केरें ।
- (४) विशेषणों द्वारा यथा—किए सकन नर नारि विसाकी ।  
 बरषहि द्विविध प्रसून । रूप धरें जनु चारिउ बदा ।  
 मुजस होहि तिहुं पुर अति पावन ।  
 दह दिसि घाबहि काटिह रावन ।  
 तनु पोषक नारि नरा रागरे ।
- (५) क्रिया रूपों द्वारा, यथा—लै लै नाउं सभासिन मगल पावहि ।  
 बाजहि निसान मुगान नभ चडि बसह विषु भूपन चले ।  
 बरषहि सुमन धय जय करहि ।  
 वर दुलहिनिहि लिवाइ सखी काहवर गई ।  
 मन भावत बिधि कीह मुदित मामिनि मई ।  
 बार बार भेटहि महतारी ।  
 राजन नीहें हाथी रानिह हार हो ।

## ४४ कारक विधान

४४० कारक संज्ञा (अथवा सवनाम) का वह रूप होता है जो वाक्य में किसी अन्य पद से अपना संबंध प्रकाशित करता है। आलाच्य भाषा में संज्ञारूप दो प्रकार के मिलते हैं। अस्तु संज्ञाओं के दो कारक हैं—(१) मूल और (२) तियक। निर्विभक्तिक रूपों को मूलकारक के अंतर्गत स्थान दिया गया है जबकि अन्य रूपों (परसर्ग रहित या परसर्ग सहित) का तियक कारक में। इन दोनों प्रकार के कारक-रूपों के द्वारा वाक्य में अनेक प्रकार के सम्बन्ध प्रकट किए जाते हैं यथा—वत्त्व, कर्मत्व, करणत्व आदि। निम्न विषयक्रम में उपर्युक्त कथन को सीताहरण स्पष्ट किया जा सकता है—

### ४४१ मूल रूप (निर्विभक्तिक प्रयोग)

ऐसे रूप जिनमें साकारिक दृष्टि से विभक्तियों (व्याकरणिक प्रयोगों) का योग नहीं जान पड़ता है उन्हें निर्विभक्तिक मान कारके प्रार्तिपदिका में परिगणित

१—रा० वा० ४।३    २—वरव न० १९।२,    ३—रा० ल० ३।१९    ४—रा० उ० ६।१२  
 ५—जा० म० ११२।१    ६—रा० उ० ३२।९    ७—रा० ल० ७।१६  
 ८—रा० ल० ९६।९    ९—रा० उ० १०२।१९    १०—जा० म० १४३।१    ११—  
 पा० म० छ० १२।१    १२—पा० म० छ० १२।२    १३—जा० म० १४६।२,  
 १४—जा० म० १४६।१    १५—रा० वा० ३३७।१२,    १६—रा० ल० न० १६।३

कर लिया गया है यद्यपि ऐतिहासिक दृष्टि से इस प्रकार के प्रयोग सविभक्तिक ही रहे हैं । जहाँ तक कारक सम्बन्ध का प्रयोग है निविभक्तिक प्रयोग से मुख्यतः कर्ता और कर्मी-कर्मि कर्म का ही स्पष्ट ज्ञान है, कम छन्दानुरोध से जहाँ परसंग लान मिलता है वहाँ अथ कारक सम्बन्ध की अभिव्यक्ति सम्बन्धित परसंगों की याचना करने पर ही होता है और इस प्रकार के परसगाकाशी निविभक्तिक प्रयोग या सविभक्तिक प्रयोग नियम के अन्तर्गत विन्ययित हुए हैं ।

मल रूप का कर्ता एवं कर्म में प्रयोग—

(क) कर्ता—मानहु ममर मुर जय पाई ।'

मप दिगकन रामहि ।' रामचन्द्र बठहि मिपासन ।'

प्रन प्ररित लछिमन पन्निराए ।' बर वरति न ततकया ।'

बचन न आवत ।' नृपति कीह सनमान ।

मुनि जतनु कराही ।' मुनिपद कमल पर डी माइ ।'

सुत विलोकि हरपी महतारी ।' सुनि महिमा रातिह धारजु आयउ ।''

(ख) कर्म—(प्राय अचेतन सत्त्वों का प्रयोग)

बचन बाल दीन दयाल ।' कही कथा मर सगति जस ।''

देसहु आपनि मूरति ।' छवि दखि मदन भण पुरजन ।''

दिनती सचिव करहि कर जोरी ।'' रिप रन जीति सुजस सुर गायउ ।'

चेतन सत्त्वों का प्रयोग—

तुम्ह देव कप लु रघुराई ।' मिथ समिर मुनि सात ।''

दइ जनक तानिहु कुअर कुअरि याहि ।'

पितरि जुयाल हन बलि साई ।''

(ग) सम्बन्धित— मत्ता का यह वह रूप है जिनमें प्राणी विगप यत्नाकत्ता भावुकतावग अचेतन पदार्थों का भी सम्बन्धित किया जाता है । विगप महत्वपूर्ण बात यह है कि उसक साथ त्रिस्मयादि वाक्य चिह्नों का प्रयोग तथा कारक चिह्नों का पणत अभाव होता है । तुलसी की अवधी रचनाओं में सम्बन्धित का व्यक्त करने

१—रा० वा० ३५०।१ २—जा० म० ५७।१ —रा० उ० १०।१० ४—

रा० उ० १७।१३ ५—रा० ल० १११।३१ ६—रा सु० १४।१३ ७—जा०

म० १।१० ८—रा० कि० १०।५ ९—रा० अर० १२।१९ १०—रा० ल० १२।११

११—जा० म० ७८।१ १२—रा० ल० ११३।४४ १३—रा० सु० १।१२ १४—

बरब० रा० १८।१०, १५—जा० म० ५५।१ १६—रा० अया० ५।९ १७—रा०

उ० १० १८—रा० उ० १।१६ १९—पा० म० ७५।१ २०—जा० म० १७।२

२१—रा० लयो० ८३।९

की दो प्रकार की प्रवृत्तियाँ दृष्टिगोचर होनी हैं—(अ) व स्थल जहाँ सस्मृत सनारूपों का प्रयोग हुआ है—प्रायः ऐसे स्थलों पर सना के मन्त्रों को निकृष्ट न कर उनके पूव रे री हा, हे ए आदि सम्बोधन बोधक शब्दों का प्रयोग हुआ है। (ब) दूसरे व स्थल जहाँ केवल मूल रूप में ही प्रयुक्त हुए हैं। उक्त दोनों प्रवृत्तियाँ के उदाहरण क्रमशः इस प्रकार हैं—

(अ) हे—हे राग मृग ।<sup>१</sup>

हे विधि दीन बहु रघुराया ।<sup>२</sup> हे मधुकर धेनी ।<sup>३</sup>

हा— हा गुन खानि जानकी सीता ।<sup>४</sup> हा लछिमन तुम्हार नहि दाया ।<sup>५</sup>

हा रघुकल सरोज तिन नामक ।<sup>६</sup> हा जग एक वीर रघुराया ।<sup>७</sup>

रे र कपि बबर खव सब ।<sup>८</sup> र कपिपात बोलु सभारी ।<sup>९</sup>

राम मनुज बस रे मठ बगा ।<sup>१०</sup>

रे रे—रे रे दृष्ट ठाढ किन होई ।<sup>११</sup>

सना के मूलरूप का प्रयोग—

राम कहा प्रनाम कर सीता ।<sup>१२</sup> अब घर जाहु सखा सब ।<sup>१३</sup>

मित प्रद सबु सुनु राजकुमारी ।<sup>१४</sup>

सिय तुव थग रग भित्ति अधिक उदोत ।<sup>१५</sup>

सुनहु प्रानपति बिनती मोरी ।<sup>१६</sup> रानी कहहि बिलोकहु सजनी ।<sup>१७</sup>

अगद कहहि सुनहु दनुमना ।<sup>१८</sup> जनम जनम रघुनदन तुलसी देहु ।<sup>१९</sup>

कतिपय स्थलों पर मस्मृत से प्रभावित रूप भी प्रयुक्त हुए हैं यथा—

सीत पुत्रि करसि जनि आता ।<sup>२०</sup>

धिग धिग जीवन दव सरीर हरे ।<sup>२१</sup> जय राम सदा मुख घाम हरे ।<sup>२२</sup>

भव वारन दारन सिंह प्रभो ।<sup>२३</sup> गुन सागर नागर नथ विभो ।<sup>२४</sup>

८४२—नियक रूप (तियक कारक)—मूल रूपों के अतिरिक्त अन्य प्रकार के समस्त रूपों का तियक माना गया है। इन रूपों की सामान्य विशेषता

- १—रा० अर० ३०।३३ २—रा० अर० १०।७ ३—रा० अर० ३०।३३ ४—रा० अर० ३०।१३ ५—रा० अर० २१।५ ६—रा० अर० २१।४ ७—रा० अर० २१।१ ८—रा० ७० २५।१९ ९—रा० ल० २१।१ १०—रा० ल० २६।९ ११—रा० अर० २१।२१ १२—रा० ल० १२०।१०, १३—रा० ल० १७ १४—रा० ल० ८।१५ १५—वरव रा० १०।१ १६—रा० ल० १४।४ १७—रा० बा० ३५।६ १८—रा० ल० ११।२० १९—वरव रा० ६८ २ २०—रा० अर० २१।१७ २१—रा० ल० ११।३५ २२—रा० ल० ११।१७, २३—रा० ल० ११।१० २४—रा० ल० ३००

यह है कि द्वाका प्रयाग परसर्गों के गाय होता है । परसर्ग योजना के सम्बन्ध में यह तथ्य उल्लेखनीय है कि कर्ता को छोड़कर अन्य कारक सम्बन्धों की अभिव्यक्ति के लिए प्रायः परसर्ग याचना का आश्रय लिया गया है । परसर्ग रहित और परसर्ग सहित प्रयोगों का दखकर तत्कालीन प्रवृत्ति के सम्बन्ध में हम में निष्कण निकाल सकते हैं—(१) यद्यपि परसर्ग प्रयोग का प्रवृत्ति का आरम्भ हुआ चुका था किन्तु फिर भी यह आवश्यक था कि परसर्गों का प्रयोग कर के ही कारक सम्बन्ध प्रकाशित किए जायें । वाक्य गठन में कारक सम्बन्ध स्पष्ट प्रकाशित हो सकते हैं अर्थात् बकल्पिक प्रयोग भी हो सकते थे । (२) वस्तुतः परसर्ग प्रयोग की प्रवृत्ति का प्रचलन था जहाँ कहीं परसर्ग रहित प्रयोग मिलते हैं वहाँ परसर्गों का जोष छानानुरोध से हुआ है क्योंकि सम्बन्धित परसर्गों की योजना किए बिना कारक सम्बन्ध स्पष्ट नहीं होते हैं और (३) विभक्तियों (व्याकरणिक प्रत्ययों) के योग से भी विविध प्रकार के कारक सम्बन्ध स्पष्ट किए गए हैं । इस प्रकार के प्रयोग सश्लिष्ट है जबकि उपयुक्त प्रयोग विश्लिष्ट है । ये सश्लिष्ट प्रयोग प्रायः परसर्ग रहित मिलते हैं । आलोच्य सामग्री में यत्र तत्र परसर्ग रहित प्रयोग भी सुलभ हो जाते हैं । निम्न विषय ब्रह्मो में स्पष्टीकरण किया जा रहा है ।

४४२१ परसर्ग रहित प्रयोग (विश्लिष्ट रूप) —

एकवचन—तुम्हरी कृपा सुलभ सोउ मार ।<sup>१</sup> (करण)

राम कृपा सासहि सब रोगा ।<sup>२</sup>(करण) गावत गीत मनोहर बानी ।<sup>३</sup>(करण)  
प्रभु प्रसाद सिव सबहि निबाही ।<sup>४</sup>( ' ) जो जगु जोगु भूप अभिपका ।<sup>५</sup>(सम्प्रदान)  
प्रभु के वचन सीस धरि सीता ।<sup>६</sup>(अधिकरण)

फिरहि भवन प्रिय आसिस पाई । ( ' )

राउर नगर बालाहल होई । ( ) जानि सगुन मन हरवि अति ।<sup>७</sup>(अधिकरण)  
हरवि नगर निसान बहु बाजे ।<sup>८</sup>( ) प्रवसि नगर कीज सब बाजा ।<sup>९</sup>( ' )

तुलसी ने सर्वाधिक प्रयाग सम्बन्ध रूपों का किया है । तत्परूप समास की सम्भावना के कारण सम्बन्ध कारक के निविभक्तिक रूपों के स्पष्टीकरण में दुरुहता उत्पन्न हो गई है—

देखी नयन स्वाम भृदगाता ।<sup>१०</sup>(सम्बन्ध) राम छवि नि-ति ।<sup>११</sup>(सम्बन्ध)

१—रा० वा० १ १२१, २—रा० उ० १२२।९ ३—रा० वा० २४।३, ४—रा० अया० ४।७ ५—रा० अयो० ६।८ ६—रा० ७० १०९।१ ७—रा० अया० १६।५  
८—रा० अयो० १।० अयो ९—रा० उ० १।४४ १०—रा० उ० ९।८ ११—रा०

— १।१ १२—रा० ल० १०८।२ १३—जा० म० ९५।१ ।

राम कृपा नासहि । <sup>१</sup>	(सम्बध)
गगा जल कर लसत । <sup>२</sup>	( " )
पुर लोग राम तन चितवहि । <sup>३</sup>	( " )
बहुवचन—चरन बदि पायोधि सिधावा ।	( कम )
हृदय सुमिरि सब सिद्ध बोलाई । <sup>४</sup>	( " )
दइ जनक तीनिहूँ कुअरि कुअर । <sup>५</sup>	( " )
मनिगत बसन विमान भराया ।	( वरण )
मरिगे रतन पदारथ्य सूप हजार हो । <sup>६</sup>	( " )
चहुँ दिसि तिन्हवे उपवन सुंदर । <sup>७</sup>	(अधिकरण)
परसग रहित प्रयोग (संश्लिष्ट रूप)—	
(१) एकवचन—राजहि तुम्ह पर प्रेम विसयी । <sup>१</sup>	(=राजा का) कर्ता
अर्षहि लोचन लामु सोहावा । <sup>२</sup>	(=अर्ष को) कर्ता
शरिहि बात पितहि दुख मारी । <sup>३</sup>	(=पिता को) कर्ता
चोरहि चाँदनि राति न भावा । <sup>४</sup>	( कर्ता )
देखत रामहि मए सुखारे । <sup>५</sup>	( कम )
तव लछिमन सीतहि लै आए । <sup>६</sup>	( " )
कुबरिहि रानि प्रानप्रिय जानी । <sup>७</sup>	( ' )
रानिहि जानि ससोच । <sup>८</sup>	( ' )
हृदय आउ सिय राम धरे धनु मायहि । <sup>९</sup>	( " )
समु समय तेहि रामहि देखा । <sup>१०</sup>	( ' )
सोइ सिव काग भमुडहि दीहा । <sup>११</sup>	( " )
विधिहि मनाव राजु मन माही । <sup>१२</sup>	( " )
गिरिजहि लगे हमार जिवनु । <sup>१३</sup>	( " )
रु गयउ रामहि । <sup>१४</sup>	( " )

१--रा० उ० १२२।९ २--रा० ल० न० ३।३ ३--जा० म० ८०।१ ४--रा० मु० ६०।१६ ५--रा० बा० २०७।१/ जा० म० १७।१ ७--रा० ल० ११७।६ ८--रा० ल० न० १६।४ ९--रा० न० २९।८, १०--रा० बा० ३५०।४, ११--रा० बा० ०३।२ १२--रा० अया ४२।११, १३--रा० अयो० ११।१४ १४--रा० बा० ३४।१ १५--रा० अर० ०१।२, १६--रा० अयो० २३।१ १७--जा० म० ७।१२ १८--पा० म० १।२ १९--रा० बा० ५०।१ २०--रा० बा० ३०।७ २१--रा० अयो० ४८।११ २२--पा० म० १८।२ २३--जा० म० २।१ ।

सीता कह सुधि प्रभुहि गुनावी । <sup>१</sup>	( धम )
तो काउ नपहि न दत । <sup>२</sup>	( सम्प्रदान )
सनुहि कीह प्रणाम । <sup>३</sup>	( " )
साधु ह सबनि मिली बदेही । <sup>४</sup>	( ' )
जात सराहत मनहि । <sup>५</sup>	( अधिकरण )
रामु मनहि मुसकाई । <sup>६</sup>	( ' )
निज काजहि लागि । <sup>७</sup>	( " )
नृपहि मोदु सुनि सचिव सुमाया । <sup>८</sup>	( सम्बन्ध )
रामहि तिलक कालि जो होई । <sup>९</sup>	( )
तीनि काल को ग्यान कौसिकहि । <sup>१०</sup>	( सम्बन्ध )
उमहि नाम तब भयउ अपरना । <sup>११</sup>	( ' )
बहुवचन—आजु सरह मोहि दीह अहारा । <sup>१२</sup>	( कर्ता )
कपिह पट भूपन पाए । <sup>१३</sup>	( )
पूरवासिह तब राम जुहारे । <sup>१४</sup>	( )
कलि के कबिह करउं परिनामा । <sup>१५</sup>	( धम )
कपिह देखावत नगर मनाहर । <sup>१६</sup>	( )
नारि परस्पर कहहि दखि दोउ भाइह । <sup>१७</sup>	( )
विधु महि पूरि मयूखहि रवि । <sup>१८</sup>	( करण )
वनाइ बहु बज्जिह खचे । <sup>१९</sup>	( )
विप्रह दान विविध विष दीन्हे । <sup>२०</sup>	( सम्प्रदान )
वठे राम द्विज ह सिर नाई । <sup>२१</sup>	( )
कानहि कनक फूल छवि देही । <sup>२२</sup>	( अधिकरण )
कमल करहि लिए मातु । <sup>२३</sup>	( )
कटि निपग कर कमलहि घर घनु सायक । <sup>२४</sup>	( )
मति नह मति अति धोर । <sup>२५</sup>	( सम्बन्ध )
फनिकह जनु सिर मनि उरगोई । <sup>२६</sup>	( )

१-रा० मु० २।८ २-जा० म० ७।२ ३-रा० ल० ११।२० ४-र० उ० ७।१  
५-रा० बा० २६।२३ ६-रा० बा० ३५।२४ ७-रा० अयो० ६।१० ८-रा०  
अयो० ५।१३ ९-रा० अयो० १९।११ १०-जा० म० ७।७।१ ११-रा०  
बा० ७।४।१४ १२-रा० मु० २।५ १३-रा० ल० ११।२।१९ १४-रा० उ० ३।७,  
१।-रा० बा० १।४।७ १६-रा० उ० ४।२ १७-जा० म० ५।६।१ १८-रा०  
उ० १।१ १०- २०-रा० उ० १२।१३ २१-रा० उ० ८।१५  
-रा० बा० ९।७ २३-रा० बा० २।४।१८ ८।७।१।५।१,  
-रा० बा० ८।१।१ २६-रा० ल० ८।२०।१

४४२२ परसग महित प्रयोग—एकवचन—

को —	चित्त चहन चद्र ललाम को <sup>१</sup> ।	(कम)
	गोरिहि निहोरत घाम को <sup>१</sup> ।	( " )
वह —	देइ सुअरघ राम कहै लेइ बैठाइ हो <sup>१</sup> ।	( , )
	वाल बद्ध कहै सग न लाबहि <sup>१</sup> ।	( " )
	तेहि सर हतौ मूढ कहै काली <sup>१</sup> ।	( " )
वहू —	जब सुग्रीव राम कहू देखा <sup>१</sup> ।	( " )
	जब लगि भजन न राम कहू <sup>१</sup> ।	( " )
सन —	मठ सन विनय कुटिल सन प्रीती <sup>१</sup> ।	(कारण)
	जनक सुता सन बोलेउ <sup>१</sup> ।	( " )
	बडे भाग अउण सम सन होय <sup>१</sup> ।	( " )
ते —	फूल बान ते मनसिज वेघत आनि <sup>१</sup> ।	( " )
तैं —	सगतें जती कुमत्र तैं राजा <sup>१</sup> ।	( " )
	माया तैं असि रचि नहि जोई <sup>१</sup> ।	( " )
से —	ग्यान अनल मन कसे अनलें से <sup>१</sup> ।	( " )
सो —	मटत भुज भरि भाइ भरतें सो <sup>१</sup> ।	( " )
वहैं —	तिलक विमोपने कहैं पुनि सारयो <sup>१</sup> ।	(सम्प्रदान)
	सीता सहित अवघ कहैं <sup>१</sup> ।	( " )
	मुनि निज आश्रम कहू पग धारा <sup>१</sup> ।	( " )
हित —	स्वारथ परमारथ हित एक उपाय <sup>१</sup> ।	( " )
हेतु —	घम हेतु अवतरेहु गोसाई <sup>१</sup> ।	( , )
लागि—	हित लागि कहौ <sup>१</sup> ।	( " )
महैं —	मन महैं बहूत भाँति सुख मानी <sup>१</sup> ।	(अधिकरण)
	तुलसी जनि धरहु गग मह साँव <sup>१</sup> ।	( , )

१-पा० म० छ० ८१२ २-पा० म० छ० ४११, —रा० ल० न० ४१२, ४-रा० सु० ११७ ५-रा० कि० १८१२०, ६-रा० कि० ४१११ ७-रा० सु० ४६११९ ८-रा० सु० ५८१३ ९-रा० अर० २३११९ १०-बरव रा० ६३१२ ११-बरव रा० ४०१२ १२-रा० अर २१११९, १३-रा० सु० १३१६ १४-रा० अयो० १७११४ १५-रा० अयो० ३१७१७ १६-रा० ल० ११८१८ १७-रा० ल० १२०१ ९ १८-रा० सु० ५७१२४, १९-बरव रा० ४५११ २०-रा० कि० १ २१-पा० म० छ० ६१, २२-रा० उ० २१३ २३-बरव रा० २४११



महु	—	ममि महु प्रगट भूमि कह वार्द <sup>१</sup> ।	(अधिकरण)
		सीता जल जलनिधि महु जाई <sup>२</sup> ।	,
माहि—माही		नप समविअ मन माहि <sup>३</sup> ।	,
(छदानुराय से)		दामिनि दमक रह घन माही ।	
		नटि दरिद्र सम दुख जग माही <sup>४</sup> ।	"
महि	—	रन महि परे निसावर भार <sup>५</sup> ।	
माय	—	समा माय पर करि <sup>६</sup> ।	,
		मूनि मग माय अचल हाइ बठा <sup>७</sup> ।	,
पर	—	प्रभु तरुवर कपि डार पर <sup>८</sup> ।	"
		मुख पर कहि विधि करौ बढाई <sup>९</sup> ।	
पहि—पाही		सती सनीत महस पहि <sup>१०</sup> ।	
(छदानुरोध से)		नभु गए कुभज रिपि पाही <sup>११</sup> ।	,
सो	—	सुनि सिव सो मुखवचन <sup>१२</sup> ।	,
त - तें	—	निरगुन त यह नाम बड <sup>१३</sup> ।	(अपादान)
		तुम्ह सहित गिरि तें गिरी <sup>१४</sup> ।	,
		कहेउ नाम बड ब्रह्म राम तें <sup>१५</sup> ।	
-व	—	आज अवधपुर आनंद नहछु रामक हा <sup>१६</sup> ।	(सम्बध)
		मित्रक दुख रज भर समाना <sup>१७</sup> ।	
की	—	तुलसी कथा रघुनाथ की <sup>१८</sup> ।	
		फिरि फिरि चितव राम की ओरा <sup>१९</sup> ।	,
कइ	—	सीता कइ सुधि प्रभुहि सुनावौ <sup>२०</sup> ।	
		मामिनि भयउ दूध कइ माखी <sup>२१</sup> ।	
क	—	दखउ आपनि मूरति सिय क छाह <sup>२२</sup> ।	,
		दुलह कै महतारी <sup>२३</sup> ।	"

१-रा० ल० १२।१० २-रा० कि० १४।१५ ३-रा० अयो० २३।२०, ४-रा०  
 कि० १४।३, ५-रा० उ १२।२६ ६-रा० ल० ११।२० ७-रा० ल ४।१६  
 ८-रा० अर० १०।२९ ९-रा० बा० २९।१७ १०-रा० उ० १६।८, ११-रा०  
 बा० ५३।१९ १२-रा० वा० ४।८।२ १३-रा० उ० ५।२७ १४-रा०  
 बा २३।१८ १५-रा० वा० ९६।२१ १६-रा० वा० २३।१९ १८-रा०  
 ल० न० १३।१ १८-रा० कि० ७।४ १९-रा० वा० १०।२२ २०-रा० उ० १८।४,  
 २१-रा० ल० १२।१७ २२-रा० अयो० १९।१४, २३-वरव रा० १८।२  
 २४-रा० ल० न० १९।२

कर	—	रिपु कर रूप सकल तैं गावा <sup>१</sup> ।	(सम्बन्ध)
केरि-केरी	—	सीता केरि करी रखवारी <sup>१</sup> ।	"
(छदानुरोध से)		चरि कंकड़ केरि <sup>१</sup> ।	"
		पुनि कहू खबरि विभीषन केरी <sup>१</sup> ।	"
		सोइ करतूनि विभीषन केरी <sup>१</sup> ।	"
		सो महिमा समुझत प्रभु केरी <sup>१</sup> ।	"
		सगुन प्रतीति भेंट प्रिय केरी <sup>१</sup> ।	"
बहुवचन—			
कहू	—	बाल बद्ध कहूँ सग न लावहि <sup>१</sup> ।	(कर्म)
कहूँ	—	जब सुप्रीव सबनि कहूँ देखा <sup>१</sup> ।	"
		यहि कहि नाइ सर्वा ह कहूँ भाया <sup>१</sup> ।	
सन	—	कहि प्रिय बचन सखिह सन <sup>१</sup> ।	(करण)
		कृपा सिंधु सोइ कपिह सन <sup>१</sup> ।	"
		सकल रिपिह सन पाइ असीसा <sup>१</sup> ।	"
तैं	—	जप जोग धम समूह तैं <sup>१</sup> ।	"
मह	—	सब इद्रिह महँ इद्र विलोचनि लेखहि <sup>१</sup> ।	(अधिकरण)
		पचन महँ प्रन त्यागै <sup>१</sup> ।	"
		जोग भोग मह राखेउ मोई <sup>१</sup> ।	"
माही	—	सुर नर अनुर नाग सग माही <sup>१</sup> ।	"
पर	—	बरवि सग लरिकन पर छोहूँ <sup>१</sup> ।	"
हेतु	—	सृष्टि हेतु सब ग्रथनि गाए <sup>१</sup> ।	(सम्प्रदान)
हित	—	प्रि घेनु सुत सत हित ली ह मनुज अवतार <sup>१</sup> ।	"
बहूँ	—	तन अनक दुजह बहूँ दीहे <sup>१</sup> ।	"
के	—	मिय रघुवर के भए उनीद नैन <sup>१</sup> ।	(सम्बन्ध)

१-रा० ल० १६।७ २-रा० अर० २७।१७ ३-रा० अयो० १२।१८ ४-रा० सु० ५३।७ ५-रा० बा० २९।१३ ६-रा० उ० २२।५ ७-रा० अयो० ७।१३ ८-रा० सु० १।७ ९-रा० कि० ४।११, १०-रा० सु० १।७ ११-जा० म० ७३।१ १२-रा० ल० ११७।१९ १३-रा० ल० १२०।५ १४-रा० अर० ६।३, १५-जा० म० १३३।२ १६-जा० म० ७०।१, १७-रा० बा० १७।३ १८-रा० अर० २३।१, १९ रा० बा० ३६०।१३ २०-रा० सु० ५६।६, २१-रा० बा० ९२।४, २२-रा० ल० २४।२, ४-बरव रा० १९।२

क	—	कह तपसिह क वात बहागी । <sup>१</sup>	(गम्बघ)
कर	—	कोटि जनम कर पानक । <sup>१</sup>	
केर	—	तरे कर मुनिह केर मताया । <sup>१</sup>	
		मुन्त अमलन केर मुभाऊ । <sup>१</sup>	

४४२३ विभक्तियाँ—(१) मूल एकवचन—

—उ यत्र-नत्र केवल अकारान्त पुल्लिङ्ग दाश्या म —अ —उ म परिवर्तित मिलता है। अथ स्वारात्त दाश यत्रन प्रातिपदिक रूप में ही मूल कारक बन कर प्रयुक्त होते हैं यथा—

कर्ता ( एक वचन )—

—उ	राज ममी रघुराजु विराजा । <sup>१</sup>	( कर्ता )
	घाए रामु मरासन साजी । <sup>१</sup>	,
	यहाँ अध निसि रावनु जागा । <sup>१</sup>	,
	कन्ह न मरमु महान । <sup>१</sup>	
	सकट परेउ नरमु । <sup>१</sup>	

वहीं कौी कर्ता मूल एकवचन में अननामिकता का योग मिलता है यथा—

—	कौमल्याँ अथ बाहु विगारा । <sup>१०</sup>	,
	चोक चार मुमित्राँ पूरी । <sup>११</sup>	,
	राय० कौसिकहि पूजि । <sup>१२</sup>	
	तव सीताँ पूजी मुरसरी । <sup>१३</sup>	
	राम काजु सुधीकेँ विसारा । <sup>१४</sup>	
	मैनाँ मुम भारती उतारी । <sup>१५</sup>	

तुलसी काव्य म प्रयुक्त इस प्रकार की अननामिकता जिसका व्यवहार कर्ता कारक एवं अर्थ कारक के साथ प्राप्त है व सम्बन्ध म दो वाता पर विचार किया जा सकता है—

(१) तुलसी न अपन सभी प्रथों (अवधी तथा ब्रज) क अंतगत इस प्रकार की अनुनामिकता का प्रयोग किया है जो केवल एक वचन सत्ता रूपा म ही मिलता है। नम अननामिकता का विभक्ति रूप म स्वीकार किया जा सकता है। इस प्रकार

१—रा० मु० ५३।१५	२—रा० ल० न० १।४	३—रा० ७० १ ०।७	४—रा०
उ० ३९।१	५—रा० वा० २।२	६—रा० अर० २७।२०	७—रा० ल० १००।१३
८—रा० अयो० ३६।१८	९—रा० अयो० ४०।१८	१०—रा० अयो० ४९।१५	
११—रा० अयो० ८।५	१२—जा० म० १२३।१	१३—रा० ल० १२१।१५	
१४—रा० कि० १९।२	१५—रा० वा० ९८।३		

के कथन की पुष्टि इस प्रकार से भी हो जाती है कि तुलसी के पूर्ववर्ती कवियों (जायसी आदि) ने भी अनुनासिकता का प्रयोग सभी कारका में किया है। ऐसा लगता है कि यह प्रवृत्ति तुलसी के समय तक चल रही थी। इस अनुनासिकता के विभक्तिरूप में स्वीकार करने की बात डा० देवकीनन्दन श्रीवास्तव के इस कथन से भी पट्ट सस्कृत सप्ताओ के कतिपय विभक्ति रूपों के साथ प्रयुक्त होने वाले अनुस्वार का अवशेष है।<sup>१</sup>

(२) ये अनुनासिक रूप वकल्पिक रूप में स्वीकार किए जा सकते हैं क्योंकि इस प्रकार की अनुनासिकता केवल गीताप्रेस गोरखपुर द्वारा प्रकाशित 'रामचरित मानस' में ही प्रयुक्त हुई है। 'मानस के अर्थ सस्वरणों में इस प्रकार की अनुनासिकता का पूर्ण अभाव है। उच्चारण विधि के अन्तर से भी कभी कभी शब्दों में अनायास ही अनुनासिकता आ जाती है। यदि एक व्यक्ति 'सुमिना' बोलता है तो अर्थ 'सुमित्रा' के रूप में भी उच्चारण कर सकता है दूसरी बात यह भी है कि तुलसी काव्य में एक ही सज्ञा रूप अनुनासिकता सहित एवं अनुनासिकता रहित दोनों ही रूपों में प्रयुक्त हैं। जिसका आधार पर इन्हें वैकल्पिक रूप मान सकते हैं।

(२) मूल बहुवचन—

—ह —हि, नि, —ए विभक्तियों के योग से रूप रचना होती है—  
कर्ता (बहुवचन)—

समाचार सब सखिन्ह जाय घर घर कहे।<sup>१</sup> सकल द्विजन्ह मिलि नायक माया।<sup>२</sup>  
आज सुरह मिल दीह अहारा।<sup>३</sup> पुनि सब मित्रह आयसु दीहा।<sup>४</sup>  
मुनिह प्रथम हरि कीरति गाई।<sup>५</sup> भालु कपि ह तब भूपन पाए।

—हि—बदि मागधिह गुन गुन घाए।<sup>६</sup> बहुरोग वियोगि, लोग हए।<sup>७</sup>

—नि—सृष्टि हतु सब प्रथनि गाए।<sup>८</sup>

आकारात् सप्ता—

—ए—केवल साकारात् सज्ञा रूपा में इसका योग देया जाता है यथा—

थार महुँ जानिहहि सयाने।<sup>९</sup> विपुल बाजने बाजन लागे।<sup>१०</sup>

उपयुक्त मूल बहुवचन रूपा के अतिरिक्त शून्य ( ) विभक्ति प्रत्यय के योग से निमित्त बहुवचन रूप भी परिगणित किए जा सकते हैं यथा—

१- डा० देवकीनन्दन श्रीवास्तव तुलसी की भाषा पृ० ४० २-जा० म० २०।१  
३-रा० उ० १।९ ४-रा० सु० २।५, ५-रा० उ० १२।१० ६-रा० सु० १।१९  
७-रा० उ० ११८।१९ ८-रा० वा० ३।८।११, ९-रा० उ० १४।१७ १०-रा०  
सु० १०।६, ११-रा० वा० १।१।१५ १२-रा० ब० ३।८।१।

—० भूत विनाश प्रत जात ए' गात्रि ब ।'  
 तिरगि नगर नर नारि विहंगि मुग गाइहहि ।'  
 ताबहि मगन विगात ।' बन्धान मुनि नर पाइ हो ।  
 लोय अधिज मुग मोवहि ता ।' मरिग रतन'ग म ।'

मूल बहुवचन म स्त्री एव प० गाना ही प्रकार क मना क्यों म अत्य स्वर के अनुनासिकाकरण का प्रवृत्ति सिगा पटना है यदा—

गुग्म पय माहि पावहि प्राती । गयी गुआमिन गंग गौरि मुठि गाहनि ।  
 मबल जनना उठि पा ।' उठा मगो हंगि मिग करि ।'

विधक एकवचन—कम

—हि—ही ह्य्य आति गिर राम पर पनु मापहि ।'  
 (छानानुरोध म) विनम मुनि गुनिगति गिरि गानापहि ।'  
 बुलमुग जानिबहि ल आयउ ।' विलपहि राम विधानहि गाय लगाव ।'  
 रामहि बालि कहउ का राऊ ।' रानिजि जाति ममाव गनी समुगावै ।'  
 गो' लिय कीमरुपा बैठी रामहि ह ।

वितहि बुझाइ कहहु बलि गो' ।' (कैकेई)

विधिहि मनाव राम मन माही ।' हंगहि गानुर बक पातकही ।'

—हि—मैटि उमहि गिरिराज ।'  
 बली लिबाइ जानिहि मा नन भावत ।''

—ए—ए अत्यल्प उाहरणो म अकारान्त पल्लव श'नों म अ का लोप हाकर ए-एँ का योग मिलता है  
 चौकें चाट मुमित्रा पुरी ।''  
 चौकें पूर घाट ।' पठण भरत भूय ननिअउरें ।''

करण—हि प्रभु मिलत अनजहि ।''  
 लो काठ नुपहिनन दन दाण परितामहि ।'

१—पा० म० छ० ७।१ २—पा० म० ५७। ३—पा० म० ५०।२, ४—रा०  
 ल० न० २०।४ ५—रा० ल० न० १७।६ ६—रा० ल० न० १६।४ ७—रा०  
 अ० १६।१० ८—पा० म० १२।१ ९—रा० उ० १५ १०—अरव रा० १९।१  
 ११—पा० म० १।२, १२—पा० म० १।१ १३—जा० म० छ० १ । १४—पा०  
 म० ३१।२ १५—रा० अया० ९।६ १६—जा० म० ७५। १७—रा० ल०  
 न० ९।३ १८—रा० अया ४३।९ १९—रा० अयो ६६।११ २०—रा० वा० १३  
 २१—पा० म० १४।११ २२—जा० म० १०६।२, २३—रा० अयो० ८।५ २४—  
 २४ जा० म० १८ । २५—रा० अया० १८।३ २६—रा० उ० १।२ २७—  
 जा० म० ७४।२

—हि लखनहि मेंटि प्रनामु कर ।<sup>१</sup> रामहि मिलत ककई ।<sup>१</sup>  
 तुम्हरी कृपां मुलम सोउ मोरे ।<sup>१</sup> राम कृपां नासहि सब रोगां  
 सम्प्रदान हि सभुहि कोन्ह प्रणाम ।<sup>१</sup>  
 भयउ कौसित्यहि विधि अति दाहिन ।<sup>१</sup>  
 राजु देहु सुग्रीवहि जाइ ।<sup>१</sup>  
 होइहि सतत पिबहि पियारी ।<sup>१</sup> गुरुहि सुनायउ जाइ ।

—हि धनु चडाई कौतुर्काहि कान लागि तानिउ ।<sup>१</sup>

सम्बध—

—हि तीन काल जो ग्यान कौसिकहि करतल ।<sup>१</sup>  
 नपहि मोदु सुनि सचिव सुमापा ।<sup>१</sup> देखि उमहि तप खीन सरीरा ।<sup>१</sup>  
 सीता बइ मुधि प्रनुहि सुनावी ।<sup>१</sup> उमहि नाम तब भयउ उपरना ।<sup>१</sup>

अधिकरण—

—हि सुनि मुनि सुजस मनहि मन राऊ ।<sup>१</sup> निज काजहि लागा ।<sup>१</sup>  
 —हि राम मनहि मुसकाहि ।<sup>१</sup> बाताहि बात करवि वडि आई ।<sup>१</sup>

-ए-ए+हूँ (बलात्मक शब्दाश)

हिणें हेरि हठ तजहु ।<sup>१</sup> पूरि रहा सपनेहु अघ नाही ।<sup>१</sup>  
 सपनेहुँ तो पर कोपु न मोही ।<sup>१</sup>  
 जानि पर मिय हियरे जब कुमिलाइ ।<sup>१</sup>  
 उर धरि धीर धोरजु गयउ नुआरे ।<sup>१</sup>

यत्र तत्र अनुनासिकता का प्रयोग करके भी अधिकरण कारक स्पष्ट किया गया है—

सर्मा आइ मत्रि ह तेहि वृक्षा ।<sup>१</sup> करहु हरपि हिय रामहि टीका ।<sup>१</sup>  
 मारे जिये भरोष दड नाही ।<sup>१</sup>

१-रा० अयो० ३१८।१० २-रा० उ० ६।२९ ३-रा० व १४।२१ ४-रा०  
 ० ११२।९ ५-रा० व० १ ९।२६ ६-रा० अयो० १४।५ ७-रा०  
 कि० ११।१८, ८-रा० वा० ६७।६, ९-रा० अयो० २।२०, १०-जा० म०  
 १०३।२ ११-जा० ग० ७७।१ १२-रा० अयो० २।१२, १३-रा० वा० ४।३३  
 १४-रा० सु० २।८ १५-रा० वा० ७६।१४ १६-रा० वा ३६।३ १७-रा०  
 बी० ६।१० १८-रा० वा० २५०।२४ १-रा० ल० १८।७ २०-पा०  
 म० ५६।१, २१-रा० ल० २१।६ २२-रा० अयो० १।१० २३-वरवै-  
 रा० १२।० २४-रा० अयो० ३९।७ २५-रा० व ८।१५ २६-रा० अयो० ५।६  
 २७-रा० अर० १०।११

सिपय बहुरवा -रग-

-ह-हि-ही (छानराघ स) तथा-नि

कल्पि कवि ह करहु परिनामा । कविह बाधि दा हुउ दुग नाना ।

नारि परमपर कर्हि दनि दोउ भाइह ।

पर भूमि निगिचरह ज मार ।

आषा पुनि पनि भाइह तोना । गिरि बंटे कविह निहारी ।

गुनरि बघ ह सागु ल गाई । रघमीर सर तीरघ मरीरहि ।

चराहि लागि हरगु अति तही ।

-हि पर अपवादविवाद विद्वपित बानिहि ।

पावन करहु सा गाइ भवस भवानिहि ।

कुलगुरु जानकिहि ल आयऊ ।

हसहि बक दातर चातकही । माहि जान अति अनिमान बस प्रभु,

कहुउ राखु सरीरहा । अम कवन हठि सठ काटि मुरतह

वारि करह बबूरही । हंसहि मलिन सन विमल बतकही ।

हाट बाट चौहू पुर द्वारें ।

-ए

करण-

-नि

गुणमा अलि नरल जन रूप फलनि पत्नी ।

काज करम गुननि भर ।

-रि

मास न गवनि मिली बदहा ।

नन ह करति गुमान । दात ह कटि लान ह भीजि ।

पूछसि लाग ह कहें । विद्युमहि पूरि मयसहि रवि ।

बनाइ बहु बजहि सचे । विनु पत्निहि रम चर्हि उठाना ।

सम्प्रदान-

-ह

विप्रह दान विविधि विधि दीहे ।

१-रा०

वा०

१४७

२-रा०

सु०

५४७

३-जा०

म०

५६१

४-रा०

ल०

५८१

५-रा०

वा०

३५६११

६-रा०

अर०

२९१४९

७-रा०

वा०

३५८

८-रा०

सु०

२१४

९-रा०

उ०

७१७

१०-पा०

म०

६१७

११-पा०

म०

६१७

१२-जा०

म०

९०११

१३-रा०

वा०

९१३

१४-रा०

कि०

१०१६

१५-रा०

कि०

१०१६

१६-रा०

वा०

३६८१

१७-पा०

म०

१२५१७

१८-रा०

म०

११७

१९-रा०

उ०

७१

२०-रा०

ल

२१-रा०

ल

२२-रा०

ल

८१२२

२३-रा०

यो०

१३३

२४-रा०

उ०

७१७

२५-रा०

उ०

१७७

२६-रा०

उ०

२८१२४

२७-रा०

वा

८८१४

२८-रा०

उ०

१७७

२९-रा०

उ०

१७७

३०-रा०

वा०

१४७

३१-रा०

वा०

१४७

३२-रा०

वा०

१४७

३३-रा०

वा०

१४७

३४-रा०

वा०

१४७

३५-रा०

वा०

१४७

३६-रा०

वा०

१४७

३७-रा०

वा०

१४७

३८-रा०

वा०

१४७

३९-रा०

वा०

१४७

४०-रा०

वा०

१४७

४१-रा०

वा०

१४७

- मग लोगह सुख दत ।<sup>१</sup> बँठे राम द्विजह सिर नाई ।<sup>२</sup>
- हि बकसीस जाचकन्हि दीहा ।<sup>३</sup>
- प्रमु सुभाउ परिजनाह मुनावा ।<sup>४</sup>
- हि आनि देहि नल भीलहि ।<sup>५</sup>
- नि-नि राजन दीहै हाथी रानिह हार हो ।<sup>६</sup>
- सम्बघे-
- ह मत्रिह मति अति थोरि ।<sup>७</sup> फनिकह जनु सिर मनि उरगोई ।<sup>८</sup>
- मोतिह झालरि ।<sup>९</sup> बधुह सहित सुत चारिउ ।<sup>१०</sup>
- अधिकरण-
- हि चले सकल घरनि सिर नाई ।<sup>११</sup>
- म्मल करीह लिए हाथ ।<sup>१२</sup> कर कमलिह घरे घनु साइक ।<sup>१३</sup>
- न नि रिपि पगन मातु मेलत भए ।<sup>१४</sup> कर कमलनि जयमाल जानकिहि ।<sup>१५</sup>
- ४४२ परसग--

सज्ञा (अथवा सवनाम) त्रियक रूपों के साथ विविध प्रकार के परसगों के प्रयोग से अनक प्रकार क कारक सम्बधों को स्पष्ट किया गया है। विविध कारक सम्बधों को स्पष्ट करने की यह विशिष्ट शिष्या है। परसगों के पूव सज्ञाओं के निविभक्ति और सविभक्ति दोनों ही प्रकार के रूपों का प्रयोग हुआ है। केवल सम्बघ कारकीय आकारात परसगों में लिंग वचन का प्रभाव देखा जाता है।

अनुसधित्त ने अवधी की रचनाओं में परसगों के प्रयोग के सम्बघ में परीक्षण किया और उमसे जो परिणाम हुए वे इस प्रकार हैं—

'रामचरित मानस' के अतगत 'अयोध्याकांड' की प्रथम चार सौ पक्तियों का परीक्षण किया जिनमें सज्ञाओं का प्रयोग ४२८ बार हुआ है। प्रयुक्त परसगों की संख्या १८ है जिनमें १ परसगों का प्रयोग सज्ञा के साथ तथा ६ परसगों का प्रयोग सवनाम के साथ हुआ है। सम्पूर्ण प्रयुक्त परसगों में केवल एक परसग का प्रयोग सविभक्तिक रूप के साथ प्राप्त है अथ सभी परसग निविभक्तिक रूपों में साथ प्रयुक्त हुए हैं।

पावती भगल की प्रथम दो सौ पक्तियों में सज्ञाओं का प्रयोग दो सौ षस

- १-जा० म० १८ ।२ २-रा० उ० १२।४ ३ रा० वा० ३०६।६ /-रा० उ० २०।१० ५-रा० ल १।२३, ६-रा० ल० १६।३ ७-रा० ल० ८।२५ ८-रा० वा० ३५।८ ९-रा० ल० न० ३।२ १०-जा० म० १८५।७ ११-रा० कि० १९।१४ १२-रा० वा० ३४६।१८ १३-जा० म० ५४।१ १४-पा० म० ११।१ १५-जा० म० १०७।१



बार किया गया है । सम्पूर्ण प्रयुक्त परसर्गों की संख्या इक्कीस है जिनमें पन्द्रह परसग सजा के साथ तथा छ परसर्गों का प्रयोग सवनाम के साथ हुआ है । इन सजाओं तथा सवनामों के साथ प्रयुक्त परसर्गों में तीन परसर्ग सविभक्तिक एवं अठारह निविभक्तिक रूपों के साथ प्रयुक्त हुए हैं ।

सम्पूर्ण राम लला नहछू की परीक्षण के लिए लिया गया - जिसमें प्रयुक्त सजाओं की संख्या १५१ है । प्रयुक्त परसर्गों की संख्या २३ है जिनमें बीस परसग सजा के साथ तथा तीन परसग सवनामों के साथ प्रयुक्त हुए हैं । सभी परसग निविभक्तिक रूपों के साथ मिलते हैं ।

परीक्षण के लिए सम्पूर्ण 'बरव रामायण' की सामग्री को लिया गया है जिनमें प्रयुक्त सजाएँ १९५ हैं । प्रयुक्त परसग ३१ हैं जिनमें २४ परसग सजा के साथ एवं ७ परसग सवनामों के साथ प्रयुक्त हुए हैं । सभी परसग निविभक्तिक रूपों के साथ प्रयुक्त हैं ।

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि आलाञ्छ भाषा में परसर्गों का प्रयोग कम हुआ है । रामचरित मानस और पावती मंगल की तुलना में 'रामलला नहछू' और 'बरव रामायण' में परसर्गों का प्रयोग अधिक है । सविभक्तिक रूपों के साथ परसर्गों का प्रयोग नहीं के बराबर है । प्रायः निविभक्तिक रूपों के साथ ही परसग प्रयुक्त हुए हैं ।

कर्ता	-	
कर्म	-	कहें कहूँ, को
करण	-	सन से-स, सो-सो, ते-तें
सम्प्रदान	-	बह बहूँ हित हेतु-हेतू ( छदानुरोध से ) लगि लागि-लागी ( छदानुरोध से )
अपादान	-	ते-तें सो सन
सम्बन्ध	-	क का कह (स्त्री०) की (स्त्री०) के-कें-क, कर, केर-केरा, केरी-केरी केरे-केरें
अधिबन्ध	-	मह - मह - माह - भौंहि माहि माही माझ, मझारी पर, पड़, पहि-पाहीं
कर्म	-	
बहें	-	देहि अरघ राम बहैं बैठाइ हो । <sup>१</sup> (निविभक्तिक रूप के साथ) तेहि सर हतौ मूढ कह काली । <sup>२</sup> बाल बड कह सग न लावहि । <sup>३</sup>

	मारेउ राउ ससिह कहें कोई । <sup>१</sup>	(निर्विभक्तिक रूप के साथ)
कहुँ	- राखु राम कहुँ जेहि तेहि भाँती । <sup>२</sup>	, ,
	जब लागि भजन न राम कहुँ । <sup>३</sup>	" "
	जब सुप्रीव राम कहुँ देखा । <sup>४</sup>	, "
	जब बिष्णु भगत कहुँ देखि । <sup>५</sup>	" "
को	- चित चहत चद्र ललाम को । <sup>६</sup>	" "
	गौरिहि निहारत घाम को । <sup>७</sup>	" "
करण	- कम के परसर्गों की अपेक्षा करण के परसर्गों का प्रयोग कुछ अधिक हुआ है, यथा—	
सन	- सठ सन विनय कृटिल सन प्रीती । <sup>८</sup> (निर्विभक्तिक रूप के साथ)	
	वाम देव सन वामु वाम होइ वरतेउ । <sup>९</sup>	" "
	नाय राम सन तजहु विरोधा । <sup>१०</sup>	, "
	बडे भाग अनुराग राम सन होई । <sup>११</sup>	" "
	कहि प्रिय वचन सलि ह सन रानि बिसूरन । <sup>१२</sup> (सविभक्तिक रूप के साथ)	
	कपासिधु सोई कपि ह सन । <sup>१३</sup>	, ,
करण के	अवय परसर्गों की अपेक्षा 'सन' का प्रयोग अधिक मिलता है ।	
से	- ये अल्प मात्रा में प्रयुक्त है—	
	ग्याा अनल मन कसे कनक से । <sup>१४</sup> (निर्विभक्तिक रूप के साथ)	
सो	- प्रनति सदगुन सिधु सो । <sup>१५</sup>	" "
	सावन सरति सिधु रुख भूप सो फेरई । <sup>१६</sup>	" "
	भेंटत भुज + रि भाइ भरत सो । <sup>१७</sup>	" "
स	- कहेउ दडवत प्रमु सा । <sup>१८</sup>	" "
	करव करव बिधि स जूझा । <sup>१९</sup>	" ,
	जिमि कोउ करइ गरुण स जूझा । <sup>२०</sup>	, "

१- रा० ल० १२।११ २- रा० अयो० ३४।५, ३- रा० सु० ४६।१९ ४- रा० कि० ४।११, ५- रा० कि० १३।२० ६- पा० म० छ० ४।२ ७- पा० म० छ० ४।१, ८- रा० सु० ५८।३ ९- पा० म० २६।१ १०- रा० सु० ५७।८, ११- बरव० रा० ६३।२ १२- जा० म० ७३।१, १३- रा० ल० ११७।१९ १४- रा० अयो० ३१७।१४ १५- रा० ल० २।०, १६- पा० म० ५९।२ १७- रा० अयो० ३१६।७ १८- रा० उ० १९।२१ १९- रा० छ० ८।१६ २०- रा० ल० ५१।१५ ।

- ते - ने तें का प्रयोग गर्ग्या मात्रा म मिलता है किन्तु "बरवै रामा यथ' तथा 'राम मग नहट्टु म इनका पूण अभाव है यथा-  
 भा मोहि ने बट्टु बट्ट अपराध ।' (निविमत्तिक रूप के साथ)  
 फूल बान त मनसिज बधत आइ ।'  
 तें - जिमि पातह विवात् तें पुत्त होहि सत् पय ।'  
 गाया तें अमि रति नहि जाई ।'  
 ताहि भ्रम तें नहि मारेउ साऊ ।'  
 जप जोग धम गमूह तें ।'  
 मग तें सती कमत्र तें राजा ।  
 इ- ने नइ सिज कीरति जमिराम ।' (सविमत्तिक रूप के साथ)

मम्प्रदाय—

बहु का प्रयोग अपक्षान्त अधिव मिलता है यथा—

- कह - ति ह कह मगत हाम रग एहें ।' (सविमत्तिक रूप के साथ)  
 तिलक विभीषण कह पुनि सारयो ।' (निविमत्तिक रूप के साथ)  
 दान अतक द्विजह कह दाह ।'' (सविमत्तिक रूप के साथ)  
 बहु - भए सागर बहु धरे ।'' (निविमत्तिक रूप के साथ)  
 मुनि निज आश्रम कहें पग धारा ।''  
 तहि अगद बहु लात उठाई ।'  
 सीता रतिन अवघ बहु ।''  
 नरतनु भव वारिधि कट्ट वेरो ।''  
 हित - अत्यल्प प्राप्त है यथा—  
 स्वारथ परमारथ हित एक उपाय ।'  
 हेतु-हेतु - सेतु हेतु धम कीह न थोरा ।''  
 (छानुरोय से) सष्टि हेतु सब प्रथनि गाए ।''  
 सेतु हेतु अवतरेउ गोसाई ।''

१- रा० अयो० ४२।१४	२- बरवै रा० ४०।२	३- रा० कि० १४।१९
४- रा० सु० १३।६	५- रा० वि० ८।१०	६- रा० अर० ६।१३
७- रा० अर० २१।१९	८- बरव रा ३४।१	९- रा वा० ९।६
१०- रा० ल० ११।८	११- रा० उ० २४।२	१२- रा० उ ८।१४
१३- रा० सु० ५७।२४	१४- रा० ल० १८।९	१५- रा० ल० १२०।१९
१६- रा० उ० ४४।१३	१७- बरव रा० ४५।१	१८- रा० सु० ५९।६
		१९- रा०

तेहि सरीर हर हेतु अरमउ बड तपु ।' (निविभक्तिक रूप के साथ)  
सबहि बनाए मगल हतु ।'

लगि - वर दुलहिनि लगि जनक अपनपन खाइहि ।'

लागि-लागी - इस प्रकार क परसग 'वरवै रामायण' तथा 'राम लला नहछू'  
(छदानुरोध से) म अप्राप्य हैं । 'मानस मे सरल सुलभ हैं, यथा—

जो वर लागि बरहु तपु तो लरिकाइअ ।' (निविभक्ति रूप क साथ)  
हितलागि कहीं सुभाय सो बड विषम बैरी रावरो ।' ( निविभ-  
क्तिक रूप के साथ)

तब हित लागि रहहु दीन हित लागी ।' (निविभक्तिक रूप के साथ)

अपानान—

इसके परसग करण कारक के परसगों जैसे ही हैं केवल व्याकरणिक अर्थ  
की दृष्टि से भिन्न है । इस प्रकार के परसगों में 'ते तथा तें' का सर्वाधिक प्रयोग  
हुआ है, यथा—

ते - प्रीतिबिनु मद ते गुणी । (निविभक्तिक रूप के साथ)

उलटा जपत कोल ते मए रिपि राउ ।' " "

एहि सुख ते सत कोटि गुन ।' " "

तैं - प्रान तैं अधिक राम प्रिय मोरे ।' " "

घर तैं खेलन मनहु अबहि आइ उठि ।'' " "

उभय अगम जुग नाम तैं ।'' " "

ब्रह्म राम तैं नाम बड ।'' " "

सो - अत्यल्प उपलब्ध है, यथा—

सुनु सिवा सो सुख वचन ।' " "

सन - सकल रिपि ह सन हाइ असीसा ।'' (सविभक्तिक रूप के साथ)

सम्बन्ध—

अनुपात की दृष्टि से क परसग का प्रयोग अ जो की अपेक्षा रामलला नहछू  
में अधिक प्राप्त है । वस्तुतः यह विभक्ति की भाँति सश्लिष्ट हुआ है

क - आज अवधपुर नहछू आनद रामक हो ।''

- १-पा० म० २९।२ २-रा० उ० ९।४ ३-जा० म० ५०।२ ४-पा० म० ४६।१  
५-पा० म० छ० ६।६ ६ रा० अर० ६।११ ७-रा० अर० २१।२१ ८-वरवै  
रा० १४।२ ९-रा० बा० ५०।१७ १०-रा० अया० १५।५ ११-पा०  
म० ७१।२ १२-रा० बा० २३।२ १३-रा० बा० २५।१७, १४-रा० उ० ५।२७  
१५-रा० उ० ५।२७, १६-रा० ल० ७० ३।५ ।

- मित्रक दण्ड रज मर समाना ।  
जो यह साँची है गला तो नीका तन्मीव ।<sup>१</sup>
- का - य परमग अगलाकन मयम कम प्रमुक्त हुआ है । बरवै रामायण  
तथा रामलला नच्छ म हमका पूष अभाव है—  
गमाधानु करि से मवही का ।<sup>२</sup> (निविमत्तिक रूप क साथ)
- कइ - भामिनि मयउ दध कर मानी ।  
सीता कइ मधि प्रभुति मनावी ।<sup>३</sup> ”  
उमा सत कह रहइ बढाई ।<sup>४</sup>
- की - तुलसी कथा रघुनाथ की ।  
फिरि-फिर चितव राम की ओरा ।<sup>५</sup> ,  
सीतलला समि की रहि सब जग छाय ।<sup>६</sup> ,  
जनि कन्हि कछ विपरीनि जानन प्रीति  
रीति न बात की ।<sup>७</sup> ,  
मिय मातु हरषी निरति गुणमा अति  
अलौकिक राम की ।<sup>८</sup> ,
- ‘की परसग का प्रयोग या तो अवधी की सभी रचनाओं में हुआ है पर  
विशेषतया मानस’ में अधिक है ।
- क - जनक मुना के चरनन परी ।<sup>९</sup> (निविमत्तिक रूप के साथ)  
मग लागह के करत मुफल मन लावन ।<sup>१०</sup> (सविमत्तिक रूप  
क साथ)
- सिय रघुबर क मए उनाइ नयन ।<sup>११</sup> (निविमत्तिक रूप क साथ)  
सीह जाइ जग जननि जनम जिह  
के घर ।<sup>१२</sup> (सविमत्तिक रूप के साथ)
- कैं - सबकें उर अभिलाषु अम ।<sup>१३</sup> (निविमत्तिक रूप क साथ)  
रामचंद्र कैं काज ।<sup>१४</sup>  
बढरहि कैं अनुराग भइउ बढि बाउरि ।<sup>१५</sup> (सविमत्तिक रूप क साथ)

१-रा० कि० ७१४ २-रा० बा० २९।२४ख ३-रा० अया० २९।९ ४-रा०  
अयो० १९।१४ ५-रा० सु० २।८ ६-रा० मु० ४ १३ ७ ग० बा० १० २२  
८-रा० उ० १८।४ ९ बरव रा० ०३।१ १०-पा० म० छ० ८।१ ११-जा०  
म० छ० ९।३ १२-रा० मु० ११।१ १३-जा० म० ३ १७, १४ बरवै  
रा० १ १७ १५-पा० म० ३।७ १६-ग० जग० १।७१ १७-रा० उ० २३। ४  
१८-पा० म० ६।२ ।

- कै - यह परसग भी अच्छी सख्या में प्रयुक्त हुआ है यथा—  
 देखहु आपनि मूरतिसिय कै छांह ।<sup>१</sup> (स्त्री०) (निविभक्तिक रूप  
 के साथ)  
 दुलह कै महतारि देखि मन हरपहि ।<sup>१</sup> " "  
 देखत रुचिर बेप क रचना ।<sup>१</sup> " "  
 जल बिलोकि तिह क परिछाही ।<sup>१</sup> (सविभक्तिक रूप के साथ)  
 कह तपसिह कै बात बहोरी ।<sup>१</sup> " "  
 तुलसी ने कै' की अपेक्षा कर' परसग का अधिक प्रयोग किया है—  
 कर - रिपु कर रूप सकल तें गावा ।<sup>१</sup> (निविभक्तिक रूप के साथ)  
 जिमि अमोघ रघुपति कर बाना । " "  
 रामलला कर नहछू अति सुख गाइय हा ।<sup>१</sup> " "  
 एक जीभ कर लछिमन दूसर वप<sup>१</sup> " "  
 कहहु सुकृत केहि माति सराहिय ति ह कर ।<sup>१</sup> " "  
 केर-केरा - मन प्रसन्न सब केर ।<sup>१</sup> (निविभक्तिक रूप के साथ)  
 निसि सु दरी केर सिगारा ।<sup>१</sup> " "  
 तहें करि मुनि ह केर सतोपा ।<sup>१</sup> (सविभक्तिक रूप के साथ)  
 केरा छ दानुरोध से प्रयुक्त हुआ है जो सस्या की दृष्टि से अत्यल्प  
 है—  
 प्रभु बइ गरल बधु ससि केरा ।<sup>१</sup>  
 केरि-केरी (छदानुरोध से) स्त्रीलिंग में प्रयुक्त है—  
 केरि केरी - सीता केरि करौ रखबारी ।<sup>१</sup> (निविभक्तिक रूप के साथ)  
 केरी केकड केरि ।<sup>१</sup> (निविभक्तिक रूप के साथ)  
 सोइ करतति विभीषन केरी ।<sup>१</sup> " "  
 मुहें भई कुमति बकई केरी ।<sup>१</sup> " "  
 सोमहिमा समुझत प्रभु करी ।<sup>१</sup> " "  
 सगुन प्रतीति भेंट प्रभु केरी ।<sup>१</sup> " "

१-बरवै रा० १८१२, २-रा० ल० १० १९ १ ३-रा वि० २११२ ८-रा सु०  
 ३१४, ५-रा० स० ७३११५ ६-रा० ल १६१७ ८-रा० १० ११ ८-रा ल  
 न० १९१३, ९-बरवै रा० २७१२ १०-पा म० ७११ ११-रा० उ० ११६ २ २ ०  
 ल० १२१६ १३-रा० ल० १२०१७ १४-रा ल १२११७, १५-रा० अर०  
 २७११७ १६-रा० अयो० १२११८ १७-रा० बा० २०११३ १८-रा० अयो०  
 २३११०, १९-रा० उ० २२१४ २०-रा० अयो० ७११२ ।

- बेने - चरत कमल बदी प्रभु केरे ।<sup>१</sup> (निविभक्तिक रूप क साथ)
- बेने - ग बिरीट असकपर बेरे ।<sup>१</sup> "
- पर हित हानि लाभ जिम्ह करे ।<sup>१</sup> (निविभक्तिक रूप क साथ)
- अधिकरण—इस काटि क परसर्गो म सर्वाधिक प्रयुक्त मह' तथा महुं है ।  
माँ तथा मो परमग अत्यल्प मात्रा म प्राप्त हैं । माँह मह तथा मउ परसर्गो का  
राम लला नहछु म पूण अभाव है ।
- मह-महँ - बेहि गिननी महँ गिनती जस बन पास ।  
(निविभक्तिक रूप क साथ)

मुनि समूह महँ बठ ।<sup>१</sup>

मन महँ बहुत नाति सुख मानी ।<sup>१</sup> "

सब इद्रिह मह इन्विलोचन लगहि । (सविभक्तिक रूप के साथ)

तुलसी जनि पग घरहु गग महँ साँच ।<sup>१</sup> (निविभक्तिक रूप क साथ)

अब करि पइज पच भेह जा पन त्याग ।<sup>१</sup>

महु - सरिता जल जलनिधि महु जाई ।<sup>१</sup> ,

प्रचढ पावक महु जरे ।<sup>१</sup> "

बिन काज राज समाज महु तजि राज अप  
विगोवहू ।<sup>१</sup>

माह - जिमि मन माँह मनोरथ गोई ।<sup>१</sup>

माहि - नहित समुल रामर माहि ।<sup>१</sup>

रन माहि पर निगाचर भार ।<sup>१</sup>

माहि - सचराचर जग माहि ।<sup>१</sup> ,

नूप समझिअ मन माहि ।<sup>१</sup> ,

छदानुरोध से माहि क स्थान पर माह' का प्रयोग भी मिलता है यथा—

माही - जो तुम सख मानहु मन माही ।<sup>१</sup> (निविभक्तिक रूप के साथ)

जिमि पर द्राह सत मन माही ।<sup>१</sup>

उमा राम हित सम जग माही ।<sup>१</sup> ,

- १-रा० वा० १४।५ २-रा० ल० ३२।१९ ३-रा० वा० ४।३ ४-बरव रा०  
५।१ ५-रा० अर० ८।१७ ६-रा उ० १।३ ७-जा० म० १०३।२ ८-बरव  
रा० २४।१ ९-जा० म० ८।११ १०-रा० कि० १६।१५ ११-रा० ल० १०९।२  
१२-जा० म० छ० ८।२ १३-रा० अयो० ३१६।२ १४ रा० ल० ९।२३ १५-रा०  
ल० ११६।२० १६-रा० उ० २१।१८ १७-रा० अयो० ३३।२० १८-रा० म०  
७।१८ १९-रा० उ० १६।० २०-रा० कि १२।१ ।

दामिनि दमक रह घन माही ।<sup>१</sup> (निर्विभक्तिक रूप के साथ)

मो - पर निदक जो जग मो बिगरे ।<sup>२</sup>

माझ - हति छन माझ निसाचर घारी ।<sup>३</sup>

जिपि दामिनि घन माझ समाही ।<sup>४</sup>

सभा माझ पन करि पद रोपा ।<sup>५</sup>

मझारी - गजि परे रिपु षटक मझारी ।<sup>६</sup>

परसग 'पर' का पावती मगल तथा जानकी मगल मे प्राय अभाव है ।

बरव रामायण तथा राम लला नहछू मे केवल एक एक स्थल पर प्रयुक्त हुआ है ।

मानस मे 'पर' का प्रयोग अधिक हुआ है—

पर - चांद सरग पर सोहत यहि अनुहारि<sup>७</sup> (निर्विभक्तिक रूप के साथ)

करबि सदा लरिकन पर छोहू ।<sup>८</sup> (सविभक्तिक रूप के साथ)

प्रभु तइवर कपि, डार पर ।<sup>९</sup> (निर्विभक्तिक रूप के साथ)

सिघासन पर त्रिभुवन साई ।<sup>१०</sup>

पइ - वाटे पइ कदरी फरइ ।<sup>११</sup>

डाटेहि पइ नव नीच ।<sup>१२</sup> (सविभक्तिक रूप के साथ)

पाहि-पाही - छ दानुरोध से प्रयुक्त है ।—

सती समीत महेस पहि ।<sup>१३</sup> (निर्विभक्तिक रूप के साथ)

मिलि दस पाँच महेस पहि जाई ।<sup>१४</sup>

कहेसि प्रकार प्रनत हित पाही ।<sup>१५</sup>

१-रा० कि०, १४।३ २-रा० उ० १०२।२४ ३-रा० ल० ६९।२ ४-रा० ल० ६९।१२ ५-रा० ल० ३४।१६, ६-रा० ल० ४४।२३, ७-बरव० रा० १७।२ ८-रा० वा० ३६०।१३ ९-रा० वा० २९।१७ १०-रा० ल० १२।१५ ११-रा० स० ५८।१७ १२-रा० स० ५८।२० १३-रा० वा० ५३।१९ १४-रा० अयो० २८।२, १५-रा० अर० २।२० ।



५१

आलोच्य सामग्री में सर्वनाम रूपों की विविधता के दर्शन होते हैं। इन रूपों के प्रातिपदिक अंशों का निर्धारण कर पाना उतना सरल नहीं जितना कि सज्ञा रूपों के प्रातिपदिक अंशों का निर्धारण करना है। लिंग वचन की दृष्टि से विभक्ति-प्रत्यय योजना जितनी स्पष्ट सज्ञा रूपों में है उतनी सर्वनाम रूपों में नहीं। प्रायः सर्वनाम रूप (सम्बन्ध कारक रूपों को छोड़ कर) लिंग से अप्रभावित हैं। साथ ही बहु वचन के द्योतन के लिए विभक्ति प्रत्यय योजना न होकर पथक प्रातिपदिक अंश (सर्वनाम) का प्रयोग है। मूलरूप (कर्त्तारूप) ही प्रातिपदिक माने जा सकते हैं। कर्त्ता को छोड़कर अय कारक सम्बन्धों के स्पष्टीकरण के लिए त्रियक रूपों में विभक्तियों या परसर्गों अथवा दोनों का योग मिलता है। कारक-सम्बन्धों को स्पष्ट करने वाले विभक्ति प्रत्यय और परसर्ग सज्ञा रूपों में प्राप्त होने वाले विभक्ति-प्रत्ययों और परसर्गों के ही समान हैं। इस दृष्टि से सर्वनाम रूप सज्ञा रूपों के सदृश कहे जा सकते हैं। समस्त सर्वनामों को वायकारिता और रूप रचना की दृष्टि से इस प्रकार व्यवस्थित कर सकते हैं—

### ५२ पुरुष वाचक सर्वनाम

५२१ उत्तम पुरुष—

निम्नलिखित रूप प्रयुक्त हैं

	एकवचन	बहुवचन
मूल रूप	— मैं हूँ।	हम।
त्रियक	— मोहि—मोही मोहि— मोहीं मा—मोहि।	हम—हमहि।
सम्बन्ध	— मोर—मोरा मोरि—मोरी हमार—हमारा हमारि—हमारी।	मारे, मोरें।
मूत्र (एकवचन)	— प्रायः भूतकालिक वृद्धतीय क्रिया अथवा भविष्य कालिक क्रियाओं के कर्त्ता रूप में मैं का प्रयोग मिलता है—	

मैं— मैं पुनि गयउ बहु सँग लागा ।' गगन पथ देखी मैं जाता ।'

मैं मनि मद जानि नहिं पाई ।' रामु काजु करि फिरि मैं आवी ।'

यत्र तत्र वर्तमानकालिक क्रिया के साथ भी प्रयोग मिलता है —

यह सपना मैं कहहु पुकारी ।' नाथ वालि अरु मैं दोउ भाई ।'

हो — मैं के प्रयोग की अपेक्षा 'हो' का प्रयोग कम है—

घर जाउ अपजस होउ जग जीवत विवाह न हौं करौं ।'

मूल (बहुवचन)—'हम' का प्रयोग बहुवचन में प्रयुक्त क्रिया व कर्ता की भाँति मिलता है किन्तु किसी किसी स्थल पर एक वचन (आदराथ) में भी प्रयुक्त हुआ है—

हम (बहुवचन)—वरु मिलइ सीतहि साँवरो हम हरपि मगल गावही ।'

चरन हम अनुरागही ।' हम पितु वचन मानि बन आए ।'

एक वचन में प्रयोग को हम वहाँ विभक्ति तनु गए ।''

आपन चरित कहा हम गाई ।'' अब उर राखेहु जो हम कहेऊ ।''

तियक रूप—मोहि--मोही (छदानुरोध से) तथा मोहि--मोही (छदानुरोध से) तियक रूपों का प्रयोग केवल कर्मकारक सम्बन्ध द्योतन के लिए व्यवहृत हुआ है । किन्तु विभिन्न परसगों में युक्त होकर ये रूप विभिन्न कारक सम्बन्ध प्रकट करते हैं । इनका प्रयोग परसग युक्त तथा परसग रहित दोनों रूपों में हुआ है—

अवगुन कवन नाथ मोहि मारा ।'', पारवती तपु प्रेम मोल मोहि दीहउ ।''

तारा मिय कहँ लछिमन मोहि बताउ ।'' अब सो मनु देहु प्रसु मोही ।'

भामिनि राम सपथ सत मोही ।'' निभय चलसि न जानसि मोही ।''

परसग सहित प्रयोग—इनका प्रयोग परसग रहित रूपों की अपेक्षा कम हुआ है—

मोहि पर—सपनेहुँ सचिहुँ मोहि पर ।''

मोहि पाही—स्वामिनि कहेहुँ कथा मोहि पाही ।''

जा लागि तुम ऐहहुँ मोहि पाही ।''

- १—रा० कि० ६१८ २—रा० कि० ५१७, ३—रा० अर० २१२४ ४—रा० सु० २१७, ५—रा० सु० १११३ ६—रा० कि० ६११ ७—रा० बा० ९६१२४ ८—आ० म० छ० ७१२ ९—रा० उ० १३१४८ १०—रा० कि० २१२, ११—रा० उ० १७१२, १२—रा० कि० २१६, १३—रा० बा० ७७१२२, १४—रा० कि० ९११२, १५—पा० म० ७३१२, १६—वरु रा० ३११२ १७—रा० अर० १३१२५ १८—रा० अयो० २६११२, १९—रा० अर० २९११२, २०—रा० बा० १५१२३ २१—रा० अयो० २२१८ २२—रा० बा० ५२१७ ।

माहि कहँ — सब मोहि कहँ जान दब सेरा<sup>१</sup> ।  
 मोहि त — भा माहि त बछु बढ अपराधु<sup>२</sup> ।  
 मोहि सन — तुम्ह पाई गुधि मोहि मन आरु<sup>३</sup> ।  
 मोहि मन करहि विविध विधि ब्रीडा<sup>४</sup> ।

एकवचन त्रिवक् रूप— मा का प्रयोग मन्व परमग के माप हा हुआ है—

मो पर — मो पर हाहु कृपाल<sup>५</sup> ।  
 मो पर करहि सनहु विसंघी<sup>६</sup> ।  
 मा पहि — प्रभु मिलन अनुजहि साह मो पहि ।  
 मा कहँ-कहु — मयउ तात मा कहु जलाना<sup>७</sup> ।  
 मो बटु होउ था सण्ड समाना<sup>८</sup> ।  
 मा कहँ सकल भए विपराता<sup>९</sup> ।  
 मा स-सो — मा स सठ पर करिहहि दाया<sup>१०</sup> ।  
 राम सा स्वामि कुसवक मोसा<sup>११</sup> ।  
 मो सन — करिहहि विधि मा सन ए प्रीती<sup>१२</sup> ।  
 मो त — को जग मलिन मति मात<sup>१३</sup> ।  
 मो पहि — मा पहि होहि न प्रीति उपकारा<sup>१४</sup> ।  
 मा सम — घम्य न मा सम आन<sup>१५</sup> ।  
 तुम्ह सम पुरुष न मा सम नारी<sup>१६</sup> ।

विकारी रूप के व उचन हम का प्रयोग परमग सहित तथा परमग रहित रूप म हुआ है—

अग्नि ताप है हम कह सचरत आइ<sup>१७</sup> ।  
 हम सन सत्य मरम किन कहऊ<sup>१८</sup> ।  
 तजे राम हम जानि कोसू<sup>१९</sup> ।

उक्त हम तथा हौ मूल कर्ता कारक रूपो म प्रयुक्त हुए है किन्तु अय की दृष्टि से कमकारक रूपा के अन्तगत स्वीकार किए जा सकत हैं—

हौ — कहि अपराध नाय हौ त्यागी<sup>२०</sup> ।

१-रा० अर० १६।२० २ रा० अया० ४२।१४ ३-रा० अयो० १९। ४-रा० उ० ७७।१७ ५-रा० वा० १४।३४ ६-रा० अयो० १५।११ ७-रा० उ० ५।२१ ८ रा० सु० १४।४ ९-रा० ल० १०९।१६ १०-रा० सु० १।७ ११-रा० अर० १०।८ १२-रा वा० २८।७ १३-रा० कि० ४।१६ १४-रा० वा० २८।२२ १५-रा० उ० १२५।७ १६-रा० अर २६।२८ १७-रा० अर० १७।११ १८-वरख रा० ३३।२ १९-रा० वा० ७८।६ २०-रा० अयो० ७८ २१-रा सु० ३१।१८

तियक रूप 'हमहि' का प्रयोग बहुवचन में हुआ है किन्तु कहीं कहीं पर 'हमहि' एकवचन (आत्प्राय) में भी व्यवहृत हुआ है। ये रूप परसर्ग रहित मिलते हैं—

हमहि—हमही (छदानुराध से)—

'हमहि आजु लागि बनउठ पाहु न कीहउ' ।  
 सुचि मुजान नूप कहहि हमहि अस सुमई' ।  
 तहें तहें ईसु देउ यह हमही' ।

सम्बन्ध कारक में प्रयुक्त होने वाले रूपों (सवनाम मूलक सम्बन्धवाची विशेषणों) की संख्या सर्वाधिक है। इनमें मुख्य रूप 'मोर' (ए० व०) तथा 'हमार' (ब० व०) हैं। लिंग, वचन तथा विभिन्न विभक्ति प्रत्ययों के योग से अनेक रूप तुलसी की अवधि में व्यवहृत हुए हैं। एक वचन में 'मोर मारा' (छदानुपूति से) 'मोरि-मोरी, मोरे तथा मोरें' बहुवचन में - 'हमार-हमारा, हमारि-हमारी, हमारे-हमारें-हमारो

एकवचन-मोर—

एहि विधि कहेउ मोर प्रभुताई' । मोर नाउ में पूछउ साई' ।

कहा मोर मन धरि न बरिय बर बौरेहि' ।

खल परिहास होइ हित मोरा' । जानति प्रिया एवु मनु मोरा' ।

मोरि-मोरी-बिपति मोरि को प्रभुहि सुनावा' । सात तुम्हारि मोरि परिजन की' ।

व्याह समय सिख मारि समुनि पछितहैं' । मोरि की अस गति होइ' ।

दाहिन आँख निज फरकइ मोरी' । राखी नाय सकल शचि मोरी' ।

मारे- - सोइ मरोस मोरे मन आवा' । तुम्हरी कृपा सुलन स उ मोरे' ।

मोरें - मारे जान कलेस बरिय बिनु काजहि' ।

मोरें हृदय प्रीति अति होई' । मारें मत बड नाम दुहु ले' ।

अनेक स्थलों पर संस्कृत सवनाम 'मम' प्रयुक्त है आलोचक सामग्री में 'मम' का प्रयोग बत्तीस बार किया गया है—

एक बार बिलोकु मम ओरा' ।

- १-पा० म ७३१ २-जा० म० ५९१ ३-रा० अया० २६१०, ४-रा०  
 बा० २८२७ ५-रा० कि० २१२५ ६-पा० म ४४१२ ७-रा० बा ९११  
 ८-रा० सु० १४१२, ९-रा० अर० २०१९ १०-रा० अया० ३१५१, ११-पा०  
 म० ५६१२ १२-रा० अर० २१३० १३-रा० अया० २०१० १४-रा०  
 अया० ३५३१२ १५-रा० वा० १०१५ १६-रा० वा० १४१२ १७ पा०  
 म० ८७१, १८— १९-रा० वा० २३१३, २०-रा० सु० ९११०

बसहु राम नप मम उर अतर ।<sup>१</sup> वह रघुबीर कहा मम मानहु ।<sup>१</sup>  
बहुवचन—

हमार-हमारा-गिरिजहि लगे हमार जिवनु सुख सयति ।<sup>१</sup>

जार जागु सुभाव हमारा । नर कपि भालु अहार हमारा ।<sup>१</sup>

हमारि-हमारी-मरतीह कुसल हमारि सुनाएहु ।<sup>१</sup>

बिपति हमारि बिलोकि बडि ।<sup>१</sup> सुनुहु पवनसुत रहनि हमारी ।<sup>१</sup>

हमरें-हमारें-हमरें जान अनेस बहुत भल कीहेउ ।<sup>१</sup>

आवा सो प्रभु हमरें गाऊ ।<sup>१</sup> यह हमरें मन बिषमउ आवा ।<sup>१</sup>

हमरे-हमारे-हमरे जान सदा सिव जोगी ।<sup>१</sup>

कुल बसिष्ठ कुल पूज्य हमारे ।<sup>१</sup> सुनु सुरपति कपि भालु हमारे ।<sup>१</sup>

यत्र तत्र बलात्मक रूप म मोरेहु मोरेहु तथा हमरउ<sup>१</sup> का प्रयोग उल्लेखनीय है । सख्या की दृष्टि से ये रूप अत्यल्प है—

मोरेहु कहें न समय जाही ।<sup>१</sup>

मोरेहुं मन अम आव मिलिहि बर बाउर ।<sup>१</sup> हमरेउ तोर सद्गई ।<sup>१</sup>

अल्प मात्रा म मो के बलात्मक रूप मोहू का प्रयोग परसर्ग सहित तथा परसर्ग युक्त दोनो अवस्थाओ म हुआ है—

दरसन देत रहव मूनि मोहू ।<sup>१</sup> दुहु मिलि की ह दीठु हठि मोहू ।<sup>१</sup>

परसर्ग युक्त--मोहू पर रघबीर ।<sup>१</sup>

उत्तम पुरुष (मूल रूप) सवनाम क भी बलात्मक रूप प्राप्त होते हैं । इनकी सरचना हूँ तथा हू प्रत्ययो के योग से हुई है--

होहु — होहु कहावत सख कहत ।<sup>१</sup>

हमहुँ-हमहुँ-हमहुँ बहव अव ठकुर सोहाती ।<sup>१</sup>

हमहु उमा रहे तेहि सगा ।<sup>१</sup>

५ २ २ मध्यम पुरुष—

निम्नालिखित रूप प्रयुक्त हैं--

एकवचन

बहुवचन

मूल रूप—त त

तुम तुम्ह

१-रा० ल ११५।१६	२-रा० ल० १०८।२१	३-पा० म० १८।७	४-रा० अया० १६।१३
-रा० ल० ८।२०	६-रा० ल० १२।३	७-रा० अया० ११।१७	
८-रा० मु० ७।१	९-जा० म० ६७।१	१०-रा जि० ६।४	११-रा० उ० १८
१२-रा० अया० ९०।५	१३-रा० उ० ७।१	१४-रा० ल० ११।११	१५-रा० बा० ५२।११
१६-पा० म० १७।१	१७-रा० बा ९।२१	१८-रा० वा० ३६०।१४	१९-रा० अया० ३१४।१७
	२०-रा० मु० ७।१८	२१-रा० वा० २८।२७	२२-रा० अया० १६।५
		२३-रा० ल० ८।१५	

नियक रूप—ताहि-ताही, ताहि  
तौ

सम्बन्ध — तब-मुव, तोर तोरा  
तारि तोरी, तोरे-तोरे

मूल रूप एक वचन मध्यम पुरुष भवनामो का प्रयोग क्रिया की कर्ता की भाँति हुआ है—

मूलरूप (एक वचन)—इस रूपा में त तथा तू के प्रयोग वही वही आदरार्थ रूप में देवताओं के सम्बोधन में और किमी किमी पर तिरस्कार वाधक प्रयुक्त हुए हैं। 'तै' का प्रयोग अधिक मात्रा में हुआ है—

तै — मुनु तै प्रिया वधा मय माना ।<sup>१</sup> मातु विपति सगिनि त मोरी ।<sup>१</sup>

त मम प्रिय लछिमन त दूना ।<sup>१</sup> तू छठ करमि विनय कर जारे ।<sup>१</sup>

मूल (बहुवचन)—'तम' तथा 'तुम्ह' का प्रयोग बहुवचन क्रिया के कर्ता की भाँति हुआ है। रामचरित मानस में 'तुम' का प्रयोग कबल एक स्थल पर तथा 'पावतीमगन' में तीन स्थलों पर मिलता है। तम के स्थान पर 'तुम्हें' का प्रयोग अधिक सख्या में आया है—

तुम — तुम त्रिभुवन तिहु काल बिचार बिसारद ।<sup>१</sup>

सीप रतन तुम उपजिहु भव रत्नाकर ।<sup>१</sup>

तुम्ह — तुम्ह ब्रलोक ईस रघुराया । सत असत मरमु तम्ह ज नहु ।<sup>१</sup>

तिसक (एक वचन) सर्वनाम रूपा का प्रयोग कर्ता का छोड़कर अथ सभा कारको में मिलता है। इन सर्वनामों का याग परमग रहित तथा परसग सहित दोनो रूपों में हुआ है। किन्तु तौ-सबब परमग सहित प्रयुक्त हुआ है—

परसग रहित—ताहि-तोही (छ दानरोघ से) ताहि रोरेहि का प्रयोग हुआ है। तौहि का प्रयोग अपक्षाकृत अधिक हुआ है—

—मुनहि मातु मैं दीख भय सपन मुनावहु तोहि ।<sup>१</sup>

आरत गिरा मुनत प्रम अभय करणा ताहि ।<sup>१</sup>

—मोरे नहि अये कछ तोही ।<sup>१</sup> जा साचहि ससिजलहि सा साचहि रारहि ।<sup>१</sup>

परसग सहित—मपनहु तो पर कापु न मोही ।<sup>१</sup> तो मम पुरुष न मो सम जागे ।<sup>१</sup>

- १—रा० ल० ८५३ २—रा सु० १२१० ३—रा कि० ३११४ ४—रा० बा० ८११७, ५—पा० म० १४११, ६—पा० म० ६४१२ ७—रा० ल० १८११५, ८—रा० उ० १२११९, ९—रा० बा० ७२१७, १०—रा० ल० २०११९ ११—रा० बा० २०११९ १२—पा० म० ४ ११, १३—रा० अया० १४१० १४—रा० अर० १७११५ ।

नियक रूप—तियक रूप बहुवचन मध्यम पुरुष सबनामो का प्रयोग कर्ता को छोड़ कर अन्य सभी कारको म हुआ है ।

तियक रूप 'तुम तथा तुम्ह' बहुवचन म परमग सहित प्रयुक्त हुए हैं यथा—  
 -अगम न बछु जग तुम्ह कह मोहि अम सूझइ' । तुम्ह कहैं नाय निहारा नाही' ।  
 -तुम्ह कहैं विपति बीजू विधि बपऊ' । भूरिभाग तुम्ह सरिस नतहुँ काउ नाहिन' ।  
 -तुम्ह त प्रम राम क दूना' । तम्ह सन प्रभु दुराउ बछ नाही' ।  
 -मिलन कृपा तुम्ह पर प्रभु करिही । राजहि तुम्ह पर प्रम विसेयी ।  
 -जा नहि हाइ तान तम्ह पाही' ।

तियक बहुवचन 'तुमहि' तम्हहि तुम्हहि परसग रहित प्रयुक्त हुए हैं—  
 तुमहि सहित अस बार बगहु जब हाहहि' ।  
 -तुम्हि कीसिली देख' । तुम्हहि न सोचु सोहाग बल' ।  
 तुम्हहि—मुमिरिहि सुकृत तुम्हहि जन तइ सुकृती वर' ।  
 तुम्हहि रघुपतिहि अतर कसा' । चाहत दन तम्हहि जुवराजू' ।  
 वस्तुतः य सविभक्तिक रूप है ।

मध्यम पुरुष सबनाम मूलक सम्बन्ध वाची विधापणो म एकवचन के अ तगत मुख्य रूप तार तथा बहुवचन म तम्हार है । लिंग वचन तथा कारक भेद के कारण इनके अनक रूप आलोच्य सामग्री में मिलते हैं । एकवचन म प्रयुक्त रूप—  
 तव—तुव, तोर—तोरा तारि—तारी तोर तारें हैं ।

तव तथा तुव संस्कृत के प्रभाव से हैं । बहुवचन में प्रयुक्त रूप तुम्हार—  
 तुम्हारा, तुम्हारि—तुम्हारि—तम्हारी हैं । अपेक्षाकृत तम्हार का प्रयोग अधिक हुआ है । तुम्हारा अत्रिकान्त छ दानुराध स प्रयुक्त हुआ है । कतिपय प्रयोग दृष्ट य हैं—

एकरचन—अघम मिरोमनि तव प' पावा' । तव हृदय बसहु हनुमत' ।

सिय तुव अग रग मिलि अधिक उजोत' । कपि तुव दरस सबल दुख बीते' ।

तव का प्रयोग कबल मानस म ही हुआ है । अवधी की अन्य चनाआ म कबल करव रामायण म एक स्थल पर तव का प्रयोग हुआ है ।

१-पा० म० ४५।<sup>१</sup> २-रा० अर० १२। ३-रा० अयो० १०।१० ४-पा०  
 म० १६।१, ५-रा० सु० १४।२० ६-रा० अर० १३।२ ७-रा० सु० ५७।११  
 ८ रा० अयो १८।९ ९-र० कि० ३ ।१० १०-पा० म० ५७।१ ११-रा०  
 अयो० १०।१८ १२-रा० जयो० १७।१७ १३-पा० म ७६ । १४ रा०  
 ल० । १ १५-रा० अयो० १०।४ १६-रा० ल० ११०।१०, १७-रा०  
 ल १०७।२६ १८-वरव रा० १३।१ १९-रा० उ० २।२१

तोर-तोरा (छदानुरोध से)-तोर कहा फुरि जिहि दिन होई ।

बुधि बल मरम तोर में जाना । तत्व प्रेम कर मम अह तोरा ।

- उभय प्रकार सुजस जग तोरा । होइहि सकल सलम जुल तोरा ।

तोरि-तोरी (छदानुरोध से)-अत काल गति तोरि । सभा सकल बस तोरि ।

सुनु मथरा बात फुरि तोरी । तब धरि जीम बडावउँ तोरी ।

तोरे - हंसि कहि रानि गालु बडि तोरे । पूजहि नाथ अनुग्रह तोरे ।

तोरें - कवन हेतु उपजा मइ तारें ।

तिहूँ तिलकृ छोमुकस तोरें । सब विधि घटव काजु मैं तारें ।

बहुवचन-सम्बन्धवाची बहुवचन रूपो म सर्वाधिक प्रयोग 'तुम्हार' सवनाम क है-

तुम्हार-तुम्हारा (छदानुरोध से)-मोर तुम्हार परम पुरुषारथु ।

छाडि न सकइ तुम्हार सकोचु ।

जी मन मान तुम्हार तौ लगन धराइहु ।

- देति तात विधु बदन तुम्हारा । आजु सुफल जग जनम तुम्हारा ।

तुम्हरी तुम्हरी कृपा सुलम सोउ मोरे । मरजादा पुनि तुम्हरी की ही ।

तुम्हारि-तम्हारी-जरि तुम्हारि चह सवति उखारी ।

मैं तुम्हारि सेवा बस राऊ । -नाथ सकल सपदा तुम्हारी ।

पुनि प्रसाद बलि तात तुम्हारी । जानउ महिमा बछुव तुम्हारी ।

तम्हरे तथा 'तुम्हार'-ये रूप बहुवचन पुल्लिङ्ग के हैं । कही कहीं विनोप्य के विभूत रूप के साथ रूप म भी प्रयुक्त हुए हैं-

बहुवचन (पु०)-सकल अमानुष करम तुम्हारे ।

मुनिबर तुम्हरे वचन मेरु महि डोलइ ।

एकवचन (प०)-तरिहहि जलाधि प्रताप तुम्हारे ।

तुम्हरे आश्रम अवहि ईसु तपु साधहि ।

---

१-रा अयो० ११४	२-रा० सु० २। ४,	३-रा० सु० ११।११	४-रा० ल० १०।२,	५-रा० अर० २९।३४,	६-रा० कि० ९।२४,	७-रा० सु ४१।२०,
८-रा० अयो० २०।९	९-रा० अयो० १४।१६	१०-रा० अयो० १३।१३	११-रा० अयो० ३।१४	१२-रा० ल० ८।१,	३ रा० अयो० १५।१४,	१४-रा० कि० ७।२०
१५-रा० अयो० ३१।५,	१६-रा० अयो० ४०।१६	१७-पा० म ७।२	१८-रा० वा० ३५।१२	१९-रा० वा० ३५।१३	२०-रा० वा० १४।२१,	२१-रा० सु० ५९।१०,
२२-रा० अयो० १७।१५	२३-रा० अयो० २१।१६	२४-रा० वा० ३६।११,	२५-रा० वा० ३५।१	२६-रा० अर० १३।१०	२७ रा० वा० ३५।११	२८-जा० म० ९।११
२९-रा० सु० ६०।४	३०-पा० म० २।१२					



साहज पहिरिअ राज तुम्हारे' । पूनु बिदेस न साचु तुम्हारे' ।

मध्यम पुरुष सम्बन्धवाची सवनाम क बलात्मक शब्दाद्य युक्त रूप प्राय 'हि' और ही क याग स निर्मित है—तुम्हरिहि तुम्हारिहि, तुम्हारिहि—

तुम्हरिहि वृषा तुम्हहि र [नदन' । हमरें कुसल तुम्हारिहि दाया ।

सा निस्तरइ तुम्हारिहि छाया' । —गयउ तुम्हारिहि काछें घाली' ।

तत्कालीन उच्चारण भिन्नता क कारण प्रयुक्त तुम्हारेइ अवधी की रचनाओं म कबल मानस क अतगत तीन बार प्रयुक्त हुआ है अन्यत्र नहीं—

तुम्हारेइ मजन प्रभाव अधारी ।

मध्यम पुरुष म कुछ सम्बन्धवाची आदरात्मक रूप भी प्राप्त हुए हैं । अवधी क अतगत य उल्लेखनाय रूप हैं जा आप क अथ म प्रयुक्त हुए हैं । राउर रावरे रीरें आदि का प्रयोग कबल मानस म ही हुआ है अन्यत्र नहीं । किसी किसी स्थल पर राउर का प्रयोग सम्बन्ध कारक म भी हुआ है—

राउर - राजन राउर नामु जसु' ।

का पूँछउ गुठि राउर सरल मुमाउ' । कहें राउर गुन सील सरूप सोहावन' ।

जेहि राउर अम अनमल ताका' । कहहु कृपानिधि राउर कस गुन गाय' ।

राउर (श्री०) कहें तिय हाहि सयानि समान मुनहि सखि राउरि' ।

गिरिवर मुनिय सरहना राउरि तह तह' ।

राउरें - राम मातु मत जानव राउरें

रावरी - राम निकाइ रावरी है ।

रावरें - सबध राजन रावरें ।

रावरा - कर्नानिधान मुजान सील ।

मनह जानन रावरा ।

रीरहि - एन रूप म हि बलात्मक निपात का योग है—

राउर—रीरे नियक एकवचन पुल्लिङ्ग का रूप है यथा—

मउर कउन दस रउरहि लगा ।

जो गाचइ गसि कलह सा सोचइ रीरेहि ।

यस्तन य रूप हैं ता सम्बन्ध कारक को स्पष्ट करने क लिए ही पर विनय क अभाव म कम कारक ओ स्पष्ट करते हुए प्रतीत होत हैं ।

१-रा० अ० ११७ २-रा० अ० १४१ ३ रा० अ० २७१३ ४-रा०  
 उ० ५१८ ५-रा० कि० ३४४ ६-ग० ट० ८४४ ७-रा० अ० १३१ ८-रा०  
 अ० ११० ९ अ० रा० २ १०-ग० म० ५६१ ११-ग० ग० ७१०  
 १२-अ० रा० ११२ १३-ग० म० ६ १४ १५-ग० म० १ १७

## ५३ सकेत वाचक सर्वनाम

### ५३१ दूरवर्ती—

इस प्रकार के रूपों का प्रयोग अथ पुरुष के छातन के लिए भी किया गया है। सह सम्बन्धवाची रूपों का प्रयोग भी सनेन वाचक (दूरवर्ती) तथा अथ पुरुष में किया गया है। उ हें इस प्रकार व्यवस्थित करके प्रस्तुत किया जा सकता है—

	एकवचन	बहुवचन
मूल रूप	- वह, सा ।	ते, तिह, उह
तिथक	- ताहि-ताही, तेहि तेहि-तेही, ताहु तामु तामु ओहि ओही, ता	तिहहि तिहही उहहि, उह तिह-

मूल रूप (एकवचन)—'वह' तथा 'सो' रूप कर्ता कारक म प्रयुक्त हुए है। 'वह' सवनाम का प्रयोग अथ पुरुष तथा सकेत वाचक (दूरवर्ती) के अथ म और सो का प्रयोग पुरुष सकेत वाचक (दूरवर्ती) और सहसम्बन्ध वाचक म मि ता है। वह का प्रयोग अस्यल्प प्राप्त है जबकि 'सो' का प्रयोग पर्याप्त मात्रा म मिलता है, यथा—

वह	—	निसि मलीन वह निसि दिन यह विगसाइ ।'
सो	--	समा बहोनि बठि सो जाई ।' आसिस देख गई सो हरपि चलेउ हनुमान ।' हित लागि कहेउ सुभाय सो बढ विपम बरी रावरो ।'

### मूलरूप (बहुवचन)—

इसके अन्तगत निम्न रूप प्रयुक्त हैं। आलाच्य भाषा म इसका प्रयोग प्रचुर मात्रा मे मिलता है, यथा—

ते	--	ते तनु सकल विभव बस करही ।' मजहि ते चतुर नर ।' ते प्रिय तुम्हहि कइइ में भाई ।'
----	----	--

'ते' का प्रयोग सर्वत्र परमग रहिन हुआ है। सम्बन्ध वाची सवनाम के साथ प्रयुक्त होकर यह सह सम्बन्ध वाची रूप भी बन जाता है।

तिह--'ते' की अपेक्षा तिह' का प्रयोग अधिक सख्या म मिलता है सकल चरित तिह देवे ।' भूपन वमन भूरि तिह पाए ।'

१--बरघ रा० ११२ २--रा० ल० ८१२ ३--रा० ल० १२८, ४--पा० म० छ ६४, ५--ग० अयो० ३११०, ६--रा० अर० ६१ ७--रा० अयो० १६१६, ८--रा० सु० ५११७, ९--रा० अयो० ८१२ ।

रावन धरन सीस तिह नाए ।<sup>१</sup>

उन्ह — इसका प्रयोग अल्प मात्रा में हुआ है—  
छनमहुँ मकल कटक उह मारे ।<sup>१</sup>

तियक (एकवचन)—

(१) परमग रहित (मविभक्ति) निम्न रूप प्रयुक्त हुए हैं यथा—  
ताहि-ताहि—तमकि ताहि ए तोरहि कह्य महस ।<sup>१</sup>

ताहि एक छन मरछा आई ।<sup>१</sup> ताहि प्रबोध बडुन सुन चीहा ।<sup>१</sup>

तुलसी जेहि न माहाइ ताहि विधि वाम ।<sup>१</sup> तहि तिन ताहि न मिलहि बहारा ।

मकुट परे कम अवगुन अवगुन ताही । सांर कहि मुनिहि बुधि ताही ।<sup>१</sup>

तेहि—तहि अमोक बाटिका उजारी ।<sup>१</sup>

तेहि मरीर हर हत अरमेउ बढ तपु ।<sup>१</sup> सत जानन तहि आगमन कीहा ।<sup>१</sup>

तेहि तही—राम विमुख रामा तेहि नाही ।<sup>१</sup> पठहि आई कहो तहि बाता ।<sup>१</sup>

सहि कोमलाधीम के आना ।<sup>१</sup> सपन किए रत्ना कवि तही ।<sup>१</sup>

हृदय हरष नहि भय कछ तेही ।<sup>१</sup> विप्र फिरहि हम खाजत तही ।<sup>१</sup>

ताडु—हरषु बिरह अति ताहु ।<sup>१</sup>

ओहि-आहा—काहु बठ न कहा न आहा ।<sup>१</sup>

सांर पूछति पुनि पुनि आही ।<sup>१</sup> दउ दउ फिरि सो फनु आहा ।<sup>१</sup>

तामु-नामु—दन रूपो का प्रयोग सम्बन्ध कारक का स्पष्ट करने के लिए हुआ है—

तामु अनुज काटे श्रुति वाना ।<sup>१</sup> तामु वचन मुनि सागर पाही ।<sup>१</sup>

ममुनि तामु वध चप कार रहही ।<sup>१</sup> जो कछ कहहि यार सब तामु ।<sup>१</sup>

(२) परमग सहित प्रयोग—निम्न रूप प्रयुक्त हुए हैं—

ता पर—ता पर हरषि चनी बदेही ।<sup>१</sup>

श्री समेत बैठ प्रनु ता पर ।<sup>१</sup> ता पर कहहि सुमोज बडुत तुम खावहि हो ।<sup>१</sup>

ता कह—ता कह यह विरोप सुनवाई ।<sup>१</sup> ता कहें विषघनी चतरना ।<sup>१</sup>

१—रा० सु० ५३।८ २—रा० अर० २२।२२ ३—वरव रा० १५।२ ४—रा० सु० १९।१६ ५—रा० उ० १०।३ ६—वरव रा० ५०।२ ७—रा० सु० ७।१९ ८—रा० ल० १४।८ ९—रा० वा० १०।११ १०—रा० सु० १८।६ ११—पा० म० ५।२ १२—रा० सु० २।१९ १३—रा० अर० २।४ १४—रा० सु० २।४ १५—रा० सु० ५।२।२ १६—रा० सु० १।३ १७—रा० उ० १०।१।२ १८—रा० वि० २।८ १९—रा० उ० ४।२४ २०—रा० अर० २।९ २१—रा० अयो० १८।१६ २२—रा० अयो० १६।१ २३—रा० अर० २२।१९ २४—रा० सु० ५६।५ २५—रा० ल० १८।१४ २६—रा० अयो० २।१० २७—रा० ल० १०।८।५ २८—रा० ल० ११।८ २९—रा० ल० न० १७।३ ३०—रा० ल० १०।८।५ ३१—रा० अर० १२।१।५ ।

- ता कर -- मारे कर ता कर बघ होई ।<sup>१</sup> ता कर नाम भरत अम होई ।<sup>१</sup>  
 ता करि -- सुनि ता करि बिनती महु बानी ।<sup>१</sup>  
 तो के -- नरपति सकल रहहि फल तावे ।<sup>१</sup>  
 ता कें -- प्रमु प्ररित नहि निज बल ताकें ।<sup>१</sup> ताकें जुग पद कमल नवाबी ।  
 तेहि सन -- तेही सन (छादानुरोध से) ये रूप प्रचुर मात्रा म प्रयुक्त हुए हैं ।--  
 तेहि मन जग बालिक पुनि आवा ।<sup>१</sup>  
 तेहि सन नाग मयत्री कीज ।<sup>१</sup> तोहि तेही सन काम ।<sup>१</sup>  
 तेहि तें -- तेहि तें उवर सुभट सोइ भारी ।<sup>१</sup>  
 तेहि कर-- तहि कर मेद मुनहु तुम्ह साऊ ।<sup>१</sup>  
 तेहि करि-- तेहि करि विमल विलोचन ।<sup>१</sup>  
 तेहि कें -- तेहि कें वचन मानि विश्वासा ।<sup>१</sup>  
 तेहि पर -- तेहि पर चढव मद मन माखा ।<sup>१</sup> आयज करज तोहि पर दाया ।<sup>१</sup>  
 तेहि लगि-- कलव एक तेहि लगि अवतारा ।<sup>१</sup>  
 ताहि सन-- तिहहि निपाति ताहि सन बाजा ।<sup>१</sup>  
 ताही सो -- नाथ बयस कीज ताही सो ।<sup>१</sup> तासो नाथ बयस नहि कीज ।<sup>१</sup>

नियक एक वचन रूप विभिन्न परसगों से युक्त होकर विभिन्न कारक सम्बन्ध स्पष्ट करते हैं ।

तियक (बहुवचन)--

(१) परसग रहित (मविभक्तिक)--

- तिहहि तिहही-तिहहि निपाति ताहि सन बाजा ।<sup>१</sup>  
 तिहहि विरोधि न आइहि पूरा ।<sup>१</sup> तिहहि बिलोकत पातक मारी ।<sup>१</sup>  
 राम कृपा अतुलित बल तिहही ।<sup>१</sup> विषय योग बस कर ह कि तिहही ।<sup>१</sup>  
 उन्हहि -- तस फनु उहहि देख ।<sup>१</sup>

(२) परसग सहित (तियक बहुवचन)--

इस अन्तगत विशेषतया 'उह तथा तिह' तियक रूपों के साथ विविध परसगों का प्रयोग करने अनक प्रकार के कारक-सम्बन्ध स्पष्ट किए गए हैं ।

- १-रा० कि० १९१०, २-रा० बा० ९७१४, ३-रा० उ० ११३, ४-रा० अयो० २५४, ५-रा० अर० १५२, ६-रा० बा० १८१५, ७-रा० बा० ३०१९, ८-रा० कि० ४१, ९-रा० बा० ८०१९, १०-रा० अर० ७९९, ११-  
 १२-रा० बा० २३, १३-रा० बा० ७९९, १४-रा० अयो० ८७१२, १५-रा० ल० ७१४, १६-रा० मु० १९१३, १७-रा० मु० ११३, १८-रा० ल० १९, १९-रा० अर० २५७, २०-रा० मु० ११३, २१-रा० अर० २५१६, २२-रा० कि० १०, २३-रा० मु० ५१३, २४-रा० अयो० ८७१६, २५-रा० बा० ११७ ।

उह कर —मुदरि मुन मैं उन्ह कर दाता<sup>१</sup> ।

उह कें —साधेहु उह कें मोह न माया<sup>१</sup> ।

उह कैं —समुझि परी मोहि उह क करनी<sup>१</sup> ।

उह—की अपेक्षा 'तिह'—सत्रनाम के साथ परसर्गों का प्रयोग अधिक मिलता है—

तिह कर—बहहु सुकत कहि मीति सराहिय तिह कर<sup>१</sup> ।

ति ह कर भय माता मोहि नाही<sup>१</sup> ।

ति ह की —परम प्रम तिह कर प्रमु देखा<sup>१</sup> ।

तिह फी —तिह की आट न दखिअ वारी ।

तिह केरे —चरण कमल बानी तिह करे ।

तिन्ह के —तिह क सग नारि एक म्यामा<sup>१</sup> ।

बहु दिमि तिह क उपवन मुदर<sup>१</sup> । प्रिय सत अनत सग तिह के<sup>११</sup> ।

तिह कें —तिह कें सम बभव सपदा<sup>११</sup> ।

तिह कें परस किए गिरि भारी<sup>११</sup> ।

तिह क —रहहि घोर तिह क जग नीका<sup>१</sup> ।

जल विलोकि ति ह क परिछाही<sup>११</sup> ।

तिह तें —तिह तें अधिक रम्य अति बका<sup>११</sup> ।

तिह कहें —तिह कह सदा उछाह<sup>१</sup> । तिह कहें सुख हास रस एह<sup>११</sup> ।

तिह पर —सादर सुनहि जे ति ह पर राम रहहि अनुकूल<sup>११</sup> ।

ति ह पर कुअर कुअरि बठारी<sup>१</sup> । (अप्राणिवाचक)

ति ह मह —तिह मह प्रथम देख जग मारा<sup>११</sup> ।

बलाघान प्रधान रूप—

इन रूपों में ई—ई (छदानुरोध में) उ—ऊ (छानुरोध में) ही तथा

हु—हु (छानुरोध में) बलात्मक निपात हैं ।

सो + इ—ई—साइ अवतरज हरनि मति धारा<sup>११</sup> । सोइ कर श्री सेवा विधि जानइ<sup>१</sup> ।

राम विलोकन प्रगटत सोई<sup>१</sup> । राम कथा कुछ सुलभ न सोई<sup>११</sup> ।

१-२० अर १७।१५ २-२० वा० ९७।२ ३-२० अर० २७।७ ४-पा० म० ७।१

५-२० सु० १ ११७ ६ रा० उ १७।४ ७-२० ल० १।१२ ८-२० वा १४।५

९-२० अर० २२।१६ १०-२० उ० २९।८ ११-२० सु० ६०।३ १२-२०

उ० १४।२६ १३ रा० उ० १४।२४ १४-२० अर० ८।१ १५-२० सु० ३।४

१६-२० वा० ७८।११ १७-२० वा ३६।१२७ १८-२० वा० ९।६ १९-२०

अर १।९ २०-२० वा० ३।१२ २१-२० वा० १२।४ २२-२० ल० ६।१६

२३-२० उ० २४।१४ २४-२० वा० १७।८ २५-२० वा० ३।१४

सपनहुँ सकट परहि कि सोई<sup>१</sup> । मम बल जान सहित पति सोई<sup>१</sup> ।  
सो+उ-ऊ-सोउ सछेपहि कहहु विचारो<sup>१</sup> । सोउ प्रगटत जिमि मोल रतन ते ।

सोउ जाने कर फल यह लीला<sup>१</sup> । राम नाम बिनु सोह न सोऊ<sup>१</sup> ।

ते+उ-ऊ-हहि पुरारि तेउ एक नारि व्रत पालक<sup>१</sup> ।

जय जय मद निदरेसि हृह पाथसि कर तेउ<sup>१</sup> ।

ते+इ-ई-भए निसाचर जाइ तेइ<sup>१</sup> ।

सुमिरिहि सुकत तुम्हहि जन तेइ सुकती वर<sup>१०</sup> ।

भए उपल बोहित सम तेई<sup>११</sup> ।

विह+हु-सि हहु किए मन मोन<sup>१२</sup> । तेउ न जानइ मरमु तुम्हारा<sup>१३</sup> ।

बेष प्रताप पूजिअहि तऊ<sup>१४</sup> । नाम जीहँ जपि जानहि तऊ<sup>१५</sup> ।

५ ० २-सकेत वाचक (निकटवर्ती) सवनाम

प्रमुख रूप इस प्रकार हैं—

	एकवचन	बहुवचन
मूल	— यह यह	ये — ए, —
तियक	— एहि—एही	इहहि इनहि इन — , इ इ

मूल एकवचन—

इन रूपों में सर्वाधिक प्रयोग यह का हुआ है—

यह — निसि मलीन यह प्रफलित नित दरसाइ<sup>१६</sup> ।

यह बरनत हीनता धनेरी<sup>१</sup> । यह प्राकृत महिपाल सुमाऊ<sup>१७</sup> ।

चढत दसा यह उतरत नात निदान<sup>१८</sup> ।

निसि मलीन वह निसि दिन यह विगसाइ<sup>१</sup> ।

यहु — जी यहु होइ मोर मत माता<sup>१९</sup> ।

मूल (बहुवचन)—ये-ए की मिश्रता सम्भवत अनुष्ठेखन क कारण है । या फिर क्षेत्रीय उच्चारण भिन्नता का द्योतन हो सकता है—

- १-रा० अर० २८५ २-रा० अर० २८१२६ ३-रा० उ० १२१५ ४-रा०  
बा० २३११६ ५-रा० उ० २२१९ ६-रा० बा १०१६ ७-जा० म० ९३११०  
८-पा० म० २६१२ ९-रा० बा० २०१७ १०-पा० म० ७६११ ११-रा०  
ल० ३११६, १२-रा० बा० २२१२० १३-रा० अयो० ८६११३ १४-रा०  
बा० ७११० १५-रा० बा० २२१६, १६-पा० म० २६१२ १७-रा० उ २२१८,  
१८-रा० बा० २८११९, १९-वरव रा ५११ २०-वरव रा० ११११०,  
२१-रा० अयो० ६७१७

य-ए य प्रिय सबहि जहाँ लगि प्रानो<sup>१</sup> ।

कचहुँक ए आबहि एहि नाते<sup>१</sup> । करिहहि विधि मी सन ए प्रीती ।

इह- मम हित लागि जम दह हारे ।

मम हित लागि तजे इह प्रानो<sup>१</sup> । बालि बधव इह मइ परतीती<sup>१</sup> ।

तियक (एकवचन)—सलिप्ट एव विश्लिप्ट दोनो प्रकार के रूप मिलत हैं—

(१) परसग रहित—

एहि- एहि सेबत कछ दुखनाही<sup>१</sup> । राम चरित मानस एहि नामा<sup>१</sup> ।

छानराध से एहि का दीध स्वरात एही प्रयुक्त है—

एहा- अब तनि राम खिलावहु एहा<sup>१</sup> । सत्य सध करि अधि कर एह<sup>१</sup> ।

यहि- चांद सरग पर साहत यहि अनुहारि<sup>१</sup> ।

(२) परसग सहित एहि क भाषा अपेक्षाकृत परमर्गो का अधिक प्रयोग हुआ है—

एहि तें- एहि तें जमु पहै पितु मात<sup>१</sup> ।

एहि सम- एहि तें अधिक न एहि सम जीवनु लाहु<sup>१</sup> ।

एहि मह- एहि महै रघुपति नाम उदारा<sup>१</sup> ।

एहि माहा-राम प्रताप प्रगट एहि माही<sup>१</sup> ।

एहि कें- एहि कें एक परम बल नारी<sup>१</sup> ।

एहि कह- एहि कह मित्र तजि दूसर नाही<sup>१</sup> ।

अम स्वामा एहि कह मिलहि<sup>१</sup> ।

एहि कर- एहि कर नाम मुमिरि ससारा<sup>१</sup> । एहि कर फल पुनि विषय विरागा<sup>१</sup> ।

एहि लगि- एहि लगि तुलसीदास इह की<sup>१</sup> ।

या को- या को फउ पावहिगो आगे<sup>१</sup> ।

तियक बहुवचन—यह प्रयोग सभबत ब्रजभाषा से प्रभावित है ।

(१) परसग रहित—

(सविभक्तिष)

इहहि- इहहि कुदष्टि बिलोकहि जोई<sup>१</sup> ।

इहहि देखि भया भगन जानि बड स्वारथ<sup>१</sup> ।

१-रा० वा० ६३।	२-रा० वा० ६७।११	३-रा० कि० ६।१८,	४ रा०
उ० ८।१५	५-रा ल० ११४।३	६ रा० कि० ७।२६	७ रा० सु० १।७
८-रा० उ० ५।१३	९-रा० ल० ८६।११	१-रा० अर० २७।९	११-वरव
रा० १७।७	१२-रा वा ६७।८	१३-वरव रा० ५७।२	१४-रा० वा० १०।१
१५-रा० वा० १०।१	१६-रा० अर० ३८।७	१७-रा० वा० ७०।१२	
१८-रा ल० ८६।१३	१९-रा० वा ६७।११	२०-रा० अर० १६।१३,	२१-रा०
सु० ३।६३	२२-रा० ल ३।१२	२३-रा० कि० ९।१५,	२४-जा० म० ४५।२

(२) परसग सहित—

इह की— इह की कृपां दनुज सब मार' । एहि लागि तुलसीदास इह की' ।

इह तें— इह तें लही दुति मरकत साने' ।

इह कइ— इह कइ नाथ सहज जठ करनी' ।

इन सम— को अवनीतल इन सम बीर घुरघर' ।

इह सन— जिह कर मन इह सन नहि राता' ।

## ५४ प्रश्नवाचक सर्वनाम

प्रश्नवाचक सर्वनाम के दो प्रकार के रूप प्रयुक्त हुए हैं— (१) प्राणिवाचक तथा (२) अप्राणिवाचक । इसके अतिरिक्त एक तीसरे प्रकार का रूप भी मिलता है जिसका प्रयोग विशेषण की तरह हुआ है

	एकवचन	बहुवचन
मूल—	(१) प्राणिवाच को, केइ-वेई	—
	(२) अप्राणिवाचक—का	—
	(३) विशेषण रूप—बवन (कौत)	—
तियक—	(१) प्राणिवाचक —बाहिं, केहि-वेहि	
	(२) अप्राणिवाचक—काह-काहा	

मूल एकवचन—

सर्वाधिक प्रयोग कर्त्तकारक सम्बन्ध स्पष्ट करते हैं । 'को' सर्वनाम का प्रयोग पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है—

(१) प्राणिवाचक—को-बरन छवि अस जग बवि को है" ।

मटि को सकइ सो आवु जो बिधि लिखिराखेउ" । जलद सरिस को कहै राम भगवत' ।

विपनि मोरि वा प्रमहि सुनावा' । राम विमुख कृत्तिकाल को भयो न भाँडु" ।

वेइ-कइ-केइ दुइ सिर वेइ जमु चह लीन्हा" ।

अनहित तोर प्रिया वेई कीहा" । केई तब नासा कान निगता" ।

(२) अप्राणिवाचक—का-का पूछैह सुठि राउरि सरल सुमाव" ।

होनिहार का करतार का" । का दिखाइ यह काह दिखावा' ।

---

१-रा० उ० ८१०	२-रा० सू० ३४४,	३-रा० अयो० १००११६	४-रा०
सू० ५९१४	५-जा० प० ९२१२,	६-रा० बा० ८०११२	७-रा० बा० १००११२,
८-पा० म० १४१	९-बरव रा० ४२१२,	१०-रा० अर० २९१२	११-बरव
रा० ६६१२,	१२-रा० अयो० २६१२,	१३-रा० अयो० २६११,	१४-रा०
बर० २२१४	१५-बरव रा० २०१२	१६-रा० बा० ८०१२१,	१७-रा०
अयो० ४८१२			



(३) विगण रूप—

कथा —राम कवन प्रभु पूछउ तोती ।' करी कवन विधि बिनय बनाई ।'

कैसा —तुम्हहि रघुपतिहि अतर कसा ।'

तियक—

१—प्राणिवाचक (परमग रहित)—

काहि —मच्छर काहि नलक न लावा ।' कहति काहि कुधर कुमारिका ।'

केहि-केहि —केहि जग काट न खाहि ।' केहि मुकृती के कुअर ।

में केहि कही विपति अति भारी ।' अस मति सठ केहि तोहि तिखाई ।'

केहि न मुसग बढप्पनु पाखा ।'

परसग सहित—कारक सम्बन्धो (कर्त्ता को छोड़कर) को स्पष्ट करन के लिए परसगों का भी योग उपलब्ध है । तियक का सबत्र परसगयुक्त प्राप्त है—

का यहँ —सीय विवाह उछाह जाइ कहिवा पहुँ ।''

केहि कँ —केहि कँ बल घालिस बन सीसा ।''

केहि क —कहि क लोभ बिडबना ।''

केहि कर —गालु करव केहि कर बलु पाई ।''

(२) अप्राणिवाचक (परमग रहित) मूल तथा तियक दोनों प्रकार के सबनामो—का, काह—काहा का प्रयोग क्या के अर्थ में हुआ है—

काह —काहा (छन्दानुरोध से)—

कही काह सुनि रीझहु बर अबुलीनहि ।''

मो कहँ काह कहब रघुराया ।''

मीठ काह कवि कहहि जाहि जोइ भावइ ।'

कह प्रभु सखा बूगिए काहा ।'' बार बार प्रभु पूछहु काहा ।''

परसग सहित—

केहि लगि —जीब नित्य तुम्ह केहि लगि रोबा ।'

केहि लेसे —कहहु तूलि केहि लेसे माही ।''

१-रा० वा० ४६।११ २-रा० वा० २४०।१५ ३-रा० ल० ६।११ ४-रा० ल० ७।१५ ५-पा० म० ८० ५।३ ६-रा० सु० ४७।१९ ७-जा० म० ४४।१ ८-रा० सु० १४।२१ ९-रा० ल० १०।४ १०-रा० वा० १०।६ ११-पा० म० ४९।१ १२ रा० सु० २१।२ १३ रा ल० ७०।१९ १४-रा० अयो० १४।२ १५-पा० म० ४९।१ १६-रा० अयो० ७०।९ १७-पा० म० ६५।२ १८-रा० सु० ४७ १९-रा० ल० ८।१८ २०-रा० वि० ११।१०, २१-रा० वा १२।०२

हि हेतु-हेतू- कपि केहि हेतु धरी निठुराई ।  
विपिन अकेलि फिरहु केहि हेतू ।

## ५ सम्बन्ध वाचक तथा सह सम्बन्ध वाचक

### ५.१ सम्बन्ध वाचक

इसके प्रमुख रूप इस प्रकार हैं—

एक वचन	बहुवचन
मूल — जो, जोइ—जोई (छानुरोध से)	जौ, जे, जिह
तियक— जेहि, जाहि—जाही (छानुरोध से), जासु—जासू (छदानुरोध से), जा— जेहि—।	जिहहि  जि ह—, जेह—

मूल एक वचन—

जो — जो सुनि भरहि बखान ।<sup>१</sup> सो कि दोष गुन गनइ जो जेहि अनुरागइ ।<sup>२</sup>  
करहु सो बेगि जो तुम्हहि सुहाई ।<sup>३</sup>  
जो जग जोग भूप अभिषेका ।<sup>४</sup> जा त्रिलोकि मुनिवर मन नाचा ।<sup>५</sup>  
जोइ-जोई-रूप न जाइ बखान जानु जोइ जोहइ ।<sup>६</sup> विगु अवसर भम ते रह जोई ।<sup>७</sup>  
मूल बहुवचन—

जो — जोएहि क्यहि सनेह समेता ।<sup>८</sup>

जे — सुनिहि जे कहहि ते तज प्रमु थोरे ।<sup>९</sup>

जे न मित्र दुख होहि दुखारी ।<sup>१०</sup> जे यह नछू गाव गाइ सनाबइ हो ।<sup>११</sup>

जिह — 'जिन्ह' सवनाम का प्रयोग अत्यल्प है—जिह वरने रघुपति गुन गाथा ।<sup>१२</sup>

तियक एक वचन—

जेहि — जेहि दीह अस उपदेस वीरेहु बलेस करि बरु वावरो ।<sup>१३</sup>

तुलसी जेहि न सुहाइ ताहि विधि बामा ।<sup>१४</sup> भावा कपि तेहि लका जारी ।<sup>१५</sup>

सो कि दोष गुन गनइ जो जेहि अनुराग हो ।<sup>१६</sup> पारबती निरमयउ जहि ।<sup>१७</sup>

१-रा० सु० १४८, २-रा० बा० ५३।१६ ३ रा० बा० १४।२६ ४-पा०  
म० ६०।२, ५-रा० सु० ९।१, ६-रा० अयो० ६।८, ७ रा० उ० २७।१०,  
८-पा० म १२।२, ९ रा० अर० ५।२९ १०-रा० बा० १४।२६ ११-रा०  
ल ९।१९, १२-रा० वि० ८।१ १३ रा० ल न० २०।३ १४-रा० बा० १४।८  
१५-पा० म० छ० ६।० १६-बरव रा० ५०।२ १७-रा० ल० १८।१६, १८-रा०  
ल० न० १।३ १९-रा० बा० ७।१।१९।

जाहि- मुमिरन जाहि मिठाइ अनाता ।' जाहि तीह पर न' ।'

राम कुरा करि चिनवा जाओ ।' अरि बस तैउ जिआवन जाही ।'

जामु—जामू (छानुगप स) मध्वच बारक को स्पष्ट करने के लिए परसग रहित प्रयोग है—

जामु भजन दिन परनि न जाही ।' सीय मुता भई जामु सबल मगल मई ।'

राम जामु जम आपु बखाना ।' वह भाग उर आवइ जामू ।'

राम चरन पक्त्र मन जामू ।'

(२) परसग सहित प्रयोग—

जा कहु—जा कहुँ करिअ सो पहउं ।'

जा बा—अड समान भाउ जस जाका ।''

जा की—जाकी ओर बिगोबहि मन तेहि मापहि हो ।''

जा क—सो अनप जा के अस ।'' काम आदि म' दम न जावे ।'

जा क—काल करम निव जाकेँ हाया ।''

सुरपनि बस बाह बल जाकेँ ।'' जाकेँ डर सर अमुर डराही ।'

जेहि कहें—प्रभु आयस जहि कह जम अहई ।''

जहि कहें दुइ माप कहि रति नाप जहि कह ।''

जेहि कर जहि कर मन रम जाहि सन ।'

जेहि पर—जेहि पर जन ममता अति छाहू ।''

जेहि सन—मपने जेहि सन होहि लराई ।''

जेहि महु—जेहि महुँ आदि मध्य अवसाना ।''

जेहि त—जेहि त कछु निज स्वार्थ हाई ।'

जेहि तें—जेहि तें नीच बडाइ पाया ।''

जहि लागी—कराह जा जागो जेहि गगी ।''

१-रा० बा० ५ १७ २ रा० स० ५८ ३-

४-रा० अयो० २१७

५-रा० प्रयो० ४११ ६-जा० म० ७१२ ७-रा० बा० १७२० ८-रा०

बा० ११३२ ९-रा० बा० १११७ १०-रा० उ० ८८१९ ११-रा० बा० १७१२

१२-रा० ल० न० ६१, १३-रा० कि० ३१७ १४-रा० अर० १६१२३, १५-रा०

ल० ६१८ १६-रा० अयो० २५३ १७ रा० अर० २८१५ १८-रा० स० ५९१७

१९-रा० बा० ८४२५ २०-रा० बा० ८०१९ २१-रा० बा० १३११ २२-रा०

कि० ७३९ २३-रा० उ० ६१११ २४ रा० उ० ६५१५ २५-रा० बा० २११७

२६-रा० बा० २६१९

तियक बहुवचन—इस प्रकार के रूप अत्यल्प मात्रा में प्रयुक्त हुए हैं—

(१) परसग रहित—

जिहहि— जिहहि विरचि बड भयउ विधाना । जिहहि परम प्रिय खिन्त ।  
नाथ जिहहि सुधि करिअ तिहहि समतेइ हर ।<sup>१</sup>

(२) परसग युक्त -

जिह कर— जिह कर भुज बल पाइ दसानन ।

जिह क— ली ह जाइ जग जननि जनम जिह के घर ।<sup>२</sup>

जिह के असि मति सहजन्न आई ।<sup>३</sup>

जिह के— जिह के पद व्यकज प्रीति नही ।<sup>४</sup> जिह के विमल विचारु ।<sup>५</sup>

जिह करे—परहित हानि लाभ जिह केर ।<sup>६</sup>

जिन्ह पर—ममता जिह पर प्रमुहि त, थोरो ।<sup>७</sup>

जे ह माही—मुनि मन मधुप बसहि जेह माही ।<sup>८</sup>

बलात्मक रूप जेऊ (बहुवचन) तथा जोऊ (एकवचन) में —ऊ बलात्मक निपात है । दोनों ही रूप छन्दानुरोध से प्रयुक्त हैं—

जेऊ— लखि सुखेपु जग बचक जेऊ ।<sup>९</sup>

जाना चहहि गूढ गति जेऊ ।<sup>१०</sup>

जोऊ— मनित विचित्र सुबिहृत जोऊ ।<sup>११</sup>

जेई— बूझहि धानहि बोरहि जेई ।<sup>१२</sup>

जोई— प्रमु जोइ तुम्हहि सय साहो ।<sup>१३</sup>

५ ५ ० सह सम्बन्ध वाचक

एक वचन

बहुवचन

मूल—सो

ते

तियक—तासु, ताहि तेहि—तही

तिहहि ति ह—

ता ताहि—ताही—

मूल एक वचन—

सो— जो सोइ ससि बल्ह सा सोबइ रोरेहि ।<sup>१</sup>

१—रा० वा० १६।१५ २—रा० वा० १८।२४, ३—पा० म० ७६।२, ४—रा०  
धर० २२।९ ५—पा० म० ७।२, ६—रा० वि० ७।५ ७—रा० ल० १४।२२  
८—रा० वा० २३।२०, ९—रा० वा० ४।३ १०—रा० वा० १६।६ ११—रा०  
वा० ४८।१७, १२—रा० वा० ६।९, १३—रा० वा० २।५, १४—रा० वा० १०।५  
१५—रा० वा० १। १६—रा० ल० ११।१३ १७—पा० म० ५।१।

अब जो कहहु सो करहु ।<sup>१</sup> बवा सो नुतिअ लहिअ जा ॥<sup>२</sup> हा ।  
 मेरि को सकइ सो आकु जो विधि लिति राखेउ ।<sup>३</sup>  
 अस सुकृती सो पुरइहि जगदीस ।<sup>४</sup>  
 सो कि दोष गुन गनइ जो जेहि अनुरागइ ।<sup>५</sup>

बहुवचन—

ते— ते मति मद जे राम तजि ।<sup>६</sup>  
 ते घोर अछत विकार हेतु । जे रहत मनसिज बस किए ॥<sup>७</sup>  
 जे पर मनित सुनत हरपाही । ते बर पुरुष बहुत जग माही ।<sup>८</sup>  
 सोइ—सोई—जो जेहि भाव नीक तेहि सोई ।<sup>९</sup>  
 तियक (एकवचन) (परसग रहित)—  
 तासु— जास नाम जपि तासु इत ।<sup>१०</sup>  
 तासु झूत मी जा करि हरि आनहु प्रिय नारि ।<sup>११</sup>  
 ताहि— तलसी जाहि न सोहाइ ताहि विधि वाम ।<sup>१२</sup>  
 प्रात लेइ जो नाम हमार । तेहि दिन ताइ न मिलइ अहार ।<sup>१३</sup>  
 उमाराम सुभाउ जेहि जाना । ताहि भजनु तजि भाव न आना ।<sup>१४</sup>  
 तेहि—तेही—जो जहि भाइ नीक तेहि सोई ।<sup>१५</sup>  
 हरि कोदइ कठिन जेहि भजा । तेहि समन दप दल मत गया ।<sup>१६</sup>  
 बहुरि सत्रसन बिनबउतेही । सतत सुरा नीक हित जेही ।<sup>१७</sup>

परसग सहित—

ताही सो—नाथ ब्रमर कीज ताही सा । बुधि बल जीति सविथ जही सा ।<sup>१८</sup>  
 ता सो— जाके डर सर असर डराही तासो बयस कबहु नहि कीज ।<sup>१९</sup>  
 ता कहु— ता कहु प्रभु कछु अगम नहि जा पर तुम्ह अनुकूल ।<sup>२०</sup>  
 ताहि सन—तिहहि निपाति ताहि सन बाजा ।<sup>२१</sup>  
 तेहि पर— जो तजि कपटु करइ द्विज सवा ।<sup>२२</sup>

१—जा० म० ६८।२, २—रा० अया० १६।१, ३—पा म० ६४।२ ४—जा०  
 म० ६८।२ ५—पा० म० ६०।७ ६—रा० ल० ३।२, ७—पा० म० छ० ३।४  
 ८—रा० वा० ८।७४, ९—रा० वा० १।१८ १०—रा० मु० ०।७ ११—रा०  
 मु० २१।२२ १२—धरव रा० ५०।१ १३—रा० सु० ७।११ १४—रा०  
 सु० ३४।६, १५—रा० वा० ५।१९ १६—रा० सु० २१।१६ १७—रा० वा० ४।७०  
 १८—रा० ल० ६।९ १९—रा० सु० २२।१८ २०—रा० सु० २३।१८ २१—रा०  
 स १९।१३, २२—रा० उ० ४५।१६ ।

बहुवचन (परसग रहित) —

तिहहि— जिहहि मुधि करिअ तिहहि सम तेइ हर ।<sup>१</sup>

प्रमुपद प्रीति न समुझि नीकी ।

तिहहि कथा मुनि लागहि फीकी ।<sup>२</sup> (जिहहि का लोप)

(परसग सहित)

तिह— कहहु सुकृत केहि भांति सराहिय तिह का ।

लीह जाइ जग सुनिनि जनमु जिह के घर ।<sup>३</sup>

बलात्मक रूप ('-उ-ऊ' या 'इ-ई' व योग से)

सोउ— जो मुनिहि सोउ बड पातकी ।<sup>४</sup>

सोइ—सोई—जेहि अनुराग लागु सोई हिनु आपन ।<sup>५</sup>

सोइ सेवक प्रियतम मम सोई । मम अनुसासन मानै जोइ ।<sup>६</sup>

तेऊ— नखि सुरय जग बचक जेऊ । बध प्रताप पूजिहहि तेऊ ॥

जीवन मुक्त महामुनि जेऊ । हरिगुन मुनिहि निरतर तेऊ ॥<sup>७</sup>

## ५६ अनिश्चय वाचक सर्वनाम

विवचन की सुविधा के लिए अनिश्चय वाचक सर्वनामों को निम्नलिखित तीन परसगों में विभक्त कर लिया गया है—

५६१ मूल—और, औच, आन—आना

तियक— औरहि आन—

एक वचन के ही रूप बहुवचन में भी प्रयुक्त हुए हैं ।

मूल एकवचन—

और— और पाव फल भोगु ।<sup>१</sup>

आन' का प्रयोग अधिक मिलता है—

आन— आना (छदानुरोध में)

राम लखन राम तुलसी मिश्रव न आन ।<sup>२</sup> राम लखन के रूप न देखत जान ।<sup>३</sup>

धय न मो सम आन ।<sup>४</sup> सपथ तुम्हार भरत के आना ।<sup>५</sup>

मूल बहुवचन—

औरु— और करहि अपराध ।<sup>६</sup>

१-पा० म० ७६।२, २-रा० रा० ९।८, ३-पा० म० ७।२ ४-प० म० छ० ८।२

५-पा० म० ३३।२, ६-रा० उ० ४३।१०, ७-रा० वा० ७।१० ८-रा०

उ० १२।४, ९ रा० अयो० ७७।१८ १०-वरव रा० ४९।२ ११-वरव रा २३।२

१२-रा० अर० २६।२८ १३-रा० अयो० १३।३ १४-रा अयो० ७.११० ।

तियक—

सयु— सयु पाया राज पावनि दूज ।

साजि सामान गिरिराज दाह सयु गिरिजाहि ।

सबहि के—बहु सबहि के नाम ।

सबहि पर—चित्त सबहि पर कीही ।

सबहि बहु यह कहि नाइ सबहि बहु माया ।

पन मित लाचन लाटु सबहि बू दीहउ ।

सबहि—सबहा—सबहि नचावत रामु गोसाई ।

अगद चलउ सबहि नाई । एहि बिधि सबही देत मुस ।

सबहि— प्रनवउ सबहि घरनि घरि सीसा । सबहि घर सजि निज निज द्वारे ।

परमगमुक्त—वर्ती कारक का छोठकर अय कारक-सम्बधो को स्पष्ट करने के लिए विभिन्न प्रकार के परसर्गों का भी योग मिलता है

सब के— बढी सबके चरण मुहाए ।

राम बचन सबके मन भाए । सबके बचन श्रवन मुनि ।

सबके— सबके उर आनद किया बासु ।

सबके— घनुष तोरि हरि सब के हरेउ हराय । सब के करि सनमान बहुता ।

सब केर— मन प्रसन्न सब केर ।

सब पर— सब उदार सब पर उपकारी ।

सबते कहे—भरत कहत सब कह सुमिरहु राम ।

सबते — सब ते दुलम कवन सरीरा ।

## ५ ७ निजवाचक सवनाम

मूल— आप — आपु ।

तियक— आपु आपहि ।

सम्बध— आपन—आपना, आपनि—अपनी आपुन अपन तथा अपने ।

मूल रूप— एकहि एक सिखावत जावत न आप । आप अछत जुवराज पद ।

१-रा० अयो० ३।१२ २-पा० म० २३।१, ३-रा० ल० ११९।३० ४-रा०

ल० ११८।५, ५-रा० सु० १।७ ६-जा० म० ६७।२ ७-रा० वि० ११।१४

८-रा० वि० १८।२४, ९-रा० वा० ३४८।१७ १०-रा० सु० १८।११, ११ रा०

उ० ९।२ १२-रा० वा० १८।, १-रा० ल० ३।९ १४-रा० ल० ८।०१

१५ रा० वा० ३५४।१० १६-बरव रा० १६।२ १७-रा० कि० १९।१२ १८-रा०

उ १।६ १९ रा उ० २२।१३ २०-बरव० रा० ६५।२ २१-रा०

उ० १२।१६, २० रा० वा ६४। २३-रा अयो० १।२३

- आपु— ते किए आपु समान<sup>१</sup> ।  
 भजेउ राम आपु भव चापू<sup>२</sup> । राम जासु जपु आपु बखाना ।
- आपुन— सोइ सोइ भाव देखावइ आपुन होइ न सोइ ।
- तियक रूप—
- आपु— निदहि आपु सराहहि मीना<sup>३</sup> ।  
 मनमहि मरखेउ आपु गिरिजहि वचन महु बोलत भए<sup>४</sup> ।
- आपुहि— आपुहि सुनि खद्योत सम ।  
 सम्बन्ध कारक (विशेषणवत्)—
- आपन— समुझि कठिनपन आपन लाग बिसूरन<sup>५</sup> ।  
 जेहि अनुरागु लागु चित साइ हितु आपन<sup>६</sup> ।  
 आपन चरित कहा हुम गाई<sup>७</sup> ।
- अपना— सीतहि सेइ करहु हित अपना<sup>८</sup> ।
- आपनि— कहसि न सुक आपनि कुसलाता<sup>९</sup> ।  
 आपनि ओर निहारि प्रमोद पुरारिहि<sup>१०</sup> ।
- अपनी— मैं अपनी दिशि कीह निहोरा<sup>११</sup> ।
- आपुन— आपुन मद कथा सुम पावन<sup>१२</sup> ।
- अपने— फिरत सनेह मगत सुख अपने<sup>१३</sup> । कहउ न ताहि मोह बस अपने<sup>१४</sup> ।
- अपनें— अपनें चलत न आजु लागि<sup>१५</sup> । समुझि सहम मोसह अपडर अपने<sup>१६</sup> ।
- परसग सहित—

इस प्रकार के रूपों की संख्या अत्यल्प है—

आपु कहें— माया ईस न आप कहें<sup>१७</sup> ।

तुलसी ने निजवाचक सर्वनाम के अंतगत 'निज' का प्रयोग अधिक मात्रा में किया है यथा—

एकवचन— उभय भांति देखा निज भरना<sup>१८</sup> निज परम प्रीतम दीखि लोचन<sup>१९</sup> ।

बहु विस्वास अचल निज घरमा<sup>२०</sup> । पय कहत निज भगति अनुपा<sup>२१</sup> ।

- १-रा० वा० २९।१८ २-रा० वा० २४।११, ३-रा० वा० १७।२०, ४-रा०  
 उ० ७२।२४ ख ५-रा० अयो० ८६।७ ६-पा० म० छ० ५।४ ७-रा० सु० ९।१९  
 ८-जा० म० ४८।२ ९-पा० म० ३३।२ १०-रा० कि० २।७ ११-रा०  
 सु० ११।४ १२-रा० सु० ५।९ १३-पा० म० १३५।२, १४-रा० वा० ५।१  
 १५-रा० ल० ७८।२, १६-रा० वा० २५।१५ १७-रा० अयो० २०।१२ १८-रा०  
 अयो० २०।१५ १९-रा० कि० २९।३ २०-रा० अर० १५।१७ २१-रा०  
 अर० २६।९ २२-रा० अर० २६।१७, २३-रा० वा० २।२१ २४-रा०  
 अर० २२।१९



५९३ निश्चय वाचक सवनाम

निकटवर्ती

यह-यहु- परम रम्य उत्तम यह घरनी ।<sup>१</sup> मुनु यगपति यह कथा पावनी ।<sup>१</sup>  
यह मत जो मानहुं प्रभु मोरा ।<sup>१</sup> सोउ जाने कर फल यह लीला ।<sup>१</sup>  
यह मत लछिमन न मन भावा ।<sup>१</sup> विमल बस यह अनुचित एक ।<sup>१</sup>  
बीनहि अवसि यह काजु गगन मइ धमु धुमि ।

ए- ए अक्षियां दोउ वरिनि नेहि वृषाइ ।<sup>१</sup> भवधि निराणर के फल ए ।<sup>१</sup>

एहा(—एह—एहि)—श्रुति कह सत मित्र गुन एहा ।<sup>१</sup>

एक जम कर कारन एग ।<sup>१</sup> एहि अवसर लछिमन पुर आए ।<sup>१</sup>

भए मोहि एहि आथम अए ।<sup>१</sup> एहि सर मम उत्तर तट वासी ।<sup>१</sup>

वेद पुरान मत मत ए ।<sup>१</sup> मुनहु राम सबु कारनु एहू ।<sup>१</sup>

इहि- नारि कुसल इहि काज काजु बनि आइहि ।<sup>१</sup>

इहइ- इहइ सगुन फलु दूसर नाही ।<sup>१</sup>

(—ह—यह+इ)

दूरवर्ती-

वह सो वह सोमा समाज सुख ।<sup>१</sup>

नाथ कहिअ सोइ जतन मिटइ जहि दूपन ।<sup>१</sup>

५९४ अनिश्चय वाचक सवनामो से बने रूप

अपर- अपर जलचरन्हि अपर ।<sup>१</sup>

अपर कथा सब भूप बयानी ।<sup>१</sup> अपर हुनु मुन सैल कुमारी ।<sup>१</sup>

आन- तो घर रट्टु न जान पाई ।<sup>१</sup>

लोकहु बट न आन जपाऊ ।<sup>१</sup> आन दव टिक अभिमानी ।<sup>१</sup>

कोइ- अब जीवन क है कपि आम न कोइ ।<sup>१</sup> हित अनहित नहि कोइ ।<sup>१</sup>

१- रा० ल० २।४१ २- रा० उ० १५।१ ३- रा० ल० १०।१ ४- रा०

उ० २२।९ ५- रा० स० ५८।१ —रा० अयो० १०।१३ ६- पा० म० ८०।२

७- वरव रा० ३२। ९- रा० उ० १४।१८ १०- रा० कि० ७।१२ ११- रा०

वा० १४।५ १२- रा० वि० १९।१५ १३- रा० अर० १२।४ १४- रा०

स० ६०।९ १- रा० वा० २७। १५- रा० अयो० ४।११ १७- पा०

म० ७९।२ १८- रा० अयो० ८।१४ १९- रा० उ० १२। ३ २०- पा०

म० ९।१ २१- रा० ल० ४।२१ २२- रा० वा० ०५।१ २३- रा० वा० ९।६

२४- रा० अयो० १९।१६ २५- रा० वा० ३।१० २६- रा० उ० ३।४

-वरव रा० ३८।१ २८- रा० वा० ३।२६ ।

- कोउ— कोउ मुनि मिलिहि ताहि सब घेरिहि ।<sup>१</sup>
- कछु— कहु कछु दोष न तोर ।<sup>२</sup> ताति बघ कछ पाप न होई ।<sup>३</sup>
- कछुक— तातें कछुक बात अनुसारी ।<sup>४</sup> जानउं महिमा कछुक तुम्हारी ।<sup>५</sup>
- जेंते— जग मँह सखा निसाचर जेंते ।<sup>६</sup>
- ५ ९ ५ सम्ब घ वाचक सवनाम से बन रूप
- जे— जे चरन सिव अज पूज्य रज ।<sup>७</sup>
- जे वच्छ अजमद्वत मनु भवगम्य ।<sup>८</sup> जीव जातु जे गगन उडाही ।<sup>९</sup>
- जो— देहु जो बर मागळें ।<sup>१०</sup>
- जग बालिक जो कथा गुहाई ।<sup>११</sup> जो गुनीस जेहि आयसु दी हा ।<sup>१२</sup>
- जवनि— बचेहु मोहि जवनि घरि देह ।<sup>१३</sup>
- जासु-जामू—जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी ।<sup>१४</sup>
- ब्रह्मादि गावहि जस जासू ।<sup>१५</sup> जासु कृपा सो दयालु ।<sup>१६</sup>
- जेहि-जिहि सवनामूत जेहि कथा सुनाई ।<sup>१७</sup>
- जहि— तोर कहा फुर जिहि दिन होई ।<sup>१८</sup>
- गए जहि भवन कूप ककेयी ।<sup>१९</sup> जेहि जोनि जमी कभ बस ।<sup>२०</sup>
- ५ ९ ६ निजवाचक सवनाम से बने रूप
- निज— मोहि जानिए निज दास ।<sup>२१</sup> निज दुख गिरि सम रज करि जाना ।<sup>२२</sup>
- सोचहि सब निज हृदय मझारी ।<sup>२३</sup> निज पद नयन लिए मन ।<sup>२४</sup>
- आपनि आपनी—दखहु आपनि मूरति सिय क छाह ।<sup>२५</sup>
- जानु प्रगटि चतरानन देखाई चतुरता सब आपनी ।<sup>२६</sup>

१-—रा० कि० २५४, २-—रा० अयो० ३५१८ ३-रा० कि० ९१६, ४-—रा० अयो० १६१५, ५-—रा० अर० १३१०, ६-—रा० बा० ६९१७ ७ रा० उ० १३२५, ८-—रा० उ० १३४१, ९-—रा० सु० ३३ १०-—रा० कि० १०२० ११-—रा० वा० ३०१ १२-—रा० अयो० ७१, १३-—रा० वा० १३७११ १४-—रा० वा० ६६८ १५-— १६-—रा० वा० २३, १७-—रा० सु० १३१ १८-—रा० अयो० १५४, १९-—रा० अयो० ३८१०, २०-—रा० कि० १०२१ २१-—रा० उ० ११३३१ २२-—रा० कि० ७३ २३-—रा० वा० १४३ २४-—रा० सु० ८१७,

६०

आगेच्य सामग्री म शब्द रचना स्तर पर विगणन शब्द तीन प्रकार के प्राप्त होते हैं —

(१) रुट—इस काटि के सर्वाधिक शब्द मिलते हैं यथा—

कामल सुपोती<sup>१</sup> सुन्दर नीर<sup>२</sup> दीन वचन<sup>३</sup> जलधि जड<sup>४</sup> पडित मूढ<sup>५</sup>  
कट वचन<sup>६</sup> सात दिवस<sup>७</sup> जरठ जटायू<sup>८</sup> ।

(२) यौगिक—इस काटि के भाग पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं यथा—

अनुरागी राम<sup>१</sup> भूप विरागी<sup>२</sup> कपाल सकर<sup>३</sup> दयाल प्रभु<sup>४</sup> अचल  
विपति<sup>५</sup> सुसील भरत<sup>६</sup> ।

(३) सामासिक—इस काटि के शब्द अपक्षकत कम मात्रा में मिलते हैं यथा—

गुनमय फल<sup>१</sup> सीय राम मय<sup>२</sup> भनित गुन रहित<sup>३</sup>, वरदायक राम<sup>४</sup>  
व्रतपात्रक<sup>५</sup> स्वयंवर मंगलदायक<sup>६</sup> भगति सुखदाई<sup>७</sup> तुलसी की अवधी म  
सह्यायानक सामासिक रूप भी व्यवहृत हुए हैं—

राम अष्टादश<sup>१</sup> दसचारिवप<sup>२</sup> साला पंच दास<sup>३</sup> (१००)

(१८) (१४)

ऐतिहासिक दृष्टि से आलाच्य सामग्री में प्राप्त विगणन तमम अधतत्सम  
तन्मद और विन्शी काटि के हैं यथा—

१—ग० वा० २५६।४ २—रा० उ० २९।१९ ३—जा० म० २६।१ ४—रा०  
मु० ५।२५ ५—रा० वा० २८।१२ ६—अया० ३।१५ ७—वरव रा० २०।१  
८—रा० व २९।२७ ९—रा० वा० ६।१३ १०—रा० ल० ७।१२ ११—  
१० कि० १।८ १२—रा० उ० १२।७ १—रा० अया० २९।१८ १४—रा०  
वा० १७।१८ १५—रा ७० २९।६ १६—रा० वा० ८।३ १७—रा०  
वा० १२ १८—रा० वा० २५।१८ १९—रा० उ० ९।१० २०—जा० म०  
७० १ २१—रा० अर० १६।४ २२—रा० ल० १५।१३ २३—ग० उ०  
१८ ८ १० ३ २।२५

- (१) तत्सम—महामुदितमन<sup>१</sup>, सरजू निमल<sup>१</sup>, विमलगुन<sup>१</sup>, मदु वानी<sup>१</sup>, विषम व्रत<sup>१</sup>,  
 क्रस तनु<sup>१</sup>, विपुल सेवा<sup>१</sup>, लघु रूप<sup>१</sup>, सकल सुकृत<sup>१</sup> चारु वदावा<sup>१</sup>  
 (२) अथ तत्सम समरथ हनुमानू<sup>१</sup>, दानव नीचू<sup>१</sup>, भारत कौशलनाथा<sup>१</sup>  
 (३) तदभव—इस कोटि के विशेषण, सख्या की दृष्टि से तत्सम रूपो से कम किन्तु  
 अथ तत्सम विशेषण रूपो-से अधिक सख्या मे प्रयुक्त हुए हैं—  
 लाल कमल<sup>१</sup>, कारि सापिन<sup>१</sup>, घटाकारी<sup>१</sup>, नीचि करतूती<sup>१</sup>, देव ऊँच<sup>१</sup>,  
 (४) देशज अत्यल्प, हैं—झूठि-वाता<sup>१</sup>, कवित फीका<sup>१</sup>, फीकी कया<sup>१</sup>  
 (५) विदेशी—सूप हजारे ।<sup>१</sup>

अत्य ध्वनि के आधार पर अत्य ध्वनि की दृष्टि से सज्ञा रूपो की भाँति  
 विशेषण-शब्द इस प्रकार हैं—

- (१) अ-अकारात् विशेषणो के रूप सर्वाधिक मात्रा मे प्रयुक्त हुए हैं—  
 लाल कमल<sup>१</sup>, अरुन नयन<sup>१</sup>, दड प्रीति<sup>१</sup>, खल निसाचर<sup>१</sup>, धनु कठिन<sup>१</sup>  
 कुछ शब्द ऐसे भी हैं जो अकारान्त तथा आकारात् दोना ही रूप म प्रयुक्त  
 हुए हैं यथा—

स्यामगात <sup>१</sup>	—नारि स्यामा <sup>१</sup>	सुखद धोर <sup>१</sup>	—प्रेम धोरा <sup>१</sup>
बीस भुजा <sup>१</sup>	—भुज बीसा <sup>१</sup>	दून रूप <sup>१</sup>	—प्रिय दूना <sup>१</sup>
नवल कीरति <sup>१</sup>	—नवला नारि <sup>१</sup>	घोर नरक <sup>१</sup>	—रोष धोरा <sup>१</sup>

इस सम्बन्ध मे निश्चित रूप से नही कहा जा सकता है कि इनमे (अकारात्  
 आकारात्) से कौन सा रूप छदानुरोध से प्रभावित है। आकारान्त होने से एक

१—रा० बा० ३४८१६ २—रा० उ० ३१२०, ३—रा० उ० २६११२, ४—रा०  
 अयो० २७१२, ५—रा० अयो० ३२६१२०, ६—रा० सु० ८११५ ७—रा० सु० २४११०,  
 ८—रा० सु० ५१७, ९—रा० अयो० २१३, १०—रा० बा० ३५६१७ ११—रा०  
 बा० २७११६ १२ रा० बा० ६१११, १३—रा० उ० ५१२९, १४—जा० म० ५४१२  
 १५—रा० अयो० ३११६, १६ रा० अर० १३११०, १७—रा० अयो० १२१११,  
 १८—रा० बा० ६१११, १९—रा० अयो० १६१५, २०—रा० बा० ८१२२, २१—रा०  
 बा० ९११०, २२—रा० ल० न० १४१४ २३—जा० म० ५४१२, २४—पा० म०  
 ६११२, २५—रा० कि० १०१२७ २६—रा० सु० ३१४१ २७—अरवै रा० १५११,  
 २८—रा० ल० १०८१२ २९—रा० अर० २२११६, ३०—अरवै रा० १०११, ३१—  
 रा० उ० १९१३, ३२—रा० उ० १४१५ ३३—रा० ल० १०११२, ३४ रा० सु०  
 २११८, ३५—रा० वि० ३११४ ३६—पा० म० ३९१२, ३७ अरवै रा० १७११  
 ३८—रा० ल० २१२०, ३९—रा० कि० २६१३३

मात्रा वन्ती है और अकारान्त रहने से एक मात्रा घटती है । यह समव है कि द्विविध प्रयोगों में मात्रा पूर्ति आग्रह रहा हो । कुछ प्रयोग समवत छन्दानुरोध से ही आकारान्त हैं अथवा वे अकारान्त ही हैं—

कलकठ कठोरा<sup>१</sup> पुंय बहूता<sup>२</sup> साधु कृपाला<sup>३</sup> प्रेम पुनीता<sup>४</sup> वचनपिनीता<sup>५</sup>,  
बल विशाला<sup>६</sup>, वचन कठोरा<sup>७</sup> तन स्यामा<sup>८</sup> प्रेम अमगा<sup>९</sup>, दुख अपारा<sup>१०</sup>,  
कोकिला प्रवीणा<sup>११</sup>

(२) आ—आकारान्त विशेषणों की सख्या अधिक नहीं कही जा सकती है जो शब्द मिलते हैं उनमें अधिकांशत तत्सम या अद्ध तत्सम रूप हैं—

नाना मगल<sup>१२</sup>, मोह महा<sup>१३</sup>, मबला नारि<sup>१४</sup> पट्ट पुराना<sup>१५</sup>

ऐसे शब्दों का भी प्रयोग दृष्टिगोचर होता है जो आधुनिक हिन्दी (खड़ी बोली में विद्युद्ध आकारान्त हैं किन्तु तुलसी की अवधि में उन्हें ह्रस्व (अकारान्त) रूप में लिया गया है—

भाग छोट<sup>१६</sup>, अभिलाषु बह<sup>१७</sup>, मुह मीठ<sup>१८</sup>, भल काजू<sup>१९</sup>

(३) इ—इकारान्त विशेषण पर्याप्त सख्या में प्रयुक्त हुए हैं ये प्रायः स्त्री लिंग हैं, यथा—

एहि विधि<sup>२०</sup>, असि मति<sup>२१</sup>, नीचि टहल<sup>२२</sup>, मलि बात<sup>२३</sup>, सुहाबनि निसा<sup>२४</sup>

कुछ शब्द ऐसे भी मिलते हैं जो इकारान्त और ईकारान्त दोनों रूपों में प्रयुक्त हुए हैं यथा—

धोरि खोरी<sup>२५</sup>—ममता धोरी<sup>२६</sup> पावनि सुरसरी<sup>२७</sup>—कथा पावनी<sup>२८</sup>  
चारि फल<sup>२९</sup>—दिन चारी<sup>३०</sup> विशधि प्यार<sup>३१</sup>—गवित्र विशधी<sup>३२</sup>

१—रा० वा० ९।२, २—रा० सु० ४।१५ ३—रा० वा० २८।१५, ४—रा० अयो० ३२०।२ ५—रा० सु० १४।१६ ६—रा० सु० ५४।१६ ७—रा० ल० १०।८  
८—रा० अर० १०।३९ ९—रा० अर० २६।१७, १०—रा० उ० १।२, ११—रा० कि० ३०।२० १२—रा० अयो० ६।४, १३—रा० ल० ११।५।३, १४—वरवै रा० १७।२, १५—रा० अर० २५।११ १६—रा० अर० ८।२९, १७—रा० अर० ८।२९  
१८—रा० अयो० १७।१९ १९—रा० अयो० ५।११, २०—रा० ल० १६।१७, २१—रा० कि० ७।५ २२—रा० उ० १८।१३ २३—जा० म० ५८।१, २४—पा० म० उ० १५।२ २५—रा० अयो० १।४ २६—रा० वा० १६।४ २७—रा० उ० १३।३८  
२८—रा० उ० १५।१ २९—वरवै रा० ६२।२ ३०—रा० सु० ११।४, ३१—रा० वा० २२।१४, ३२—रा० अयो० ३१।१५

मति मोरि<sup>१</sup>—मति मोरी<sup>१</sup>

सुकुमारि नारि<sup>१</sup>—सुकुमारी<sup>१</sup>

( = सज्ञावत प्रयोग )

इस सम्बन्ध में यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है कि इन द्विविध (इकारान्त । ईकारान्त) रूपों में कौन सा छदानुरोध से प्रयुक्त हुआ है । दीघरूपा (ईकारान्त) की अपक्षा ह्रस्वरूपो (इकारान्त) का प्रयोग अधिकता से हुआ है । इस ह्रस्वीकरण की प्रवृत्ति मानस में सर्वत्र मिलती है जिसे अवघी की अपनी विशेषता कहा जा सकता है ।

(४) ई—ईकारान्त विशेषण भी प्रायः स्त्रीलिंग हैं, यथा—

जीम विचारो<sup>१</sup>, मति कुतरकी<sup>१</sup>, विधि नीकी<sup>१</sup>, मति पोची<sup>१</sup>,

इकारान्त रूपा में कुछ चरण के अन्त में प्रयुक्त होने पर भी निश्चित रूप से यह नहीं कहा जा सकता कि इनमें कौन-सा रूप छदानुरोध से है ।

(५) उ—उकारान्त विशेषण भी पर्याप्त मात्रा में प्रयुक्त हुए हैं, यथा—

मृदु बानी<sup>१</sup>, मृदु वचन<sup>१</sup> रत्नवारे बट्ट<sup>१</sup>, चारु पुर<sup>१</sup>

(६) ऊ—ऊकारान्त विशेषण छदानुरोध से ही प्रयुक्त हुए हैं अथवा अकारान्त और उकारान्त ही हैं, यथा—

बस एकू<sup>१</sup>, सुमाउ अमगू<sup>१</sup>, उदधि अगायू<sup>१</sup>, कर दोऊ<sup>१</sup>

(७) ए—अत्यल्प प्रयोग मिलते हैं (लिंग-वचन कारक से प्रभावित रूप)

जे आखर<sup>१</sup> नए सुख<sup>१</sup>, सिअरे वचन<sup>१</sup> बडे नयन<sup>१</sup> नरा सगरे<sup>१</sup>

(८) ऐ—सख्या की दृष्टि से ये प्रयोग नगण्य ही हैं जो एकाक्ष प्रयोग मिलते भी हैं वे तत्सम शब्द हैं—

द्व मुज<sup>१</sup>

(९) ओ—कुछ प्रयोग मिलते हैं । अनुपात की दृष्टि से इनकी सख्या ऐकारान्त रूपों से अधिक है, यथा—

सुहावनी चद<sup>१</sup>, साच पावनी<sup>१</sup>, वापुरी चद<sup>१</sup>

१—रा० वा० १।७, २—रा० अयो० ३।८।१, ३—रा० कि० २।४, ४—रा० सु० १।२।१ ५—रा० सु० ७।२, ६—रा० वा० १।१।१, ७—रा० वा० ३।५।१।१, ८—रा० अयो० १।२।१०, ९—रा० अयो० ४।२ १०—पा० म० १।३।२, ११—रा० सु० ३।४।५, १२—रा० सु० ३।२।६, १३—रा० अयो० १०।१।३, १४—रा० वा० ७।८ १५—रा० अयो० ४।२।१।३, १६—रा० वा० ५।५।१ १७—रा० अर० ८।२।४, १८—रा० ल० १।१।२।७ १९—रा० उ० ८।१।८, २०—रा० अयो० ७।१।१।७ २१—बरख रा० १।१, २२—बरख रा० २।७।१ २३—पा० म० छ० ८।४, २४—पा० म० छ० ८।३, २५—रा० वा० ३।७।१।९

६ २ १—गुण वाचक ६ २ २—परिमाण वाचक ६ २ ३—सख्या बोधक  
६ २ ४—त्रिया मूलक (कृदन्त)

६ १ गुण वाचक

इस कोटि के विघेषणों की सख्या सर्वाधिक है । इसके अन्तगत रगमूचक, स्थान वाचक बाल वाचक, अवस्था मूचक स्थिति मूचक अवगुण मूचक गुण मूचक तथा आकार मूचक गुण भेद किये जा सकते हैं उदाहरणार्थ—

स्याम छवि<sup>१</sup> स्याम सरोज<sup>२</sup> तन द्याम<sup>३</sup>, नारि स्यामा<sup>४</sup> बरु स्यामहि<sup>५</sup>,  
गौर सरीर<sup>६</sup>, गौर मूरति<sup>७</sup> सित कीरति<sup>८</sup> सिन केमा<sup>९</sup> धवल कीरति<sup>१०</sup>

६ २ २ परिमाण बोधक

इस कोटि के विघेषण—रूप दो वर्गों में रने जा सकते हैं—

१—सावनामिक २—अय ।

सावनामिक विघेषणों को अध्याय ५ ( सवनाम ) के अन्तगत विवेचित किया गया है । अय विघेषण इस प्रकार हैं—

बहु छल<sup>१</sup> बहुत सनेहु<sup>२</sup> बटुत छोडु<sup>३</sup> महिमा अमित<sup>४</sup> अमित बल<sup>५</sup>  
मुखद धोर<sup>६</sup> धोरिहि बात<sup>७</sup>, प्रीति घोरी<sup>८</sup> त्रास घोरी<sup>९</sup> प्रम घोरा<sup>१०</sup>,

६ २ ३ सख्या बोधक

६ २ ३ १ पूर्णांक बोधक

एक दिन<sup>१</sup> एकु बत<sup>२</sup> एकइ घम<sup>३</sup> एकहि बात<sup>४</sup> एकहि बान<sup>५</sup> राच्छसी  
एका<sup>६</sup> एकु में<sup>७</sup> अनुचित एकू<sup>८</sup> एकउ बर<sup>९</sup>, इक घनही<sup>१०</sup>, दुइ सिर<sup>११</sup> दुइ आखर<sup>१२</sup>  
दुइ बरदान<sup>१३</sup> द्वा भाई<sup>१४</sup> तीन दिन<sup>१५</sup> तीनि देव<sup>१६</sup> तीनि गुन<sup>१७</sup>, चारि फल<sup>१८</sup>

१—जा० म० ४४।२ २—रा० सु० १०।५ ३—रा० अर० ८।१८ ४—रा०  
अर० २२।१६ ५—जा० म० ५७।२ ६—पा० म० ६७।१ ७—वरव रा० ३४।१  
८—वरव रा० ३४।२ ९—रा० अयो० २।१३, १०—पा० म० ३९।२, ११—रा०  
कि० ८।१७ १२—रा० अयो० ४०।१२ १३—रा० सु० १७।६ १४—रा०  
ल० २।४२ १५—रा० कि० ८।२५ १६—वरव रा० १०।१ १७—रा०  
अयो ४२।११ १८—रा० वा० ३५।१६ १९—रा० अर० २९।४६ २०—रा०  
उ० १९।३ २१—रा० उ० १।१ २२—रा० अर० ५।१९ २३—रा० अर० ५।१९  
२४—रा० अया० ३२।७ २५—रा० कि० ६।३० २६—रा० सु० ११।५,  
२७—रा० कि० २।१९ २८—रा० अयो० १०।१३ २९ पा० म० ५३।१  
३०—वरव रा ८।२ ३१—रा० अया० २६।७ ३२—वरव रा० ६९।२, ३३—रा०  
अयो० २२।९ ३४—रा० कि० ६।१ ३५—रा० सु० ५७।१६ ३६—रा०  
कि० १।२७, ३७—रा० अर० १५।१६, ३८—रा० वा० २।२९,

ल चारि', दिन चारी', पच त्रिलोचन', धरी पच', पट षड',

पूर्णांक बोधक रूपों के सामान्यत रूपान्तरो सहित प्रयोग इस प्रकार है—

१=एक, एका ( स्त्री० ) एकू, इक, २=दुइ, दोउ, द्वौ, ३=त्रि, तीन, तीनि, त्रिय, ४=चार, चारि, चारी, ५=पच, पांच, ६=षट छ ७=सप्त सत, सात, ८=अष्ट, आठ, ९=नव, नौ, १०=दस, दहें, १ =एकान्स, ग्यारह १२ = द्वादस, बारह, १४=चतुदस, चौदह, १६=सोरह, १८=अष्टादस अठारह, ३१ = एकतीस, ४९ -उनचास, ८७=सतासी, १००=सत, सय, मी, १०००=सहस्र, सहस हजार ।

तिसि वाचक गणनात्मक ( पूर्णांक ) विशेषण—इस प्रकार क विशेषण रूपों का प्रयोग अत्यल्प मिलता है, यथा—

दिन तीजे' (ततीया) फागुन पांचै' (पचमी)

६ २ ३ २ अपूर्णांक बोधक—इस कोटि के विशेषण रूपों का प्रयोग अत्यल्प हुआ है, प्रमुख रूप इस प्रकार है—

६ २ ३ ३ क्रमात्मक— अद रात्रि', अद निसि', अद भाग' पहर अढाइ', प्रथम रेख', ध्यान प्रथम', पहिलिहि पावरि', विधि-दूज', धन्य दूजा', जीम दूजी', बर दूसर', गुन दूसर',

६ २ ३ ४ गुणात्मक— दून रूप', प्रेम दूना', प्रिया दूना' चौगुन चाऊ' ६ २ ३ ५ समूहात्मक— इस कोटि के विशेषण पर्याप्त सरया म प्रयुक्त हुए हैं । रूप निर्माण की दृष्टि से इस कोटि के विशेषण—उ-ऊ, -हु-हूँ, -औ-आ के योग से सरचित है प्रमुख उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

(१)—उ-ऊ— ( छदानुरोध से—उ का परिवर्तन—उ मे ) यथा—

१—रा० वा० १।४ २—रा० सु ११।१४ ३—पा० म० ५२।१ ४—रा० वा० ३५।२०। ५—रा० उ० १३।३५ ६—पा० म० ५।१ ७—रा० म० ५।१ ८—रा० कि० ६।५ ९—रा० ल० १००।१२ १०—रा० वा० ९।३, ११—रा० अयो० ३१२।१५, १२—रा० वा० १०।७ १३—रा० वा० २७।५ १४—पा० म० ११७।१ १५—रा० वा० २७।२ १६—रा० वा० ३५२।१०, १७—रा० अयो० १६।२ १८—रा० अयो० ३२।८ १९—जा० म० ६।० २०—रा० सु० २।१८, २१—रा० सु० १५।२०, २२—रा० कि० ३।१४, २३—रा० अयो० ५१।१५ ।



असियाँ दोउ', दोउ तन' दोनउ भाई', अबिषा  
दोऊ' तीनिउ भाई' चारिउ चरन' मुकृती चारिउ'

(२)-हुँ-हैं (-ई छदानरोध से), यथा—

हुहुँ समाजा', हु' भाई', तिहुँ काल', ति' लोका'  
लोक ति' चहुँ युग', चहुँ गासा', तमहुँ दिस',

(३)-हुँ-हूँ (-हूँ छदानरोध से प्रयुक्त)—हुँ भाई', दिसि हूँ

(४)-औं-अत्यल्प प्रयोग मिलते हैं—लिए दुऔं जन पीठि चगाई ।

६ २ ३ ६ अनिच्छय सख्या बोधक-इम कोटि के प्रमुख विभाषण रूप इस प्रकार हैं—  
काटिह जतन', सब गुजन' सवु समाज',  
सवाहि सतापू' सवही बिधि', बहूत दिन', दासी  
दाम बहुरे', सिपु बहुताई' वतुप्रिय' सकल  
मनोरथ' बिपुल बाजने' सुग अगनित' अखिल  
लोक' कछक दिवस' बिबिध जनु' अमित  
नाम' वजनियाँ नाना'

६ २ ४ त्रिधा मूलक (कदन)

इस प्रकार क विशेषण धातु म-त-ती क-आ-न-नि-नी  
(स्त्री०) वारे तथा क्रियायक सजा म-हार-हारा-हारी -हारे -न -नि (स्त्री०)  
प्रत्यया के योग से निर्मित हैं । उदाहरणार्थ—

(१) त-ती-चलत विरचि', विलपत नपहि' जात पवनसत', लसत कर'  
सामत विलास' जरत रिम', सरतह फरत' राजत रामु' ।

१-बरव रा० ३६।२	२-जा० म० ४।२,	३-रा० उ० २६।७	४-रा०
अर० १५।८	५-रा० उ० १।१।	६-रा० उ० २१।५	७-रा०वा० २२।१२
८-रा० अयो० ३१८।११	९-रा० वा० ३५७।३	१०-पा० म० १४।१	
११-रा० वा० २७।१	१२-रा० सु० ६०।८	१३ बरव रा० ३९।१	१४-रा०
ल० १०८।२८,	१५-रा० वा० १४।२	१६-रा० अयो० ३१५।७	१७ जा०
म २।१	१८-रा० कि० ८।३	१९-रा० स० ३।३८,	२०-रा०
अयो० १।१	२१-रा० अयो० ३१४।१३	२-रा० सु० ७।१४	२३-रा०
जया० ७।११	२४-रा० वा० ३३९।३,	२५-रा० स ४।८	२६-रा०
अया० ८।८	२८-रा० सु० १४।२	२८-रा० वा० ३४८।२	२९-रा०
उ० ६।२६,	३०-रा० सु० ५७।१०	३१-रा० सु० १६।७	३२-रा० कि १५।२१
३-रा० वा० २।१४	३४-रा० वा० ३५१।१५	३-रा० सु० ४।१७	
६-रा० अयो० ७।१	३७-रा० म० १।१	४८-जा० म० १०।११	३९-रा०
अया० ७।२०	४०-रा० अयो० ३१।१	४१-रा० अयो० २९।१६,	४२-रा०
८० ११।१।			

- (२) -क-सतपद अवराधक', मुनि पालक', पर निदक', द्विज निदक',  
 (३) -आ-नगर चनावा', दडक बन सुहावा',  
 (४) न-नि-नी-श सुहावन', व्याह भावन', मगल करनि', कलिमल हरनि',  
 सरयू नसावनि', राति सुहावनि', दुख हरना',  
 (५) -बारा बारे जीवन रखवारा', ताल रखबारे',  
 (६) -हार-हारा हारी (स्त्री०) -हारे ( पु० बहुवचन तथा त्रियक ए० व० )  
 राखनहार अनुग्रह' सवु सोवनहारा', सिय जाननिहारी'  
 सभु नेचावनहारे' ।

१-रा० अर० ७३४ २ रा० अर० १९१० ३-रा० उ० १०६१४ ४-रा०  
 अयो० २११४७ ५-रा० अयो० १३११ ६-रा० बा० १५१२२, ७-रा० ल० १२०१४  
 ८-पा० म० २१२, ९-रा० अर० ३१७ १०-रा० उ० १५११८ ११-रा० बा० १३१७  
 १२-जा० म० छ० १५१२ १३-रा सु० ५३११३, १४-जा० म० २५१२  
 १५-रा० अयो० ९३१३, १६-रा० अयो० १००१५ १७-रा० अयो० ९५११७  
 १८-जा० म ४११, १९ रा० बा० १६१२

तुलसी की अवधी रचनाओं में प्रयुक्त समस्त अव्यय शब्दावली को अथ एव कायकारिता की दृष्टि से निम्नवर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

१-क्रिया विशेषण २-समुच्चय बोधक ३-विस्मयादि बोधक ४-परसर्गाय रूप ५-बलात्मक शप्ताश (निपात) ।

तुलसी की अवधी रचनाओं में इन सभी प्रकार के अव्ययों के प्रयोग पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं ।

### ७ १ क्रिया विशेषण

अथ की दृष्टि से इसके चार उपवर्ग किए गए हैं—

१-स्थान वाचक २-काल वाचक ३-परिमाण वाचक ४-रीतिवाचक ।

#### ७ १ १ स्थान वाचक क्रिया विशेषण

इसे भी दो वर्गों में विभाजित किया है—

१-स्थिति वाचक २-दिशा वाचक

तुलसी की अवधी रचनाओं में प्रथम वर्ग के रूपों की संख्या द्वितीय वर्ग के रूपों की संख्या से कहीं अधिक है ।

#### ७ १ १ १ स्थिति वाचक क्रिया विशेषण—कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

वह<sup>१</sup> वहाँ<sup>२</sup> निरन्तर<sup>३</sup> तहाँ<sup>४</sup> जहाँ<sup>५</sup> समीप<sup>६</sup> आगे, पीछे<sup>७</sup> तहवाँ,<sup>८</sup>  
जहवाँ<sup>९</sup> तह<sup>१०</sup> माँव<sup>११</sup> मध्य<sup>१२</sup> द्विग<sup>१३</sup> ऊपर<sup>१४</sup> नियरानि<sup>१५</sup>

१-जा० म० छ० १।४ २-रा० सु० ५।१४, ३-रा० कि० १९।३, ४-रा० सु० १८।३ ५-रा० अर० २८।१२ ६-रा० अयो० ३१९।९ ७-रा० बा० ३६०।११ ८-रा० अर० २७।१२, ९-रा० सु० ८।११ १०-रा० सु० ८।११ ११-रा० कि० १।३ १२-रा० अर० २१।२७ १३-जा० म० १२।५ १४-रा० वा० ४।८३, १५-रा० ल० १०।१३, १६-जा० म० १५।१

नियराहि<sup>१</sup>, सामुख<sup>२</sup>, सामुहें<sup>३</sup> अनत<sup>४</sup>, अगहुड<sup>५</sup>, यहाँ<sup>६</sup>, इहाँ<sup>७</sup>, कहु<sup>८</sup>, बाहर<sup>९</sup>  
भीतर<sup>१०</sup>, बाहेरहु<sup>११</sup>, पासा<sup>१२</sup>, पासू<sup>१३</sup>, कही<sup>१४</sup>, बीचु<sup>१५</sup>, उत<sup>१६</sup>, इत<sup>१७</sup>

दोहरे स्थिति वाचक क्रिया विशेषण—प्रमुख उदाहरण इस प्रकार हैं—

जहें जहें—जहें जहें जाहि देब रघुराया ।<sup>१८</sup> जहें जहें कृपासिबु बन ।<sup>१९</sup>

तहें तहें—करहि भेध तहें तहें नम छाया ।<sup>२०</sup>

तहें तहें ईसु यह हमही ।

कहु कहु—कहु कहु सरिता तीर उदासी ।<sup>२१</sup> कहु कहु वटि सारदी थोरी ।<sup>२२</sup>

इत उत—इत उत चितम चला भडि हाई ।<sup>२३</sup> सिंह ठवनि इत उत चितव ।<sup>२४</sup>

अनत अनत—उपजहि अनत अनत छवि लहूही ।<sup>२५</sup>

इहाँ कहीं—इहा वहाँ सज्जन कर बासा ।<sup>२६</sup>

जहु कहु—जहु कहु फिरत निसाचर पावहि ।<sup>२७</sup>

जहें तहें—जहें जहें राम ब्याह सब गावा ।<sup>२८</sup> जहें तहें सोचहि नारि नर ।<sup>२९</sup>

### ७ १ १ दिसावाचक क्रिया विशेषण

प्रमुख रूप यहाँ दिए जा रहे हैं—दरिहि<sup>१</sup>, दहित<sup>२</sup>, वाम<sup>३</sup>, दूरि<sup>४</sup>  
पराई<sup>५</sup>, दूरी<sup>६</sup>

७ १ २ कालवाचक—क्रियाविशेषणों को तीन उपवर्गों में विभक्त किया जा सकता है—

१—समय वाचक, २—अवधि वाचक ३—पौन पुन्र वाचक ।

इनमे से प्रथम उपवर्ग के रूपों की संख्या सब से अधिक तथा तृतीय उपवर्ग की सब से कम है, यथा—

१—जा० म० १२०।२ २—रा० उ० ३।२४, ३—रा० अयो० ३१४।१४, ४—रा० उ० १४।१४, ५—रा० अयो० २५।२, ६—रा० ल० ११९।२२ ७—रा० ल० ११९।१९ ८—पा० म० ६३।१ ९—जा० म० १३।२ १०—रा० बा० ३५२।१३, ११—रा० बा० २१।१९, १२—रा० अर० १२।२ १३—रा० बा० १७।८, १४—जा० म० ४।२, १५—रा० अयो० १८।२, १६—रा० अर० २८।१८, १७—रा० अयो० ४।१७, १८—रा० ल० ११९।२७ १९—पा० म० १५।१, २०—रा० अपा० २४।१० २१—रा० उ० २९।९, २२—रा० कि० १६।१९ २३—रा० अर० २८।१८ २४—रा० ल० १८।२३, २५—रा० बा० ११।६ २६—रा० सु० ६।२, २७—रा० ल० ५।१३ २८—रा० बा० ३६।१७, २९—रा० उ० १।३ ३०—रा० ल० १०७।२९ ३१—रा० अयो० २०।१४ ३२—रा० अर० १९।८ ३३—रा० अर० २७।२३, ३४—रा० अर० २७।२३, ३५—रा० अर० २७।२६ ।

७ १ २ १ समय वाचक—

वर्गि' वह रि' बहोरी', प्रयमि' फरि', किरि', कालि', काली',  
 तुरत' तुरिन', तुरतहि', तरता', आजु', आजू', अजहू' तव',  
 तवहि' तवही' तवहू', प्रयम', अव'

समय वाचक क्रिया विनोपण तथा स्थिति वाचक क्रिया विनोपण के अतगत  
 आने वाले आग' एव आगें पाछे एव पाछें दोना ही अर्थ की दृष्टि से भिन्न हैं।  
 दोना म भं स्पष्ट करने के लिए उदाहरण दिये जा रहे हैं, यथा—

समय वाचक—पाछें—पाछें सुमिरसि मा महुँ रामा ।"

पाछे—पाछे रावत दूर पठाए ।"

आगें—मुनत नीक आगें दुख पाता ।"

स्थिति वाचक—पाछे—आगे राम अनुज पुनि पाछे ।"

मम पाछे घर धावत ।"

आगे—सुख सपना राखि सब आगे ।"

मुनि राव आगे लेन आयत ।"

७ १ २ २ अवधिवाचक क्रिया विनोपण—तुलसी की अवधि रचनाओं में इस वर्ग के  
 रूपा की महत्वा समय वाचक क्रियाविनोपण रूपों की संख्या से कुछ कम है। प्रयुक्त  
 प्रमुख रूप इस प्रकार हैं—

सना' सवना' निरतर' अनत' सतत' कवहू', गिसिवाह'  
 नित' तिहि' अजहू' नित्य' निसिदिन जनम भरि' अवधि लागि'  
 आजु लागि'

- १-रा० वा० ३५३९ रा० अयो० ३१८।१६, ३-रा० वा० १६।३ ४-रा० अर०  
 २७।२९ ५-जा० म० १२।२, ६-रा० वा० २९।१२ ७-रा० अया० ११।७  
 ८-रा० अयो० ११।११ ९-रा० कि० ५।११ १०-रा० उ० २।४६ ११-रा०  
 सु० ६०।१२ १२-रा० उ० १९।१९, १३-जा० म० ५६।२ १४-रा० अर०  
 २०।२७ १५-जा० म० ७।११, १६-जा० म० ७।१२, १७-रा० अर० २९।३६  
 १८-रा० ल० १।७।११, १९-रा० अयो० १३।१५, २०-जा० म० ६९।१, २१-  
 पा० म० ७।४।२ २२-रा० अर० २७।३०, २३-रा० सु० ५१।१७ २४-रा० ल०  
 ९।७ २५-रा० अर० ७।२ २६-रा० अर० २६।२५ २७-रा० वा० ३५।२।२  
 २८-जा० म० ल० ५।२ २९-रा० वा० ३६।१।२७ ३०-रा० वा० ३६।१।२४  
 ३१-रा० ल० ११।१।१५ ३२-रा० ल० १०।७।२८ ३३-रा० ल० ३।१२ ३४-  
 ग० अर० ४।४ ३५-पा० म० ३।७।१ ३६-जा० म० १५।० ३७-वरव रा०  
 ६।१२ ३८-रा० अया० २७।१९ ३९ रा० उ० १३।३२ ४०-रा० अर० ६।१४

७ १ २३ धीन पुत्र वाचक—इस प्रकार के क्रिया विशेषणों में या तो समय सूचक शब्दों की प्रत्यक्ष रूप में या 'प्रति लगाकर अप्रत्यक्ष भावक्ति होती है। तुलसी की अवधी रचनाओं में इन रूपों की संख्या 'कम ही है। कुछ प्रमुख रूपों का प्रस्तुत है, यथा—  
 निम्न निम्न', पुनि पुनि', छिनु छिनु', बार बार', बारहिबार', बहोरि बहोरि', फिरफिर', प्रतिदिन', निमित्यि-निमित्यि'

७ १ २० परिमाण वाचक क्रिया विशेषण

इस प्रकार के क्रियाविशेषण तीन उपवर्गों में विभक्त किए जा सकते हैं। प्रत्येक के उदाहरण इस प्रकार हैं—

७ १ ३१ आधिक्य बोधक

अति—करत कथा मन अति कदराई ।' सीय बरन सम केतिव अति हिय हारि ।''

बहुत—परवस परी बहुत बिलपाता ।'' बोली बचन बहुत मुसकाई ।''

निपट—अहह नाथ ही निपट बिसारी ।''

अधिक—चपक हरवा अग मिलि अधिक सोहाइ ।''

सिय तुव अग रग मिलि अधिक उदोत ।''

७ १ ३४ 'मूनता बोधक

कछु—पुनि पुनि करै प्रनाम न कछु कहि आवै ।''

जातें मोहि न कहत कछु राऊ ।'' जो असत्य कछु कहब बनार्ड ।''

७ १ ३३ तुलना वाचक

सबते अधिक राम जपु तुलसी दास ।'

७ १ ४ रीतिवाचक क्रियाविशेषण

इन रूपों को तीन उपवर्गों में बाटा जा सकता है—

१ प्रकार वाचक २-कारण वाचक ३-निर्दिष्ट वाचक

आलोच्य भाषा में संख्या की दृष्टि से सर्वोत्कृष्ट प्रयोग 'थम रग' के तथा पूर्वाधिक प्रयोग दूसरे वर्ग के रूपा के हैं। प्रयुक्त प्रमुख रूप इस प्रकार हैं—

१-रा० अ० १४८ २-पा० म० १३१, ३-जा० म० ११०२, ४-रा० अयो० ३२०१ ५-रा० सु० ५७२३, ६-रा० अयो० ३१८१६ ७-रा० अ० ६१७ ८-रा० उ० २७३, ९-रा० उ० ८१८ १०-रा० बा० १२१२६ ११-बरव रा० ३२१ १२-रा० कि० ५१८ १३-रा० अ० १७१८, १४-रा० सु० १४१४ १५-बरव रा० १८१, १६-बरव रा० १३१ १७ पा० म० ८९१ १८-रा० अयो० ४२१५ १९-रा० अयो० १९१९, २०-बरव रा० ५२१

७१४१ प्रकार वाचक

जस' बस' गहगा', इव', इति', बन्नाचिन्', वेगि', वेगी', बछे',  
अनयासा', जया'' तैसे''

७१४२ कारण वाचक

का'', काह', काहा'', का३'', बीमा'': बस'', बिन'', बत', ताते''

७१४४ नियमवाचक

न—अकथ अनामय नाम न ह्या ।''

सकहि न धरनि गिरा अहिबाहू ।''

दधि करो बछु बिनती विलगु न मानव ।'

नहि—सहस सप नहि कहि सकहि ।''

कविन रीति नहि जानउं कवि न कहावउं ।''

बालि ह्याहि सिय देत दाप नहि भूपहि ।'

नही—विरध विरचि बनाइ बांधी दचिरता रधी नही ।

जिनके पद पकज प्रीति नही ।''

नाही—मोरे अनुधर कह कोउ नाही ।'

भूरि भाग दसरथ सम नाही ।''

नाहिन—भूरि भाग तुम सरिस कहहुं कोउ नाहिन ।''

देखत गरब रहत उर नाहिन ।''

जनि—मुनि आचरज कर जनि कोई ।' एक कहहि मलि भूप दहि जनि ।''

तुलसी ने अवधी रचनाओं में ठेठ ब्रज भाषा का शब्द जनि का प्रयोग नहीं के अर्थ में अनेक स्थलों पर किया है ।

१—रा० अया० ३१६।१६ २—रा० अयो० ३१।१९ ३—रा० अयो० २२।१०

४—रा० अयो० १२१।३३ ५—रा० ल० १११।३१ ६—रा० कि० ७।६१ ७—

रा० अर० १६।३ ८—रा० ल० १०९।४ ९—रा० अयो० ४३।३ १०—रा० बा०

४।३, ११ रा० बा० १।३७ १२—रा० सु० ५४।२ १३—रा० अयो० ३९।६,

१४—रा० अयो० २६।६ १५—रा० उ० १८।१० १—रा० कि० १२।१० १७—

रा० कि० ७।३ १८—वरव रा० ३५।२ १९—रा० अर० २९।२१ २०—जा० म०

१०।२ २१—रा० ल० ११२।११ २२—रा० बा० २२।४ २३—रा० बा० ३६।१२

२४—पा० म० ४३।१ २—रा० उ० २६।१९ २६—पा० म० ३।१, २७—जा०

म० ६९।२ २८—जा० म० ४।१ २९—रा० उ० १४।२० ३०—रा० अर० २३।२

३१—रा० अयो० २।८, ३२—पा० म० १६।१ ३३—रा० अयो० १४।६, ३४—

रा० बा० ३।३, ३५—जा० म० ६६।१

रीतिवाचक क्रियाविशेषण के अन्तर्गत वर्णित अव्यय पदों के अतिरिक्त कुछ ऐसे प्रयोग भी इस कोटि में रखे जा सकते हैं जिनमें 'विधि' तथा 'भाति' के योग से विविध सावनामिक विशेषण—एहि, जेहि कहि तथा तेहि जुडकर क्रियाविशेषण के समान रचना बनती है। उदाहरणार्थ—

भाति—तेहि भाति<sup>१</sup>, एहि भाति<sup>२</sup> एही भाति<sup>३</sup> कवन भाति, केहि भाति<sup>४</sup>  
विधि—एहि विधि<sup>५</sup>, एहि विधि<sup>६</sup>, कवन विधि<sup>७</sup>, केहि विधि<sup>८</sup>, जेहि विधि<sup>९</sup>०

## ७२ समुच्चय बोधक अव्यय

इस प्रकार के रूपों के दो उपवर्ग किए जा सकते हैं—

१—समानाधिकरण, २—व्यधिकरण,

### ७२१ समानाधिकरण

तुलसी ने अपनी अवधी रचनाओं में जिन रूपों का प्रयोग किया है उनके विवचन की सुविधा की दृष्टि से चार विभेद किए जा सकते हैं—

१—सयोजक, २—विभाजक, ३—विरोध सूचक (प्रतिषेधक), ४—परिणाम सूचक।

७२२१ सयोजक—इस विभेद के अन्तर्गत प्रमुख रूप अर्ह तुलसी की अवधी रचनाओं में पर्याप्त रूप से व्यवहृत हुआ है यथा—

अरु—सुनहिं मुदित मन पितु अरु माता ।<sup>११</sup> हरि तीहसि सबगु अरु नारी ।<sup>१२</sup>

धीरज धरम मित्र अरु नारी ।<sup>१३</sup> नाथ बालि अरु म दोड भाई ।<sup>१४</sup>

७२२२ विभाजक—सयोजक रूपों की अपक्षा विभाजक रूपों का अधिक प्रचलन है—

अथवा—सरस होउ अथवा अति फीकी ।<sup>१५</sup>

त—अमिति करहु त कही उपाऊ ।<sup>१६</sup>

नत—सुमुखि होत न त जावन हानी ।<sup>१७</sup>

कि—की—की मनाक कि रागपति होइ ।<sup>१८</sup>

सा कि दोष गुन गाइ जो जेहि अनुरागइ ।<sup>१९</sup>

सुधा कि रोगिहि चाहइ रतन कि राजा ।<sup>२०</sup>

१—रा० सु० ५९१८, २—रा० वा० २३१७ ३—रा० मु० ११६, ४—रा० उ० ७११  
५—पा० म० १४०१ ६—रा० अयो० ३१०१ ७—रा० मु० १११९ ८—रा० वा०  
३५५११, ९—रा० वा० ३५६१५ १०—रा० उ० २४१३, ११—रा० वा० ८१८  
१२—रा० कि० ६१२२ १३—रा० अर० ५११३ १४—रा० कि० ६११ १५—  
रा० वा० ८१२, १६—रा० अयो० २११५, १७—रा० मु० १०१६, १८—रा०  
अर० २९१२५, १९—पा० म० ६०१२, २०—पा० म० ४७१०।



किया—नुप अमिमान मोहबस किया ।'

नाहित—नाहि त जरिहि जनम मर छानी ।' नाहित मीन रहव तिन राती ।'

७ २ १ ३ प्रतिषेधक—इस कोटि व राग अत्यल्प है यथा—

प—आयसु प न रेहि रघुनामा ।' जो प समर सुभट तव नाया ।'

७ २ १ ४ परिणाम सूचक—इस वग म जात तथा 'तात रूप प्राप्त है यथा—

तात—तात तात न कहि समभायते ।' तात मैं नहि प्रमु पहिचाना ।'

### ७ ३ २ व्याधिकरण

इस प्रकार के रूप एक मुख्य वाक्य का सबध एक या एक से अधिक वाक्यों से जोड़ते हैं । इन्हें तीन उपवर्गों में बाँटा जा सकता है—

१—उद्देश्य सूचक २—संकेत ३—स्वरूप वाचक

७ २ २ १ उद्देश्य सूचक—

जातें—जातें होहि धरन रति ।'

जी—जी रघुबीर अनुग्रह कीहा ।' जो कृपाल मोहि ऊपर भाऊ ।'

७ २ २ २ संकेत वाचक—

जौ" जौ", जौ ली", जहपि", तहपि" तदपि" ली" कि" की", किया", किषी" धी", बर" बरक"

७ २ २ ३ स्वरूप वाचक—

मनु", मनहु", मानहु", जनु"

१—रा० ल० २०१२, २—रा० अयो० ३४१६ ३—रा० अयो० १६१८, ४—रा० सु० ५५१० ५—रा० ल० २८११, ६—रा० अयो० ६७१०, ७—रा० कि० २१२८ ।

संकेत वाक्य अव्यय के सम्बन्ध में उल्लेखनीय बात यह है कि यह अव्यय प्रायः जोड़ में ही प्रयुक्त होते हैं किन्तु काव्य में क्रम प्रगुर्ता क छदानुरोध के कारण कभी कभी एक का लोप भी हो जाता है ।

८—रा० अर० १४१९, ९—रा० सु० ७१९, १०—रा० उ० १२१२ ११—जा० म० ७४११ १२—रा० अर० १६१८ १३—पा० म० ७८१२ १४—रा० अर० १३१२३ १५—रा० ल० १०१२२ १६—रा० कि० ६१२६ १७—रा० ल० न० ३०१३ १८—रा० अयो० २८१० १९—रा० कि० १११९ २०—रा० ल० २०१९, २१—रा० अयो० ५०१२४, २२—रा० अयो० ४११२ २३—रा० अयो० ४७१५ २४—जा० म० ५१४ २५—पा० म० ७११२ २६—रा० अयो० २०११०, २७—रा० ल० १०१३३१, २८—जा० म० छ० ११२

### ७ ३ विस्मयादि बोधक अव्यय

इस कोटि की शब्दावली को भावाभिव्यक्ति के आधार पर निम्नलिखित उप वर्गों में विभाजित कर सकते हैं—

#### ७ ३ १ शोक बोधक

'अहह', हा'

#### ७ ३ २ सबोध बोधक

अहो' ए', रे', रे रे', हे', हो' ।

#### ७ ३ ३ तिरस्कार बोधक

रे'

#### ७ ३ ४ हृष बोधक

जय', जय जय'', जय जयति'', जय जए'', घनि'' घन्य''

### ७ ४ परसर्गोय शब्दावली

सज्ञा-पद-रचना के अतगत उल्लिखित परसर्गों के अतिरिक्त कुछ अन्य शब्द भी हैं जो पदों के अतगत अपना स्वतंत्र अस्तित्व (अथ श्री दृष्टि से) बनाए हुए हैं। पदों के बीच भिन्न भिन्न सबधों को प्रगट करने के लिए प्रयुक्त होते हैं। इन्हें यहाँ पर सग के रूप में अपनाया गया है—

बीच—बीचि—चितवनि बसति सनक्षियनु अखियनु बीच ।''

कीहि प्रीनि कछ बीच न राखा ।'

गिरा अरय जल बीचि सम ।''

ओर— सम्मुख सबधी ओर ।''

भर—भरि— मिटहि दोष भर रजनी के ।'

जोजन भरि तेहि बदन पसारा ।''

मांस-भँसारी—मुनि भग मांस अचल होइ बसा ।''

भयउ कौलाहल नगर भँसारी ।''

- १—रा० सु० १४४, २—रा० कि० ५१९ ३—रा० ल० १६१२ ४—रा० उ० ८१३  
 ५—रा० ल० ३११३, ६—रा० अर० २९१२१, ७—रा० अर० ३०११७, ८—रा०  
 ल० न० १०३, ९—रा० ल० ३३१९, १०—पा० म० ५१ ११—पा० म० २६१२  
 १२—रा० उ० १२१८, १३—जा० म० ११२११, १४—जा० म० ४९१२, १५—रा०  
 उ० २०१२ १६—बरव श० ३०१२, १७—रा० कि० ५११ १८—रा० वा० २११२१  
 १९—रा० ल० १२१२८, २०—रा० सु० २११३ २१—रा० उ० ६९११७, २२—रा०  
 अर० १०१२९ २३—रा० ल० १८११५

मानहि मय निज ह्यय मजारी ।'

पारा जग पारा तारा भव ।' लखि न परेउ तपु पारन बट हिये हारेउ ।'  
पार-पारहि-परहि—गिधु पार प्रनु डरा कीहा । चदि चदि पारहि जाहि ।'  
जोगु—जोगु—सिला दश सह चउ पराई ।'

जोगु—जागु—पाये जागु कपारु अभागा । राम सरिस गुन बानन जोगू ।'  
रहित—विसमय हरय रहिा रघराऊ ।' जो मुत सहित करहु सबबाई ।'  
मम—तुलसी राम राम मम मित्र न आन ।'' मुष्टि प्रहार बज्य मम लागी ।''

करन बटक चट बरन बिगिय मम हिय हए ।''

नाय जि हहि गुधि करिअ तिहहि मम तेइ हर ।'

सरिस—शृपाल भयकर सरिस ।'' भूरि भाग तुम सरिस कतहु कोउ नाहिन ।''  
समान—तन समाग प्रलोकनि मनही ।' तन समान सुधीबहि जानी ।''  
समाना—जग जोधा को मोहि समाना ।'' देखत बालक बाल समाना ।'  
लाग—गुरु पद रजहि लाग छरमार ।''

लगि—जीव नित्य बेहि लगि तुम रोया ।'' मोहि लगि सहेउ सर्वाहि सतापू ।''  
लागि—मम हित लागि जम इह हारे ।'' दरसन लागि कोमलापीसा ।''

मम हित लागि तजे इन प्राना ।''

लागी—सब तब कर राम हित लागी ।' तब लगि रहहु दीन हित लागी ।''

लगे—मिरजहि लगे हमार जियनु सुख सपति ।''

बिनु—बिनु कारन दोनट्याल हित ।' सो कि स्वयवर आनिहि बालक बिनु बल ।''  
सग—तिन्हू के सग नारि एक स्यामा ।''

बठहि सर्मा सग द्विज सज्जन ।'' सग नारि सुकुमारि सुहाई ।''

१—रा० ल० १४३ २—रा० वि० १।२९, ३—पा० म० ४८।१, ४—रा० ल०  
५।५ ५—रा० ल० ६।२२ ६—रा० वि० ६।१६ ७—रा० अयो० १६।३, ८—  
रा० अयो० ५०।१३ ९—रा० धयो० १२।५ १०—रा० अयो० १९।५ ११—  
बरव रा० ६७।१ १२—रा० वि० ८।६ १३—पा० म० ६१।१, १४—पा० म० ७६।२  
१—रा० वि० १।८ १६—पा० म० १६।१, १७—रा० सु० ५५।४, १८—रा०  
वि० ८।२ १९—रा० ल० ८।४ २०—रा० अर० २२।११ २१—रा० अयो०  
३१।२।२४ २२—रा० वि० ११।१० २३—रा० अयो० १३।१३, २४—रा० उ०  
८।१ २५—रा० उ० २७।२ २६—रा० ल० ११।३ २७—रा० ल० ५।९  
२८—रा० अर० ८।११ २९—पा० म० १८।२ ३०—रा० ल० ११।२१ ३१—  
जा० म० ७७।२ ३२—रा० अ० २२।१६, ३३—रा० उ० २६।२, ३४—रा०  
वि० २।४

नाई— तुम्ह पूछहु कस नर की नाई ।' पूछेहुमोहि मनुज की नाई ।'  
ऊपर—सुधा वषिट म दुहुँ दल ऊपर ।' घवल धाम ऊपर नम चुवत ।'  
दूरि—दूरी—कवहुँ निवट पुनि दूरि पराई ।' दूरि फराक हचिर सो घाटा ।'  
कृत दूरि महा महि भूरि म्जा ।' करइ क्रोध जिमि घर मइ दूरी ।'

### ७५ बलात्मक शब्दाश (निपात)

अवधी मे कुछ अव्ययात्मक शब्दाश पाये जाते हैं जो वाक्य स्तर पर किसी पद विशेष पर बल प्रदान करने में सहायक होते हैं। तुलसी की अवधी रचनाओं में इन बलात्मक शब्दों की संख्या सीमित है। समस्त अव्ययात्मक शब्दार्थों का दो भागों में बाँट सकते हैं—एकाधिक तथा समेताधिक इन दोनों ही रूपों का निमाण निम्न प्रत्नों के योग से हुआ है—

हि—हि—इ या ही—ई

हैं—उ या हूँ—उँ गथवा ह—ऊँ

हि—हि—इ— एकहि', छुवतहि', सुनतहि'', अर्वा'', जातहि'', सोइ'', सबइ''

हों— अबही''

हैं—उ— दुहुँ'', बहूँ'', कतहुँ'', अजहुँ'', भरतहुँ'', आदिहुँ'', लछिमनहुँ'', कसेहुँ'', मारहुँ'' सोउ'' दोउ', एकउ'', चारिउ''

हैं— हमहुँ'' अजहूँ'' तुहूँ'' पिताहूँ'', नारहूँ'', अजहूँ'', नाहित'' नतु', त', वै'' (= ही निश्चय)



१-रा० कि० २।१६ २-रा० अर० १३।१८, ३-रा० ल० ११४।११ ४-रा० उ० २७।२३, ५-रा० अर० २७।२३ ६-रा० उ० २९।१, ७-रा० उ० १४।६ ८-रा० कि० १५।८, ९-रा० कि० ६।३०, १०-रा० बा० ३४३।१५ ११-रा० सु० १३।१० १२-पा० म० ७।११, १३-रा० सु० ५४।४, १४-रा० बा० ७८।११ १५-पा० म० १०६।२ १६-रा० ल० १०।१५, १७-जा० म० ६३।१ १८-रा० बा० २२।१५ १९-रा० कि० २४।१, २०-रा० अयो० ३७।१९ २१-रा० उ० ८।१६, २२-रा० सु० १३।१२, २३-रा० अर० २४।९ २४-रा० कि० १८।३, २५-रा० कि० १८।४, २६-पा० म० ७४।०, २७-रा० अयो० ३१२।१२ २८-रा० अर० ८।११, २९-रा० उ० २९।६ ३०-रा० ल० ८१।३ ३१-रा० कि० ९।२३ ३२-रा० अयो० ३२।१३, ३३-रा० बा० ६४।४, ३४-रा० बा० ६८।३, ३५-रा० बा० ८०।२ ३६-रा० अयो० २।११ ३७-रा० उ० ११५।३ ३८-रा० अयो० ३४।१६, ३९-रा० अयो० २७।१७।

## ८० आलोच्य भाषा में प्राप्त होने वाले क्रिया

रूप काल वाच्य वचन पुरुष लिंग अथ आदि की छोटन रचनात्मक प्रवृत्तियों से प्रभावित है। प्रत्येक क्रिया रूप की रचना इन समस्त व्याकरणिक प्रवृत्तियों से प्रभावित न होकर प्रायः उनमें से अधिकांश प्रवृत्तियों से प्रभावित है। कुछ क्रिया रूप मस्कृत से प्रभावित हैं यथा—

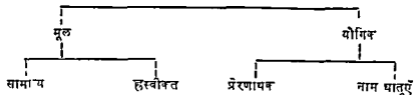
जगामि<sup>१</sup> नमामि<sup>२</sup> स्रवन्<sup>३</sup> पत्सवत<sup>४</sup> निस्तरद्<sup>५</sup> राजति<sup>६</sup>, भ्राजहि<sup>७</sup> प्रवसहि<sup>८</sup>,  
निगमहि<sup>९</sup> पठति<sup>१०</sup>, विचरति<sup>११</sup> भजति<sup>१२</sup> विभ्रजि<sup>१३</sup> मज्जहि<sup>१४</sup> भजामह<sup>१५</sup>

किन्तु इन प्रकार के रूप तुलसी व अवधी की प्रकृति व अनुरूप न होकर सस्कृत भाषा के पठ व परिचायक हैं जिनका प्रयोग सस्कृत (दववाणी) व प्रति निष्ठा छानन के लिए किया गया है। आलोच्य सामग्री में प्राप्त क्रिया रूपों का विदलपण करत समय अनेकानेक घातुएँ प्राप्त होती हैं जिनकी चर्चा सबप्रथम का जा रही है -

## ८१ घातुएँ और उनका वर्गीकरण

आलोच्य सामग्री में रचना की दृष्टि से अनेक प्रकार की घातुएँ प्राप्त होती हैं जिन्हें निम्न तालिका से स्पष्ट किया जा सकता है—

घातुएँ



१-रा० उ० १४३५    २ रा० ल० १११२१,    ३-रा० उ० २१२,    ४-रा० उ० १३३९  
 ५-रा० कि० ३१४    ६-रा० ल० १०९१२९    ७ रा० उ० २७१८  
 ८-रा० अयो० २३११९    ९-रा० अयो० २११९    १०-रा० अयो० २३११९    ११-रा० उ० १४३२  
 १२-रा० अर दलोक १२१६    १३-रा० उ० १३१६,    १४-रा० वा० १२६,  
 १५-रा० उ० १३३२

## ८११ मूल धातुएँ

ऐसी आधारभूत धातुयें मूल धातुयें नहीं गढ़ हैं जिनमें प्रत्ययों के योग से अन्य धातुवा (सनायक, प्रेरणायक आदि) की रचना होती है। ये दो प्रकार की हैं—

१—सामान्य—इस वर्ग की धातुयें 'कतरि प्रयोग' प्रकट करती हैं, यथा—  
मार', काट', देख', कह', जान', कर' ला', पा', गा', मान'°

२—ह्रस्वीकृत—इस वर्ग की धातुयें 'कमणि प्रयोग' को प्रकट करती हैं—  
जीत जित (जितावहि'), सीख सिख (सिखावहि'), मेट मिट (मिटव'),  
माज मज (सजि'), पूज पुज (पुजि'), काट कट (कटहि'), मान मना (मनावहि')  
नाच नचा (नचाडहि')

इनका निर्माण सामान्य धातुओं से होता है। यदि सामान्य धातुओं में आक्षरिक स्वर दीघ होता है, ह्रस्व हो जाता है।

ह्रस्वीकृत धातुओं से ही प्रेरणायक धातुयें निर्मित होती हैं जिन पर विचार यौगिक धातुओं के अंतर्गत किया जाएगा।

## ८१२ यौगिक धातुएँ

ह्रस्वीकृत धातुओं में प्रत्ययों के योग से यौगिक धातुओं का निर्माण होता है। इसके अतिरिक्त नाम शब्दों में प्रत्ययों के योग से बनने वाली धातुयें भी यौगिक ही हैं। अतएव यौगिक धातुओं के दो वर्ग बन सकते हैं—प्रेरणायक और नाम धातुयें।

(१) प्रेरणार्थक—आलोच्य भाषा में प्रेरणायक प्रत्यय -रा, -आ एवं -वा हैं। '-रा का प्रयोग अत्यल्प है। इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय तथ्य यह है कि जब सक्रमक धातुओं में -आ का योग होता है तो धातु सक्रमक मात्र हो जाती है, अतः ऐसी धातुओं में प्रेरणायक रूप -वा के योग से बनते हैं यथा—चल + आ = चला (सक्रमक), चल + वा (प्रेरणायक) सक्रमक धातुओं में -आ तथा -वा दोनों प्रत्यय प्रेरणायक का ही बोध कराते हैं, यथा -कर + आ = करा (पथम प्रेरणायक) तथा कर + वा = करवा (द्वितीय प्रेरणायक)

१—गा० ल० ११।१८, २ रा० ल० ८७।१३, ३—वरव रा० १८।२, ४—वरव रा० ५६।२, ५—रा० ल० १०।७ ६—रा० ल० १०५।७ ७—रा० ल० न० १७१, ८—रा० ल० १४।१२ ९—रा० वा० ३।१७ १०—रा० वा० २०।८ ११—रा० अयो० ३६०।१५, १२—रा० उ० २५।६, १३—रा० अयो० ६८।१ १४—जा० म० ८० १।४ १५—रा० ग० ११।८ १६—रा० ल० ६८।९, १

ह्रस्वीकृत	प्रथम प्रेरणायक	द्वितीय प्रेरणायक	त्रिधा-रूप
गुन + आ	गुना	--	गुनवर <sup>१</sup>
कर + वा		करवा	करवावा <sup>१</sup>
खल + आ	खला		खलावा <sup>१</sup>
जन + आ	जना		जनावा <sup>१</sup>
बह + आ	बहा		बहावा <sup>१</sup>
जित + आ	जिता		जितावहि <sup>१</sup>
सिग + आ	सिगा		सिगावहि <sup>१</sup>
नच + आ	नचा		नचाइहि <sup>१</sup>
बढ़ + आ	बढ़ा		बढ़ावउ <sup>१</sup>
मन + आ	मना		मनाइय <sup>१</sup>
मग + आ	मगा		मगाइय <sup>१</sup>
पुर + आ	पुरा		पुराइय <sup>१</sup>
पि + आ	पिआ		पिआवहि <sup>१</sup>
फिर + आ	फिरा		फिरायो <sup>१</sup>
दित + आ	दितरा		दितरावा <sup>१</sup>

कुछ उदाहरण ऐसे भी मिलते हैं जिनमें आलेखन की दृष्टि से तो आक्षरिक दीर्घ मल स्वरों का ही प्रयोग मिलता है कि तु उह चौपाई दोहो म ह्रस्व मात्रा प्राप्त होन के कारण उनका ह्रस्वीकृत रूप स्वीकार किया जा सकता है —

ह्रस्वीकृत	प्रेरणायक	त्रिधा रूप (प्रयुक्त)
दे + -आ (-व-श्रुति)	देवा (देवा-दिवा)	देवाई <sup>१</sup>
देख + आ	देखा (देखा-दिखा)	देखावा <sup>१</sup>
खेल + -आ	खला (खेल-खिला)	खलावा <sup>१</sup>
बोल + -आ	बोला (बोला-बुला)	बोलाए <sup>१</sup>
बाल + -आ	बाला (बाला-बुला)	बोलावा <sup>१</sup>
दख + -आ	देखरा (देखरा-खिरा)	दखरायो <sup>१</sup>

१-रा० अयो० ४८१ २-रा० वा० ३०७।० ३-रा० सु० २५।१७ ४-रा०  
 कि० ७।७, ५-रा० ल० २।४९ ६-रा० अयो० २६०।१६ ७-रा० उ० २।१६  
 ८-वरख रा २४।२ ०-रा० अयो० १६।१६ १-रा० ल० न० १।१ ११ रा०  
 ल० न ३।३ १२-रा० ल० न० ६।१ १३-पा० म० ९९।२ १४-रा० ल० ७।४ ५  
 १५-रा० वा० २।१० १६ रा० अयो० १९।२ १७-रा० वा० ८९।९ १८ रा०  
 ल० ७६।२८ १९-रा० कि० १८।१ २०-रा० वा० १८९।९ २१-रा० ल० ७।१६

किन्तु जिन सामान्य धातुओं में आक्षरिक सयुक्त स्वर आता है उनमें यथावत् स्थिति रहकर ही प्रेरणायक प्रत्यय सल्लभ होते हैं, यथा—

बैठ + -आ	बैठा	बैठाए <sup>१</sup>
बैठ + आ	बठा	बठावा <sup>१</sup>
पीठ + -आ	पीना	पीनाए <sup>१</sup>

(२) नाम धातुएँ—नाम धातु (सज्ञा, सवनाम, विशेषण आदि) में शून्य (०), -आ आदि प्रत्ययों के योग से नाम धातुओं की रचना हुई है। कुछ नाम धातुएँ इस प्रकार हैं—

सज्ञा शब्द से सरचित नाम धातुएँ—

नाम शब्द	प्रत्यय	नाम धातुएँ	प्रत्यय रूप
आदर	शून्य (०)	आदर	आदरही <sup>१</sup>
सन्मान	"	सन्मान	सन्माने <sup>१</sup>
अनुराग	"	अनुराग	अनुरागे <sup>१</sup>
जनम	"	जनम	जनम <sup>१</sup> , जमो <sup>१</sup>
विस्तार	"	विस्तार	विस्तारी
दुःख	"	दुःख	दुःखारी <sup>१</sup>
हरष (हृष)	"	हरष	हरषेउ <sup>११</sup>
प्रसत्ता (प्रसत्)	"	प्रसत्	प्रससी <sup>११</sup>
सकोच	"	सकोच	सकोचो <sup>११</sup>
विबासा	"	विबासा	विबासी <sup>११</sup>
उपदेस	"	उपदेस	उपदेसा <sup>११</sup>
राड	"	राड	खडेउ <sup>११</sup>
शोभा (शोभ)	"	शोभ	शोभनि <sup>१०</sup>
विरोध	"	विरोध	विरोधि <sup>१०</sup>
रिवाज	-आ	रिवा	रिवाजा <sup>११</sup>
राज (-राज)	-आ	राजा	राजा <sup>११</sup>

१-रा० वि० २०११०, २-रा० ल० ६९१२४, ३-रा० वा० ३५६११०, ४-रा० वा० १४१११, ५-रा० वा० २९११, ६-रा० उ० १७११, ७-रा० वा० १२११, ८-रा० वि० १०१२१, ९-रा० ल० ८९११२, १०-रा० उ० २११ ११-रा० अया० १४१११ १२-रा० अया० १२१० १३-रा० अया० ३०१११० १४-रा० अया० ३२१११०, १५-रा० अया० २११४ १६-रा० अया० २११११ १७-रा० अया० २११११ १८-रा० अया० २११११ १९-रा० अया० २११११ २०-रा० अया० २११११



(३) विशेषण शब्दों से निर्मित नाम धातुएँ—

नाम शब्द	प्रत्यय	नाम धातुएँ	प्रयुक्त रूप
अधिक	-आ	अधिका	अधिकाई <sup>१</sup>
विपुल	-आ	विपुला	विपुलाई <sup>१</sup>
तरन (-तरण)	-आ	तरना	तरनाई <sup>१</sup>
द्रढ	-आ	द्रढा	द्रढाई
सीतल	-आ	सितला	सितलाई <sup>१</sup>

(४) क्रिया विशेषण—क्रिया विशेषण से बनी नाम धातुएँ अत्यल्प मात्रा में प्रयुक्त हैं—

निबर नियर	-आ	निबरा	-नियरा	निबरया <sup>१</sup> नियरानि <sup>१</sup>
-----------	----	-------	--------	---

(५) सबनाम से बनी नाम धातुएँ—एक आघ धातुएँ ही उपलब्ध हैं—

अपन	-आ	अपना	अपनाई <sup>६</sup> अपनाइअ <sup>१</sup>
-----	----	------	--

इनके अतिरिक्त अनुकरणवाची सज्ञाओं से निर्मित नाम धातुएँ भी आलोच्य भाषा में प्राप्त हैं—

कटकट	-आ	कटकटा	कटकटाई <sup>१</sup> , कटकटाहि <sup>११</sup>
घुरघुर	-आ	घुरघुरा	घुरघुरात <sup>११</sup>
किलकिल	-आ	किलकिला	किलकिला <sup>११</sup>
हुआ	-०	हुआ	हुआहि <sup>११</sup>
हुकर	-०	हुकर	हुकरि <sup>११</sup>
चिक्कर	-०	चिक्कर	चिक्करहि <sup>११</sup>

८२ समापिका प्रकार

त्रिया स्थान पर प्राप्त होने वाले त्रिया रूप समापिका प्रकार के हैं अथवा मिलने वाले रूप असमापिक प्रकार के हैं । समापिका प्रकार के त्रिया रूप दो कोटि के हैं—(१) तिङन्ती जिनकी रूप रचना कर्ता क पुरुष एव वचन के अनुसार होती है और (२) कृत्न्ती जिनकी रूप रचना कर्ता या क्रम के लिंग-वचन के

१-रा० उ० १२१।१४ २-रा० सु० ५।१, ७-रा० ल० १८।८ ४-रा० मु० ५६।९ ५-रा० मु० ५।४ -रा० कि० १।५ ७-जा० म० १।१ ८-रा० जया० १८।११ ९-रा० ल० ११६।१३ १०-रा० सु० १९।८ ११-रा० १०।१३ १२-रा० बा० ५।१ १३ रा० मु० २८।४ १४-रा० ८।८।८ १५-पा० म० १४३।१ १६-रा० ल० ४२।

अनुसार होती है। असमापिका प्रकार के अन्तगत क्रियाधक सज्ञा तथा पूर्वकालिक कदन्त आते हैं।

८२१ तिङन्ती रूप

ये चार श्रेणियों में प्राप्त होते हैं—

(१) वतमान (निश्चयाय) (२) समावनाय (आज्ञाय)

(३) भविष्य (निश्चयाय) और आज्ञाय और (४) भूत (निश्चयाय)

८२११ वर्तमान निश्चयाय—आलोच्य भाषा में प्राप्त क्रिया रूपों की रचना निम्न लिखित प्रत्ययों के योग से होती है—

पुरुष	एकवचन	बहुवचन
उ० पु०	-अउं-अऊं, -औं	-अहिं-अही
म० पु०	-असि-असी, -अइ	-अहु-अहु, हु
अ० पु०	असि, -अइ-अई -ऐ, इ-ई, अहि- अही -ही अहि-अही-	अहिं-अही -हिं, -ऐं

असम पुरुष एकवचन—

-अउ-अऊं कहउं प्रतीति मन की' ।

यह बर मांगउ कपा निकेता' । पुनि बदउ सारद सुर सरिता' ।

करन चहउं रघुपति गुन गाहा' । जहँ तहँ मैं देखउं दोउ माई' ।

जिअति भूरि जिमि जोगवत रहऊ' । सल तय वचन कठिन सब सहऊ' ।

औं दबि धरौं कछ बिनती विलगु न मानब' ।

सिम रघुवारहि बिबाहु अधामति गावौ' । बदौ अवधपुरी अति पावन' ।

ताके जग पद कमल मनावौ' । प्रनवौं पुरनर नारि बहोरि' ।

बन्धन—

—अहि—अही तमउ हउह बरगार कहहि हम सोचिअ ।

(छ ताउराय स) हम छया मगया बन करछा । तुम्ह म बल मृग सोत्रत फिरही ।

। मय बल मय तगि नहि हरहा । एक बार बालुदु सन लरही ।

मध्यम पुरुष एकत्रत

—असि—असी हरण मगय विगमो करमि ।

तहू गररहिनि करमि गाउ । जानमि मोर गुभाव सनहू ।

छाट बन्न बान बनि कहमी ।

—अ पाटइ निजतर मबल सरीरा ।

बहुवचन—

—अहु—अहू छपी रूप फिरउ बन बारा ।

कवन हत विरहू बन स्वामी । बा पूँछत मुख मूँदहु नबला नारि ।

कारन कवन बसहु बन । कस न पिअहु मरि लाचन रूप मुधारस ।

तम जानहु मब राम गुमाऊ । बा पूँछहु तुम्ह अबहुँ न जाना ।

राम सत्य सब जा कछ कहहु । मुधा मान ममता मद बहहु ।

—हु मतन दासन बहु बडाई ।

अथ पुरुष—एकत्रत—

—अमि पूछमि लागह बाह उछाह ।

—अइ—अई सा कि दाप मन मनइ जा जेहि अनुरागइ ।

जिमि मुख लहइ न सार शोही । चढ़इ गिरिवर गहन ।

चाहिय अमिअ जग जइ न छाछी । उपमा कहत लजाइ भारती भाजइ ।

जुवति जूत्य मह सीय समाइ विराजइ । एक रचइ जग गुन बस जाव ।

१-पा० म० १०७।२ २-रा० अर० १९।१७ ३-रा० अर० १९।८, ४-रा०

अर० १९।१९ ५-रा० अर० १९।२० ६-रा० अयो० १५।२९ ७-रा०

अयो० ३२।१३ ८-रा० अयो० २६।७, ९-रा० ल० ३१।१४ १०-रा

ल० २९।२० ११-रा० कि० १।१४ १२-रा० कि० १।१६ १३-वरवै रा० १७।१

१४-रा० कि० ५।१९, १।-जा० म० ६२।१ १६-रा० अयो० १२।६ १७-रा०

अयो० १९।३ १८-रा० अयो० १२।७ १९-रा० ल० ३७।१० २०-रा० अर० १३।२७

२१-रा० अयो० १३।३ २२-पा० म० ६०।२ २३-रा० कि० १७।१० २४-रा०

वा० १।६ २५-रा० वा० ८।१४ २६-जा० म० १४।१, ७-जा० म० १४।११,

२८--रा० अर० १५।११

जो सोचइ ससि कलह सो सोचइ गरहि ।<sup>१</sup>

पूजइ सिवहि समय तिहुँ करइ निमज्जन ।<sup>२</sup>

इसान महिमा अगम निगम न जानई ।<sup>३</sup> बल अनुमान सदा हित करई ।<sup>४</sup>

कही कही सधि हो जान के कारण 'इ अपने पूर्ववर्ती 'अ व साय मिलकर 'ऐ' हो गयी है--

अजसु जग जान ।<sup>५</sup> देखि न मान ।<sup>६</sup> रानिहि जानि ससोच समुझावै ।

-इ-ई- देइ सद्य फल प्रकट प्रमाऊ ।<sup>७</sup>

जो सुमिरत सिधि होइ ।<sup>८</sup> कतरु देइ न लेइ उसासू ।<sup>९</sup>

होइ जलद जग जीवन दाता ।<sup>१०</sup> घूम कुसगति कारिख होई ।<sup>११</sup>

बिनु सतसग विवेक न होई ।<sup>१२</sup> सुरसरि सम सब कहै हित होई ।<sup>१३</sup>

-अहि-अही ही—सत्य कहहि दसकठ तव ।<sup>१४</sup>

जानहि कछु करिबर गामिनी ।<sup>१५</sup> कौसिक मराहही रुचिर रचना ।<sup>१६</sup>

जासु भजन विनु जरनि न जाही ।<sup>१७</sup> एक ते छीनि एक लै खाही ।<sup>१८</sup>

किसी किसी स्थल पर अथ पुरुष बहुवचन के रूप आदराथ भ एक वचन धन कर प्रयुक्त हुए हैं—

अहि-अहीं-भीख भांगि भव खाहि चित्त नित सोबहि ।<sup>१९</sup>

हुँकरि हुँकरि सुलबाइ धेनु जनु धावहि ।<sup>२०</sup>

उमा मातु मुख निरखि नन जल मोचहि ।<sup>२१</sup>

भांग धतूर अहार छार लपटावनि ।<sup>२२</sup>

जोगी जटिल सरोप भाग नहि भावहि ।<sup>२३</sup>

मुनि सकुा सोचहि जनक ।<sup>२४</sup> पू छहि कुमल खेम मद्दु बानी ।<sup>२५</sup>

निसि न नीद अन्न न खाही ।<sup>२६</sup> उपजहि अनत अनत छवि लहही ।<sup>२७</sup>

१--पा० म० ५५।१, २--पा० म० ३६।१, ३--पा म० छ० १३।४ ४--रा० कि० ७।१०, ५--जा० म० ७०।२ ६--जा० म० ८७।१ ७ जा० म० ८४।१, ८--रा० बा० २।२६ ९--रा बा० १।२ १०--रा० अयो० १२।१, ११--रा० बा० ७।२४, १२--रा० बा ७।१ १३--रा० बा० ३।१३ १४--रा० बा० १४।१८, १५--रा० ल० २३।२५, १६--रा० अर० ३६।२, १७--जा० म० ६।३, १८--रा० अयो० ४।१४, १९--रा० ल० ८८।४, २०--पा० म० ५०।१ २१--पा० म० १४३।२, २२--पा० म० १४६।१ २३--पा० म० ५१।१ २४--पा० म० ५१।२ २५--जा० म० छ० १२।३ २६--रा० अयो० २४।, २७--रा० अयो० १३।२, २८--रा० बा० ११।६ ।

अथ पुरुष बहुवचन—

—अहि—अही—हि सत सहहि दुग पर हिन लागी ।<sup>१</sup>

—ही गावहि सब रनिवास देहि प्रभु गारी हा ।<sup>२</sup>

प्रभुहि विलोकहि टरइ न टारे ।<sup>३</sup> नाचहि नगन पिताच पिताचिनि ।

सो मुनि करहि बसान । मुनि जहि ध्यान न पावहि ।<sup>४</sup>

विलपहि बाम विधातहि दोष लगाव ।

प्रभुनि पुर नर नारि सब सर्जहि ।<sup>५</sup>

लागन बान बीर चिक्करहा ।<sup>६</sup> घुमि घुमि जहैं तहैं महि परही ।<sup>७</sup>

—ऐं सय मोहि कहैं जान दन सवा ।<sup>८</sup> राप सकल सपल्लव मगल तखर ।<sup>९</sup>

जनक जय जय सब कहैं ।<sup>१०</sup> ज रोइ अमिमत गति लहैं ।<sup>११</sup>

८२ \* २ समावनाथ (आज्ञाथ)—निम्न विभक्ति—प्रत्यया के योग में रूप रचना होती है—

	एक वचन	बहु वचन
उ० पु०	-अउ -ओं	—
म० पु०	-असि -उ अहि—अही	-अहु-अहू -हु-हू -अउ
अ० पु०	-अइ-ऐ -अउ	—

उत्तम पुरुष—

एकवचन—

—अउ करउ अनुग्रह तोर ।<sup>१२</sup>

जारि करउ पुर छार ।<sup>१३</sup> निसिचर हीन करउ महि ।<sup>१४</sup>

- १—रा० ल० १३११२९ २—रा० ल० न० १८११ ३—रा० ल० ४११३ ४—पा० म० ५०१२ ५—रा० बा० १४१२६, ६—रा० ल० ११७१११, ७—पा० म० ३११२ ८—रा अयो० २३११९ ९—रा० ल० ८३११७ १०—रा० ल० ८७११८ ११—रा० अर० १६१२० १२—जा० म १८११२ १३—रा० बा० ३२४१३२, १४—रा० बा० ३२४१३० १५—रा० बा० ११३ १६—रा० कि० १९११८, १७—रा० अर० ९११७ ।

-अँ कहां कहां लगि नाम बदाई ।

भामिनि करहु त कहौ उपाऊ । जो कछु वहाँ कपटु बरि ताही ।

मध्यम पुरुष— मध्यम पुरुष के अतगत प्रयुक्त क्रिया रूप दो कार के प्राप्त हैं—

(१) सामाय और (२) आदरायक

(१) सामाय—इस प्रकार के रूपों की रचना निम्न विभक्ति प्रत्ययों के माग से होती है—

-असि अब जनि नयन देखावसि मोही ।

मनु जनि करसि मलान । भारसि जनि सुत बाँधसि ताही ।

भजसि न कृपासिधु रघुराई । पुनि अस कहसि कबहु मरघोरी ।

-अ राम कहा प्रनामू कह सीता ।

सुनु सठ क्या सम ए चारी । देखु विभीषन दच्छिन आसा ।

वारन मोहि सुनाउ । आल बिदा कह बटुहि बड बरबर ।

तीरथ पति पुनि देखु प्रयागा । पुनि दखु अवधपुरी अति पावन ।

-अहि-अही भजहि राम तजि काम मद । करहि सदा सतसग ।

सुनु मम बचन माग परिहरही । अब जनि बतबदाव खल करही ।

बहुवचन—

-अहु-अहू तजहु सोच मन आनहु घोरा । रचहु मजु मन चौके चारु ।

कहन विभीषन सुनहु कपाला । भुगिरहु राम नाम करि सेबहु साधु ।

करहु बचन विश्वास । अब सीइ जतनु करहु तुम्ह ताता ।

सजहु तरंग रथ नाग । बोलुक एक भालु कपिकरहु ।

रघुबीर कुमज लखहु । जानि मूरति जनक कोतिक देवहु ।

-हु-हू लेहु दहु सब सबहि हुलासु । लेहु कि दहु जजसु करि नाही ।

१-रा० बा० १६।१५, २-रा० अया० २१।१५ ३-रा० अयो० २६।११, ४-रा० ल० ४६।६, ५-रा० त्रयो० ५३।२० ६-रा० मु० १९।३ ७-रा० ल० १२७।१२, ८-रा० अयो० १४।१५, ९-रा० ल० १२।१२ १०-रा० कि० ९।१४ १-रा० ल० १३।१, १२-रा० अयो० २५।३१, १३-रा० म० ६२।२ १४-रा० ल० १२०।१३, १५-रा० ल० १२०।१७ १६-रा० अर० ४६।३१, १७-रा० ल० ४६।३२ १८-रा० ल० ३१।२, १९-रा० ल० २०।१ २०-रा० कि० ५।१४ २१-रा० अयो० ६।३३, २२-रा० ल० १३।५ २३-अन्व रा० ६१।१, २४-रा० अ १४।१८ २५-रा० ल० १०५।२ २६-रा० अयो० २२।१२, २७-रा० ल० १।१६ २८-जा० म० १५।२ २९-जा० म० १२।१, ३०-रा० अया० १२।१२, ३१-रा० अया० ३३।११

लखा जाहु कहहु हनुमाना । नप सन वर अस दूसर लेहू ।

-अउ हरउ भगन मन क कुटिलाई ।

(२) आदरायक रूप-निम्न विभक्ति प्रत्यया के योग म रूप रचना होती है—

-इअ-इय कहउ वरिअ मुरकाजु साजु सजि आपउ ।

लेइअ सग माहि छाडिअ जनि । आयमु देदअ हरपि हिय ।

लगन वर भइ वगि विघान बनाइअ । नाथ कहिय सोइ जतनु ।

मुनिये बिनती मुनि । कहा मोर मन धरि न वरिय बर बाउर ।

-इज नाथ वयरु कीज ताही सो ।

अब मुनिवर विलव नहि कीज । दीन जानि तोहि अमय करीज ।

-ईजिए दास अगद कीजिए । बल्यान प्रम लीजिए ।

-ईज अब विउय बेहि कारन कीज । तुरत कपिह कहू आयमु नीज ।

अय पुरुष एकवचन —

-अइ-ऐ कुमल करइ करतार कहहि हम सांचिअ ।

कोउ जनि ससय ससय बर पर भवकूप ।

मक कि स्वाद बखान । जार जोग सुभाव हमारा ।

-अउ कोउ नप होउ हमहि का हानी ।

८२१३ भविष्य निश्चयाय—रूप रचना म सहायक प्रमुख इस प्रकार हैं—

	एकवचन	बहुवचन
उ० पु०	-इहहु, -इहहु -इहउ -इही -हउ अब -अवि, उव ।	-अब -अवि, इहै ।
म० पु०	-इहसि -अब -ब उव ।	-इहह-अब -इबी
अ० पु०	इहि-नी -अब -उव ।	-इहहि -इहै -अब ।

१-रा० ल० १०७।२ २-रा० ल० ५८।८ ३-रा० अयो० १०।१६, ४-जा०  
म० २५।२ ५-रा० अयो० ६६।१४ ६-रा० अयो० ४५।२० ७-पा० म० १२२।२,  
८-पा० म० १९। ९-पा० म० १३।२ १०-पा० म० १।२ ११-रा० ल० ६।२  
१२-रा० उ० १०।१५ १३-रा० कि० ४।६ १४-रा० कि० १८।२० १५-रा०  
कि० १०।४ १६-रा० गु० ३।१३ १७-रा० म० २४।४ १८-पा०  
म० १३।१ १९-रा० वा १०।३ २०-जा० म० ८३। २१-रा०  
अयो० १६।१३ २२-रा० अयो० १६।११ ।

उत्तम पुरुष

एकवचन—

- इहहूँ एहि सन दूढ करिहहूँ पहिचानी ।<sup>१</sup> रहिहहूँ निकट सैल पर जाई ।<sup>१</sup>  
करिहहूँ जातुधान कर नरसा ।<sup>१</sup> पद पकज बिलोकि तरिहहूँ ।<sup>१</sup>
- इहहूँ- राम कज सब करिहहूँ ।<sup>१</sup>
- इहउ करिहउँ इहाँ सभु थापना ।<sup>१</sup> पद पकज बिलोकि तरिहउँ ।<sup>१</sup>  
कव जैहउँ भव सागर पारा ।<sup>१</sup> एहि सन हठि करिहउँ पहिचानी ।<sup>१</sup>  
कटिहउँ तव सिर कठिन कृपाना ।<sup>१</sup> करिहउँ बाउ मदित मन माही ।<sup>११</sup>
- इहाँ सबहि भाँति पिय सेवा करिहाँ ।<sup>११</sup>  
मारग जनित सकल थ्रम हरिहाँ ।<sup>११</sup> कृपा निकत पद मन लइहाँ ।<sup>११</sup>
- हउँ जाय अब अब देहउँ काहा ।<sup>११</sup> देहउँ उतर जो रिपु चढ आवा ।<sup>११</sup>
- अब कस १ करब हित लागि ।<sup>११</sup> सब विधि घटब काज मैं तोरे ।<sup>११</sup>  
तो मैं मरब काठि कृपाना ।<sup>११</sup> अब कछु कहव जीम करि दूरी ।<sup>११</sup>
- अबि भाषावद्ध करबि मैं सोई<sup>११</sup>
- उब कृपासिधु मैं आउब ।<sup>११</sup>

बहुवचन

- अब देखव कोटि विवाह जिअत जो बाँचिय ।<sup>१</sup> हमहुँ कहव अब ठवर सोहाती ।<sup>१</sup>
- अबि - जीअत न करबि सबति सेवकाई ।<sup>११</sup>
- इहँ हम सीता कै मुधि लीन्है बिना ।  
नहि जैहँ जुवराज प्रबीना ।<sup>११</sup> (जा-ज + इहँ = जहँ)

मध्यमपुरुष

एकवचन—

- इहसि जहसि तै समत परिवारा ।<sup>१</sup> (जा-ज + इहसि = जहसि)

- १--रा० सु० ७१६, २--रा० कि० १२।१२ ३--रा० अर० २९।१८ ४--रा०  
उ० १८।१६, ५--रा० सु० २।२५ ६--रा० ल० २।४३ ७--रा० उ० १८।१६,  
८--रा० बा० ५४।३ ९--रा० सु० ६।७ १०--रा० सु० १०।१ ११--रा०  
अयो० ६७।६ १२--रा० अयो० ६७।३ १३--रा० अयो० ६७।४ १४--रा०  
अर० २६।२०, १५--रा० बा० ५४।३ १६--रा० ल० ३।११ १७--रा०  
अयो० २१।२०, १८--रा० अयो० २१।१३ १९--रा० सु० १०।१८ २--रा  
अयो० १६।२, २१--रा० बा० ८।१३, २२--रा० ल० ११।२१ २३--रा०  
म० ११।१२, २४--रा० अयो० १६।७ २५--रा० रा० २।१७ २६--रा०  
कि० २६।१८, २७--रा० ल० १७।५ ।



- अब -ब समझव करब बटव तुम्ह जोई ।  
 आयसु देव न करब सकोची । तिहहि मिले त हाव पुनीता ।  
 -उब ती तुम्ह दुस पाउब परिनामा ।

बहुवचन

- इहह रामबाज सब करिहह तुम्ह ।  
 हिय हरि हठ तजहु हठे दुस पैहहु । हगी बखिह पर पुर जा ।  
 य्पाह समय सिस मोरि मानि पछिनहहु । (पछिना-पछिन + इहहु)  
 जब रगि तुम्ह बइहहु मोहि पाही ।

- अब मुजबल विव जिनब तुम्ह जाहिया ।  
 -इवी एहि राजा साजा समन सवक जानियो ।

अथ पुरुष

एकवचन—

- इहि-इपी तिहहि कथा मुनि लागिहि पीकी ।  
 मार मन अस आव मिलिहि बर बाउर ।  
 जो न मिलिहि बर गिरिजहि जोगू ।  
 बालि हतिसि मोहि मारन आइहि ।  
 मित्त कृपा तुम्ह पर प्रमु करिही । उर अपराधन एकठ धरिही ।  
 -अब जेहि बन जाइ रहव रघुराई । तमकि ताहि ए तोरहि कहब महेश ।  
 -उब चाप चटाउब राम वचन फुर मानिअ ।  
 अजहुँ अवसि रघुनदन चाप चटाउब ।

वस्तुतः '—अम और —उब' प्रत्यया के योग से निमित्त रूप बहुवचन के हैं किन्तु आन्तरायक रूप म एकवचन प्रयुक्त हैं ।

बहुवचन

- इहहि निसिचर मारि तोहि ल जहहि । कविह सहित अइहहि रघुवीरा ।  
 जम धारि सहिस निहारि सब नर नारि चलिहहि माजि क ।

१ रा अया० ३२३।१ -रा० अया० ३२३।८ ३-रा० कि० १७।३ ४-रा०  
 अया० ६२।६ ५-रा० सु० २।२६ ६-पा० म० ५६।१ ७-रा० वा० ९३।२  
 ८-पा० म० ५६।२ ९-रा० सु० २।२६ १०-रा० अर० ४१।२ ११ रा०  
 ल० १२०।१७ १२-रा० वा० १४।१३ १३-पा० म० १७।१ १४-रा०  
 वा० ७१।९ १५-रा० कि २।१५ १६-रा० सु० ५७।१ १७-रा० सु० ५७।१२  
 १८-रा० अर० ०।३ १९-रा० म० १५।२ २०-जा० म० ६।२ २१-जा०  
 म० ७।१ २२-रा० सु० १६।९ २३-रा० सु० १६।१०, २४- रा०  
 गु० १६।८

रहित निसाचर करिहहि धरनी<sup>१</sup> । सुनि गुन भेद समुझिहहि साधू<sup>१</sup> ।  
सुनिहहि सुजन सराहि सुबानी<sup>१</sup> ।

तुमहि सहित असबार बसहि जब होइहहि<sup>१</sup> ।  
निरखि नगर नर नारि बिहंसि मुख गोइहहि<sup>१</sup> ।

सुनेउं श्रवन ऐहहि राना<sup>१</sup> । (आ—अ + इहहि = ऐहहि)

-इहैं भूत पिसाच प्रेत जनेत ऐहैं साजि कै<sup>१</sup> । (आ—अ + इहैं = ऐहैं)

कल्यान काज उछाह ब्याह सनेह सहित वो गाइहैं<sup>१</sup> ।

तुलसी उमा सकर प्रसाद मोद मन प्रिय पाइहैं<sup>१</sup> । नारदादि बखानिहैं<sup>१</sup> ।

-अब उतर देत बघव अनागे<sup>१</sup> ।

भविष्य आशाथ—सामान्य आचार्य से इस काल का प्रयोग कुछ भिन्न है और इसीलिए रूप रचनात्मक विभक्ति प्रत्यय भी भिन्न हैं जिन्हें निम्न प्रकार से प्रदर्शित कर सकते हैं—

	एकवचन	बहुवचन
म० पु०	-एसु	-एहु, -एउ

उदाहरण इस प्रकार हैं—

एकवचन—

-एसु कहेसु जानि जिय सपन बुझाई<sup>१</sup> ।

परखेसु मोहि एक पखवारा<sup>१</sup> । नहि आवी तब जानेसु मारा<sup>१</sup> ।

बहुवचन—

-एहु सो सब माया जानेहु माई<sup>१</sup> ।

अब गह जाहु सखा सब भजेहु मोहि दूढ नेम<sup>१</sup> ।

सदा सबगत सबहित जानि करेहु अति प्रेम<sup>१</sup> ।

राखेहु नयन पलक की नाई<sup>१</sup> । पितु समीप जाएहु भैया<sup>१</sup> ।

जो मन मान तुम्हार ती लगन लिखायहु<sup>१</sup> ।

जाहु हिमाचल गेह प्रसग चलायहु<sup>१</sup> ।

१-रा० बा० २१६, २-रा० अर० २२१, ३-पा० म० छ० ७०, ४-रा० बा० २१४, ५-पा० म० ५७१, ६-पा० म० ५७२, ७-पा० म० छ० ७१, ८-रा० अर० ८४, ९-पा० म० छ० ७१, १०-पा० म० छ० १६४, ११-पा० म० छ० १६२, १२-रा० कि० १६, १३-रा० कि० ६११, १४-रा० कि० ६१२, १५-रा० अर० १५६, १६-रा० उ० १६२, १७-रा० उ० १६२, १८-रा० बा० ३५२, १९-रा० अयो० ५३३, २०-पा० म० ७८१, २१-पा० म० ७८२

हमरे जान जनेस बहुत मल की हेत । (कीन्ह+एउ)

सिव उगास तजि बास अनत गम की हेत । " "

रोकि द्वारा तब मैना कोनुष की हेत । ' "

आज हमहि सगि बनउठ बाहु न की हेत । ' "

-मउ-मऊ गाधि गुपन तेहि अवसर अवध सिधायउ ।

कोसिबहि पूजि प्रससि आयगु पाइ नूप गुन पायऊ ।

लिनि लगत निलक समाज सजि बुलगुरहि अवध पठायऊ ।

-एसि साएनि फन अरु बिटप उजारे । फल खाएनि अरु तोरै लागी ।

पठएनि मधना" बलवाना ।" बछु मारेनि कछ जाय पुकारे ।"

उठि बगेरि की हेसि बहुमाया ।" (कीन्ह+एसि)

की हेगि बपट प्रबोधु ।" (कीन्ह एसि)

हरि ली हेसि सरबस अरु नारी ।" (लीह+एसि)

ली हेसि परम भगति बर भागी ।" (लीह+एसि)

बहुवचन—

-यउ नपति कीन्ह सनमान भवन लै आयउ ।" (आदरायक बनकर एक वचन मे प्रयुक्त)

जे मुनि अवध विलोकि सुसरित नहायउ । " "

-एउ देखेउ जनम फनु भा बिवाह उछाह उगमहि दस दिसा ।"

भा बिवाह सद वहीहि जनम फल पेखेउ ।"

देखि सपुर परिवार जनक हिय हारेउ ।

नूप समाज जनु तुहिन बजन बन हारेउ ।"

दी हेउ मोहि राज बरिबाई ।" (दीह+एउ)

राम लखन मुनि साथ गबनु तब की हेउ ।" (कीह+एउ)

करि लहकौरि गौरि हर बड सुख दी हेउ ।" (दीह+एउ)

१—जा० म० ६७।२, २—पा० म० २८।२ ३—पा० म० १३४।२ ४—पा० म० ७३।१ ५—जा० म० १६।१ ६—जा० म० छ० १४।३, ७—जा० म० छ० १४।० ८—रा० सु० १८।७ ९—रा० सु० १८।२, १०—रा० सु० १८।४, ११—रा० सु० १८।४ १२—रा० सु० १९।१७, १३—रा० अयो० १८।१८, १४—रा० कि० ६।२२ १५—रा० कि० ११।१२, १६—जा० म० १६। १७—जा० म० ११६।१ १८—पा० म० छ० १४।१ १९—पा० म० १३२।२ २०—पा० म० ८९।१, २१—पा० म० ८९।२ २२—रा० कि० ६।१८, २३—जा० म० ३१।२, २४—पा० म० १३४।२ ।

## ८२२ कृदन्ती रूप

कृदन्तीय रूपों की सहायता से आलोच्य भाषा में वर्तमान निश्चयाय, भूत निश्चयाय तथा भूत सभावनाय की अभिव्यक्ति हुई है। वर्तमानकालिक कृदन्ती रूपों के साथ कहा कही वर्तमानकालिक सहायक क्रिया रूपों के प्रयोग से वर्तमान निश्चयाय का और भूतकालिक सहायक क्रिया रूपों के प्रयोग से भूतनिश्चयाय का बोध कराया गया है। वर्तमानकालिक कृदन्ती रूपों से भूत सभावनाय की अभिव्यक्ति भी हुई है। प्रमखविभक्ति प्रत्यय दो प्रकार के हैं—अत त और '—आ' जो लिंग-वचन के अनुसार परिवर्तनशील हैं।—अत-त विभक्ति प्रत्यय युक्त कृदन्ती रूपों से काय की अपूर्णता और—आ विभक्ति प्रत्यय युक्त कृदन्ती रूपों से काय की पूर्णता का बोध होता है। अत दो वग बनाकर कृदन्ती रूपों पर विचार किया जा सकता है—

८२२१ अपूर्ण—इस प्रकार के कृदन्ती रूपा की रचना केवल लिंग से प्रभावित मिलती है। दोनों वचनों में विभक्ति प्रत्यय समान हैं। लिंग भेद से अंतर इस प्रकार है—

	एकवचन	बहुवचन
पु०	—अत—त	—अत
स्त्री०	—अति—अती, —ति	—अति

इन विभक्ति-प्रत्ययों के योग से सचरित कृदन्ती रूपों के द्वारा वर्तमान निश्चयाय भूत सभावनाय की अभिव्यक्ति होती है।

वर्तमान निश्चयाय—

एकवचन (पु०)—

—अत, —त लाल कमल जनु लसत बाल मनोजन<sup>१</sup>। सुमिरत राम वरन जिन्ह देखा<sup>२</sup>।  
 कबहुँक सुरति करत रघुनायक<sup>३</sup>। नर भरकट इय सबहि नचावत<sup>४</sup>।  
 राजत राज समाज जुगल रघुकुल मनि<sup>५</sup>। तुम्हहू तात कहत अब जाना<sup>६</sup>।  
 एहि विधि सबहि देत सुरा । देत सबहि सम गति अविनासी<sup>७</sup>।

स्त्री०

—अति—अती करति बिलाप जाति नम सीता<sup>१</sup>।

—ति—ती करति आरती सासु मगन<sup>२</sup>। सादर पुनि पुनि पूछति ओही<sup>३</sup>।

चितवनि वसति बनखियन अखियनु बीचु<sup>४</sup>।

जपति हृदय रघुपति गुन श्रेणी<sup>५</sup>।

१—जा० म० ६४।२ २—रा० अर० ३०।३६ ३—रा० सु० १४।१० ४—रा०  
 कि० ७।४७ ५—जा० म० ४९।१ ६—रा० सु० २७।१४, ७—रा० वा० ३४।१७,  
 ८—रा० कि० १०।८ ९—रा० अर० २९।४७ १०—पा० म० १३।३२ ११—रा०  
 अया० १७।१, १२—बरव रा० ३०।२, १३—रा० सु० ८।१६

बदति जननि जगदीस जुबति अनि सिरजहि<sup>१</sup> ।

भूषन सजति बिलोकि मगु बेकई<sup>१</sup> ।

होति प्रतीति न होहि महतारी<sup>१</sup> । बरनत बरन प्रीति बिलगाती ।

बहुवचन (पु०)

-अत गज बेहरि निज मुनत प्रससा<sup>१</sup> । भहि परत उठि भट भिरत भरत<sup>१</sup> ।  
देखत बालक काल समाना<sup>१</sup> । गायल गुन गुन मुनिवर बानी<sup>१</sup> ।  
घवल घाम ऊपर नभ चुबत<sup>१</sup> । राजभवन मुख बिलसत<sup>१</sup> ।  
राजीव लोचन थवत जल<sup>१</sup> ।

स्त्री०—

-अति बिबिधि चाहिनी बिलसति सहित अनत<sup>१</sup> ।

कही कही वतमानकालिक सहायता क्रियाओ के योग स भी वतमान निश्च  
याथ की अमिब्यक्ति हुई है—

परम चतुर हम जानत अहह<sup>१</sup> । जानत हूँ अस प्रभु परिहरही<sup>१</sup> ।

जानत हूँ अस स्वामि बिसारी<sup>१</sup> ।

मूत समावनाथ—

	एकवचन	बहुवचन
पु०	-अत -त	-अते
स्त्री०	-अति	-अति

एकवचन (पु०)—

जौ बिधि लोचन करत अतिथि नहि रामहि<sup>१</sup> ।

तौ कोउ नपहि न देत दोष परिनामहि<sup>१</sup> ।

जो न होत जग जनम भरत को<sup>१</sup> ।

बालि व्याहि सिय देत दोष नहि भूपहि<sup>१</sup> ।

स्त्री० जौ न होति सोता सुधि पाई<sup>१०</sup> ।

जो रघुबीर होति सुधि पाई<sup>१</sup> । कतहूँ रहहूँ जो जानति होई<sup>१</sup> ।

१—पा म० २३।२ २—रा० अयो० २६।१९ —रा० अयो० ४२।१२, ४—रा०  
वा० २०।७ ५—रा० अर० ३०।२४ ६—रा० अर० २०।५१, ७—रा० अर० २२।११,  
८—रा० वा० २५।१२, ९—रा० उ० २३।१३ १०—वरव रा० २१।१ ११—रा०  
उ० ५।२७ १२—वरव रा० ४।१ १३—रा० ल० १७।१४, १४—रा० कि० १२।९  
१५—रा० सु० ८।१, १६—जा० म० ७।१ १७—जा० म० ७।२ १८—  
१९—जा० म० ७।१ २०—रा० सु० २९।१, २१—रा० सु० १६।१, २२—रा०  
कि० १८।

बहुवचन (पु०)—

करते नहि बिलब रघुराई<sup>१</sup> । (वस्तुत बहुवचन के ही रूप हैं किन्तु आद  
राय रूप में एकवचन प्रयुक्त हुए हैं ।)

जो जनते बन बहु विछोह<sup>१</sup> । पिता वचन मनते नहि आह<sup>१</sup> ।

बूढ़ भयउ नहि करते कछुक सहाय तुम्हार<sup>१</sup> ।

भूतकालिक सहायक क्रियाओं के योग से भूत निश्चयाय का भी अभिव्यक्ति

होती है यथा—

खेलत रहा सो होइया भेंटा<sup>१</sup> । अह निसि विधिहि मनावत रहही<sup>१</sup> ।

प्रभु मुख कमल मनावत रहही<sup>१</sup> । बैठ रहेउ में करत बिचार<sup>१</sup> ।

जात रहेउ बिरचि के घामा<sup>१</sup> ।

उपर्युक्त अप्रुण कृदन्ती रूपों का प्रयोग विशेषणवत् भी मिलता है, यथा—

तलफत मीन पाव जिमि धारी<sup>१</sup> । आगै दीखि जरत रिस मारी<sup>१</sup> ।

लसत ललित कर कमल भाल पहिरावत<sup>१</sup> ।

करत करिनि जिमि हतेउ समूला<sup>१</sup> ।

राजत रामु सहित भामिनी<sup>१</sup> । चलत बिरचि कहा मोहि चीहा<sup>१</sup> ।

८ २ २ २ पुण—इस प्रकार के कृदन्ती रूपा की रचना लिंग, वचन से प्रमा

णित है लिंग वचन के अनुसार विभक्ति प्रत्यय इस प्रकार है—

एकवचन

बहुवचन

पु०— —अ — आ, इह — इहा —ए इहे  
स्त्री० —ई — ई ईहि — इही —ई —ईहि—ईही

अ—आ जाइ दीख रघुवस मनि<sup>१</sup> । प्रथम दीख दुख मुना ना काऊ<sup>१</sup> ।

अस तप मुना व दीख बबहुँ काहु कह<sup>१</sup> । पुनि कह कटु बठोर कैकई<sup>१</sup> ।

मैं सकर कर कटा न माना<sup>१</sup> । ताते मैं नहि प्रभु पहिचाना<sup>१</sup> ।

मैं जो कहा रघुबीर कृपाला<sup>१</sup> । जेहि सायक मारा मैं वाली<sup>१</sup> ।

आपन चरित कहा हम गाई<sup>१</sup> । अति लघु बात लागि दुख पावा<sup>१</sup> ।

१—रा० सु० १८१२ २—रा० ल० ६१११, ३—रा० ल० ६११२ ४—रा०  
कि० २८१२ ५—रा० ल० १८१६ ६—रा० उ० २५१९, ७—रा० उ० २५१३  
८—रा० कि० ४१६ ९—रा० अर० ८१३ १०—रा० सु० २८१० ११—रा०  
अयो० ३१११ १२—जा० म० १०\*११ १३—रा० अयो० २९११६ १४—रा०  
ल० ११११० १५—रा० सु० ४११२ १६—रा० अयो० ३९११७ १७—रा०  
कि० ४०१६, १८—पा० म० ४०१२७ १९—रा० अयो० ५१५, २०—रा० वा० ५४११  
२१—रा० कि० २११८ २२—रा० कि० ८१८ २३—रा० कि० १८११९ २४—रा०  
कि० २११३ २५—रा० अयो० ४५११३

दीह-दीग पूष गिरि करवट लीह । दीर्घ दुगह दुसु दीह ।  
 अति प्रिय त्रि उर शीत बगरा । विरय कीह उरम कुमार ।  
 गवनु कीह नर नाथ । मुत्र उठाइ पन कीह ।  
 साइ छल हनुमान कह कीहा । पट उर लाइ सोच अति कीहा ।  
 राय मुमार्य मकर कर लीहा । सामु कपट कवि सुरतहि कीहा ।

स्त्री०—

८-८ मइ मम कपट नु ग का नाइ । गगन पय देगी में जाता ।  
 समुगी नहि तस बाण पन । मैं करि प्रीति परीणा देगी ।  
 तुम्ह दरी सीता मृग नयनी । गइ गिरा मति फेर ।  
 ९-६ ही लखि कुचालि काहि कछ सनी । बिननी पाह उचार ।  
 दाहि राम तुम्ह कहै महिानी । बबल गबहि दीह बडाई ।  
 दीह ग्यान हरि गीही माया । रामानज दीही यह पाती ।  
 अस्तुति करि पनि आसिप दाही । लग ये विधि सादर कीही ।

धनुवचन—

पु०

६-ए दने जिते उन नम देन । हम पिनु बचन मानि बन आए ।  
 वासन्तिस दसरथ के जाए । (आन्तराय रूप में)  
 मारे निमिचर केहि अपराधा । उचइ पात सब काहू पाए ।  
 सनत बचन जह तहें जन घाए । बांधे घाट मनोहर ।  
 नाथ न मैं समुय मुनि बना । (आन्तराय रूप में)  
 मगन सुख मद बचन उचारे ।

१-रा० अयो० ४३।१८ २ रा अयो० २०।१८ ३-रा० ल० १२।१८ ४-रा०  
 सु० १९।१० ५-रा० बा० ५१।० ६-रा० अर० २।१८ ७-रा० सु० ३।७  
 ८-रा० कि० ५।१२ ९-रा० अया० २।२१ १०-रा० सु० ३।८, ११-रा०  
 अर० २५।१ १२-रा० कि० ५।७ १३--रा० बा० ३०।१९, १४-रा०  
 अया० १।१० १-रा० अर० ३०।१८ १६--रा० अयो० १२।२० १७-रा०  
 ७० १।० १८--रा० सु० १।१० १९-रा० ल० ११।१८ २०--रा०  
 कि० ११।६ २१-रा० सु० ५६।७ २२--रा० बा० २।१८, २३-रा०  
 बा० ३।० २-रा० अर० ११। -रा० कि० २।२, २६-रा० कि० २।१  
 २७-रा० सु० २।१ २८-रा० बा० ३।५।३ २९-रा० ७० ११।५ ३०-रा०  
 ८० १।७ ३१-रा० बा० ७।१।६ ३२-रा० उ० १६। १

—२

राजह दीहे हापी रानिह हार हो ।<sup>१</sup>  
दान अनेक दुजह कहें दी हे ।<sup>२</sup> दीहे भूपन बसन प्रसादा ।<sup>३</sup>  
कपिह बाँधि दीहे दुख नाना ।<sup>४</sup> कीहे मुकुत निसाचर भारी ।<sup>५</sup>

स्त्री०

ई उठी सखी मिस करि कीह मदु बैन ।<sup>१</sup>

हिय हरपि सुत ह समेत रानी आइ रिपि पायह परी ।

कौसिक दीह असीस सकल प्रमुदित भई ।<sup>२</sup>

लाबा होम विघाग बहुरि भाँवरि परी ।<sup>३</sup>

मन भावत विधि कीह मुदित मामिनि भई ।<sup>४</sup>

जिमि सकरहि गिरिराज गिरजा हरिहि श्री सागर दई ।<sup>५</sup>

बर दुलहिनिहि लवाइ सखी कोटबर गई ।<sup>६</sup>

हि-ही बहुरि बुलाइ सुआसिन लीही ।<sup>१</sup> निज निज सेम सयन तिह कीही ।<sup>२</sup>

कीही सुमन वष्टि हरपे सुर ।<sup>३</sup> रुचि बिचारि पहिरावनि दीही ।<sup>४</sup>

उपयुक्त पूण वृद्धती रूपो का प्रयोग विशेषणवत भी हुआ है यथा—

मरे निसाचर फिरि भिरहि ।<sup>१</sup>

दीख मयरा नगरु बनावा ।<sup>२</sup> बने बराती बरनि न जाई ।<sup>३</sup>

८ २ ३ सहायक क्रिया

आलोच्य भाषा मे सहायक क्रियाएँ तिङन्त एव वृद्धत क्रिया-रूपो के साथ प्रयुक्त होकर कुछ कालो को स्पष्ट करने में सहायक होती हैं । कही कही इनका स्वतंत्र रूप मे भी प्रयोग हुआ है । आलोच्य भाषा मे प्रयुक्त समस्त सहायक क्रियाओ का इस प्रकार व्यवस्थित कर सकते हैं—

(१) वतमान काल—इस काल के सहायक क्रिया रूपो मे प्राप्त धातु 'अह' अथवा 'ह' है । समे पुरुष वचन के विभक्ति प्रत्यय सलग्न होकर अनेक रूप बनाते हैं । इसने अतगत प्राप्त सहायक क्रियाएँ इस प्रकार हैं—

एक वचन—

उ० पु०—

अहउँ-अहऊँ-तव लागि बठि अहउँ बट छाही ।<sup>१</sup> (अह + अउँ)

१—रा० ल० न० १६।३, २—रा० उ० २४।२, ३—रा० उ० २०।२, ४—रा० सु० ५४।६, ५—रा० ल ११५।१८ ६—बरवै रा० १९।१ ७—जा० म० छ० २।४, ८—जा म० १७।१, ९—पा० म १३।२, १०—जा० म० १४६।१, ११—जा० म० छ० १८।२, १२—जा० म० १४६।२ १३—रा० वा० ३५३।९ १४—रा० वा० ३५६।१२ १५—रा० ल० ११९।१२ १६—रा० वा० ३५३।१० १७—रा० ल० ७५।१ १८—रा० अयो १३।१ १९—रा० वा० ३४८।७, २०—रा०



नीति परम हम जानत अहऊँ ।'	(अह + अऊ)
परम धनुर मैं जानन अहउँ ।'	(अह + अऊ)
जानत हौ मोहि दीह बिधि ।'	(ह + औ)

म० पु०—

हसि	बा अनमन हसि बह हँमि रानी ।	(ह + असि)
अहसि	को तू अहमि सत्य बह मोने ।'	(अह + असि)

अ० पु० -

हृद-है	बरन सक छवि अतुलित अस बबि को हृद ।'	(हृ + अइ)
	है प्रभु परम मनोरथ ठाऊ ।	
	एव कहहि कुअँर कितार कलिस बठोर सिव धनु है महा ।'	(ह + ऐ)
	अव जीवन कहैबास न कोइ ।'	(ह + ऐ)
	कया है कछु एक कही ।'	(ह + ऐ)

अहइ-अहई	अहइ कुमार मोर लघु भ्राता ।''	(अह + अइ)
	तुम्हहि कहाव परम प्रिय अहई ।''	(अह + अई)
	प्रभु आयसु जेहि कह जस अहही ।''	(अह + अही)
अहै	तुम्ह कहँ बिदित गति सबकी अहै ।'	(अह + ऐ)

षड्वचन—

म० पु०—

अहह	सतत सील प्रेम बस अहह ।''	(अह + अह)
हह	जानति हह बस नाह हमारे ।''	(ह + अह)

ये दोनो रूप आदराधिक बनकर एकवचन म प्रयुक्त हुए हैं ।

अ० पु०—

अहहि-अहहीं	राम अहहि दसरथ के लछिमन आनक हो ।'	(अह + अहि)
	जे पातक उपपातक अहही ।''	(अह + अही)
	जग पतिव्रता चारि बिधि अहही ।''	(अह + अही)
	ऐसे मर निकाय जग अहही ।'	(अह + अही)

- १—रा० ल० २२।८ २—रा० ल० १७।१४ ३—रा० अयो० १४६।२० ४—रा० अयो० १३।१० ५—रा० अयो० ६२।१२ ६—जा० म० १०७।२ ७—रा० अर० १३।२९, ८—जा० म० ७।३ ९—बरव रा० ३८।१ १०—रा० सु० ३।४३ ११—रा० अर० १७।२२ १२—रा० अयो० २८।२ १३—रा० सु० ५९।७ १४—रा० बा० ३३६।३६ १५—रा० अयो० ८१।१५ १६—रा० अयो० १४।१० १७—रा० ल० न० १२।४ १८—रा० बा० ७।२७, १९—रा० उ० ९।२३, २०—रा० ल० ११९।१५ ।

	मरत आगमनु सूचक अहही ।'	(अह + अहीं)
हहि	मानहुँ प्रसन चहत हहि लका ।'	(ह, + अहि)
	हहि पुरारि तेउ एक गारि ब्रत पालक ।'	(ह, + अहि)
	सो बिचारि सुनि हहि सुमति ।'	(ह, + अहि)
ह	डहकनि हैं उनिअरियाँ निसि नहि घाम हो ।'	(ह, + ऐं)

(२) भूतकाल—इस काल व सहायक क्रिया रूपो म प्राप्त घातु 'भ' है । इसके अतिरिक्त ह—एव रह—घातुयें भी हैं । इन सब म लिंग वचन के अनुसार विभक्ति प्रत्यय लगकर रूप रचना होती है । प्राप्त रूपो को इस प्रकार व्यवस्थित कर सकते हैं—

एकवचन—

पुं—

भा	अव मोहि भा मरोस हनुमता ।'	(म + आ)
	भा मोहि तें कछु बड अपराधू ।'	(म + आ)
	कह सीता विधि भा प्रतिकूला ।'	
	भा कुबरी उर सालू ।' राम तिलकु सुनि भा उर दाहू ।'	
	रावन उर भा क्रोध विसेयी ।' लखि नारद नारदी उमहि सुख भा उर ।''	
भयउ-भयऊ	बेन मूल सुत भयउ धमोई ।''	

नाम अपरना भयउ परन बज परिहरे ।' तुरत पवनसुत गवनत भयऊ ।''

भयो	राम बिमुख कलिकाल को भयो न मांडू ।''
रहा	तद पल्लव महँ रहा लुकार्द ।' मोहि रहा अति अभिमाना ।''
	खेलत रहा सो होइ गै भेटा ।'' राछस भयउ एहा मुनि ग्यानी ।'
	रहा एक दिन अवाधि कर ।'' र । हृदय भरि पूरि उछाहू ।''
	कृत भूप विभीषन दीन रहा ।'' इत भूप विभीषन अथ नाहो ।'
रहेउँ	घरत रहेउँ नृप नीति ।''

१—रा० कि० १४।२० २—रा० सु० ५५।१६ ३—पा० म० १०४।२ ४—रा० बा० १।२५, ५—घरत रा० ३७।२, ६—रा० सु० ७।७, ७—रा० अयो० ४२।१४ ८—रा० सु० १२।१३ ९—रा० अयो० १३।२०, १०—रा० अयो० १३।५ ११—रा० ल० १९।१४ १२—पा० म० १७।२ १३—रा० ल० १०।६ १४—पा० म० ३५।१, १५—रा० ल० १२।१५ १६—घरत रा० ६६।२ १७—रा० सु० ९।१, १८—रा० ल० ११।२१ १९—रा० ल० १८।६ २०—रा० सु० ३७।२२, २१—रा० ल० १।१, २२—रा० बा० ३५।२, २३—रा० ल० ११।१६ २४—रा० ल० २।१६, २५—रा० अयो० ३।२० ।

स्त्री०

भइ मई में दलि विबल भइ जुगल कुमारा<sup>१</sup> ।

(अइ-ए) बालि बधव इह भइ परतीती<sup>१</sup> । विवध धारि भइ गुन गुजारी<sup>१</sup> ।

इन तें भइ पित कीरति अति अभिमान । दह एक भइ मुरछा तेही<sup>१</sup> ।

कुअरि लागि पितु बीच ठाढ़ भइ सोहई<sup>१</sup> । विगत भई सब पीर ।

उमहि बालि रिपि पगन मानु मलत भई<sup>१</sup> । मुषा वटि में दुहु दल ऊपर<sup>१</sup> ।

रही कीरति रही भुवन भरि पूरी<sup>१</sup> । छुधा न रही तुम्हहि तव वाहू<sup>१</sup> ।

जेहि विधि जनकगुना तहें रही<sup>१</sup> । प्रीति रही बछु बरति न जाई<sup>१</sup> ।

बहुवचन—

पु०—

भए राम जपत भए तुलसी तुलसीदास<sup>१</sup> । (आदराय रूप म प्रयुक्त)

उलटा नाम जपत कोल त भए रिपि राउ<sup>१</sup> ।

कौसिक सराही रुचिर रचना मुनि हरपित भए<sup>१</sup> ।

रमाकर भए तिह के मन<sup>१</sup> ।

मुनि सहम परि पाइ कहत भए दपति<sup>१</sup> ।

सात दिवस भए साजत सकल बनाउ<sup>१</sup> ।

सिय रघुबर के भए उनीदे नयन<sup>१</sup> । विबुध मन प्रमन्थि भए<sup>१</sup> ।

भे भे निरास सब भप<sup>१</sup> ।

रहे रहे परन गहू उ द<sup>१</sup> ।

रजनीषर ब द पतंग रहे<sup>१</sup> । परिहरि दास तव जे हाइ रहे<sup>१</sup> ।

जहें तहें रहे पयिक थकि नाना<sup>१</sup> । बोलि अकेलि जेहि आधित रहे<sup>१</sup> ।

हुते सग मुभाभिनि माइ भली दि ह्यो जनु बीच हुत पहुनाई<sup>१</sup> ।

१—रा० अर० १७।८ २—रा० कि० ७।२६ ३—रा० अयो० ३१७।६, ४—वरव  
रा० ३४।२ ५—रा० अर० २९।४०, ६—पा० म० १२।१ ७—रा० अर० ३०।२०,  
८—पा० म० ११।१ ९—रा० ल० ११४।११ १०—रा० बा० ३५७।६ ११—रा०  
ल ९।५ १२—रा० सु० ८।६, १३—रा० कि० ६।२ १४—वरवै रा० ५९।२  
१५—वरव रा० ५४।२ १६—जा० म० ६।३ १७—रा० ल० ११४।१० १८—पा०  
म० १८।१, १९—वरव रा० २०।१, २०—वरवै रा० १९।२, २१—रा० बा० ३२१।२४,  
२२—जा० म० ५७।१, २३—रा० अर० १३।४०, २४—रा० उ० १४।७ ५—रा०  
उ० १३।२२ २६—रा० कि० १५।२३ २७—रा० उ० १३।३२, —जा०

स्त्री०—

भई सकल हिणें हरपित भई । अस्त भएँ विगत-भई ।  
दिन दुसरे भूप भामिनि णोउ भई सुमंगल खानी । विगत भई सब पीर ।

(३) भविष्यकाल—

इस काल में मुख्य त्रिया धातु हो— से निर्मित रूप सहायक क्रियाओं की तरह प्रयुक्त मिलते हैं। ये तिङ्गत रूप होते हैं। जिन पर विचार विषयक्रम ८ २ १ ३ के अन्तगत किया जा चुका है।

८ २ १ पूर्वकालिक वृद्धत

इस प्रकार के रूपा में धातुओं के साथ -इ ई (मात्रा पूर्ति हेतु) प्रत्यय का योग बहुलता में मिलता है। कुछ रूपों में आलोक की दृष्टि से केवल 'अ' निकल पाता है। इन प्रत्ययों के योग से निर्मित रूपों के साथ कभी कभी परसग क-कइ भी प्रयुक्त हुए हैं।

-इ-ई राम लखन छवि देखि मगन भए पुरजन ।

घर ते खेलत मनहुँ अर्बाहि आई उठि ।

हिणें हेरि हठ सजहु । सजल कठोता कर गहि कहत निषाद ।

कहहु विप्रजन क्या बुझाई । जो असत्य कछु कह्य बनाई ।

अनुलखन विविधता के कारण इ के स्थान पर 'य' भी कहीं कहीं प्रयुक्त है—  
हाट पटारिहि दाय सकल तर लाईहि ।

एक घरहि धनु घाय नाय भिष बैठहि ।

-ऐ गुजत अलि लै चलि मकरदा । (ले—ल+ऐ)

तासु कुसल लै तुम्ह चलि आवहु ।

लछिमन कर प्रथमहि ल नामा ।

ल सुप्रीव सग रघुनाथा ।

ल पुष्पक प्रभु आगे राता ।

सचिव सग लै नम पथ गयल ।

-अ चला अकेल जान चलि तहवा । बोली वचन त्राय कर मारी ।

१-रा० वा० ३१८१२, २ रा० उ० ११२१, ३-रा० बा० ६०१३, ४-रा० अ० ३०१४, ५-जा० म० ५५११, ६-पा० म० ७११२, ७-पा० म० ५६११, ८-वरव रा० २५११, ९-रा० कि० २१८, १०-रा० अयो० १९१९, ११-पा० म० ८७१२, १२-जा० म० १११२, १३-रा० उ० २३१८, १४-रा ल० १०७१६, १५-रा० अ० २७१२९, १६-रा० कि० ७१४९, १७-रा० ल० ११७१७, १८-रा० सु० ४११७, १९-रा० अ० २३१३, २०-रा० अ० २११११

परमग के योग से बने रूप—

कै लाग विमूरन समुनि पन मन बहुरि घोरज आनि कै ।  
 के चल दिगावन रगमूमि अनेक विधि सनमानि कै ।  
 पछिनाव भूत विगाच प्रेत जनन एहै गात्रि कै ।  
 जमघार सरिग निहारि गव नरनारि अन्नि भोजि कै ।  
 गत्र अनिन न्हि दुकूल जारन मत्ती हसी मक्षमारि क ।  
 कोउ प्रगट कोउ हिये कहिहि मिलवन अमिय माहुर घोरि कै ।

८३२ त्रियायक सज्ञा वृत्त

इस प्रकार की रूप रचना म-अन-अना-ना -अब आदि प्रत्ययों का योग होता है यथा—

-अन-अना चाहिय करन सा मव करि बीन ।

पुरुष मिषवन मलन आए ।<sup>१</sup> विन्वामित्र चलन नित चहहीं ।<sup>१</sup>  
 महिपाल मुनि की मिलन मुग ।<sup>१०</sup> काहू बटन कहा न ओही ।<sup>११</sup>  
 दसन अगित उजार ।<sup>१२</sup> रामपान सिख दन पठाए ।<sup>१३</sup>  
 कहन चहत है आजू ।<sup>१४</sup> मिलन जिमि छाहन चाहत ।<sup>१५</sup>  
 सो घनि कहिय बिलाकन भूप कि सोरिहि ।<sup>१६</sup>  
 उभय माति दसा निज मरना ।<sup>१७</sup>

-ना जाना चहहि गूँ गनि जेऊ ।<sup>१८</sup> झूठइ लना झूठइ दना ।<sup>१९</sup>

कहा कही-आ प्रत्यय क योग से भी त्रियायक सज्ञा रूपा की सरचना हुई है यथा

-आ निज नयनन्हि दसा चहहि नाथ तुम्हार विवाह ।<sup>२०</sup>  
 सठ चाहत रघुपनि बल दसा ।<sup>२१</sup> मारा चहमि अघम अमिमाना ।<sup>२२</sup>

-आ प्रत्यय क योग से बन त्रियायक सज्ञा रूपों के त्रियक रूपा म-ए प्राप्त होता है यथा—

१-जा० म० छ० ६।१ २-जा० म० छ० ६।२ -पा० म० छ० ७।१, ३-पा०  
 म० छ० ७।२ ४-पा० म० छ० ७।३ ५-पा० म० छ० ७।४ ६-रा० ल० ७।३  
 ७-रा० अर० २२।६ ८-रा० वा० ३६०।५ ९-जा० म० २।२ १०-रा०  
 अर० २।३ ११-रा० ल० १।५।२२ १२-रा० जया० १।२ १३-रा० उ० १।१२,  
 १।५-रा० ल० २८।१९ १६-पा० म० ९।४।१ १७-रा० अर० २६।९ १८-रा०  
 वा० २२।५ १९-रा० उ० ३९।१३ २०-रा० अया० ३।२ २१-रा०  
 ज० १।१४ २२-रा० कि० १।२० ।

ताहि बधे कछु पाप न होई ।<sup>१</sup> मारे मरिअ जिआए जीजै ।<sup>२</sup>

जेहि गाये सिधि होइ परम निधि पाइय हो ।<sup>३</sup>

अब बिनु सिय राम फिरब भल नाही ।<sup>४</sup>

प्रेम मगन तोहि उठब न भावा ।<sup>५</sup> तुम्हहि कोहब परम प्रिय अहो ।<sup>६</sup>

सियक रूपो मे—'अबे' का योग होता है, यथा—

जिनके लरिबे कर अमिमाना ।<sup>७</sup> जानिबे जनि प्रायलाए ।<sup>८</sup>

## ४ सयुक्त क्रियाएँ

४० आलोच्य भाषा में यद्यपि सयुक्त क्रियाओं का प्रयोग प्रचुरता से नहीं हुआ है, फिर भी अच्छी सख्या में उदाहरण उपलब्ध हैं । कालवाची कृदन्तो, क्रियायक सज्ञाओं मूल घातुओं और नाम शब्दा के साथ अनेकानेक मुख्य क्रियाएँ सहायक रूपों में प्रयुक्त करके विविध अर्थों की सिद्धि की गई है । एक से अधिक क्रिया रूपों की सयुक्तता से कही लाक्षणिक अर्थ, कही व्याकरणिक अर्थ तो कहीं अभिघाथ स्पष्ट होता है, यथा—'दिए डारि' = डारि दिए ( = डाल दिए, लाक्षणिक अर्थ) बठे निहारी' = निहारी (निहारि) बठे ( = दल बठे लाक्षणिक अर्थ) जानि परै' ( जान पडता है, लाक्षणिक अर्थ) करनि रहति' ( = करती रहती है लाक्षणिक अर्थ) कहि न जाइ' ( = कहा नहीं जाता व्याकरणिक अर्थ), बरनि न जाई' ( वनन नहीं की जाती है, व्याकरणिक अर्थ), न जाइ बखानि' = बखानि न जाइ ( = बखाना नहीं जाता व्याकरणिक अर्थ), बरनत नहि बन' ( वनन करते नहीं बनता, व्याकरणिक अर्थ), तजि चले' ( = छोड़ कर चले अभिघाथ), उठि घाई' ( = उठ कर भागी अभिघाथ), कहन चहत' ( = कहना चाहता है, अभिघाथ), आवन चहत ( = आना चाहता है अभिघाथ) ।

यहाँ केवल गठन की दृष्टि से वग बनाए जा रहे हैं जो निम्न प्रकार हैं—

१—वर्तमान कालिक कृदन्त	+	सहायक क्रिया
२—भूत कालिक कृदन्त	+	सहायक क्रिया
३ मूल घातु	+	सहायक क्रिया
४—पूर्व कालिक कृदन्त	+	सहायक क्रिया

१—रा० कि० १।१६, २—रा० अर० २५।१८, ३—रा० ल० न० १।३ ४—रा० अयो० ८०।१४, ५—रा० सु० ३३।२, ६—रा० अयो० २८।२ ७—रा० सु० २०।३ ८—रा० अर० २।।१२ ९—रा० अर० २९।४९, १०—रा० वा० ३२६।३२ १—वरव रा० १२।२ १२—रा० सु० ३०।७६ १३—रा० ल० १०।४।५ १४—रा० सु० ५।१८ १५—पा० म १२।७ १६—रा० सु० ३।३०, १७—वरव रा २१।२ १८—रा० उ० ३।५ १९—रा० उ० १।१२, २०—जा० म० ८६।२ ।

५-प्रियापक गज्ञा + महापक प्रिया  
 ६-नाम शब्द + सहायक प्रिया

(१) वतमान कालिक कृत + सहायक प्रिया (मुख्य प्रियाया व विविध प्रिया रूप) —

पछन	+	घन	=पूछन घने <sup>१</sup>
बहन	+	बनइ	=बहन बनइ <sup>१</sup>
बरनत	+	बनइ	=बरनत बनइ <sup>१</sup>
बगानन	+	बनी	=बन बगानन <sup>१</sup>
गोहन	+	जान	=साहन जान <sup>१</sup>
विनासन	+	रहणै	=विनासन रहणै <sup>१</sup>
मनावन	+	रहणै	=मनावत रहणै <sup>१</sup>
मुनत	+	घलठ	=मुनत घलठ <sup>१</sup>
रान	+	रानै	=रान रानै <sup>१</sup>
करति	+	गई	=करति गई <sup>१०</sup>
निरसत	+	बल	=घलठ निरसत <sup>११</sup>
मनत	+	भेटेउ	=मुनत भेटेउ <sup>११</sup>
बन्त	+	रही	=बदन रही <sup>११</sup>

(२) नूत कालिक कृत + सहायक प्रिया (मुख्य प्रियाओं के विविध प्रिया रूप) —

बनी	+	बेसहि	=बनी बेसहि <sup>१</sup>
मारा	+	जानेसु	=जानेसु मारा <sup>११</sup>
बहा	+	माना	=बहा माना <sup>११</sup>
घाता	+	चाहत	=चाहत घाता <sup>१</sup>
मारा	+	बहसि	=मारा बहसि <sup>११</sup>

(३) मूत कालिक कृत + सहायक प्रिया (मुख्य प्रियाया व विविध प्रिया रूप) —

पट	+	जाई	=पेट जाई <sup>११</sup>
दीप	+	जाइ	=जाइ दीप <sup>१</sup>
मह	+	जाई	=सह जाइ <sup>११</sup>

१-रा० वर० ३०।१९ २-रा० ल० १२ ३४ ३-रा० उ० २८।१७ ४-जा० म० १३।० ५-जा० म० ४।३ ६-रा० उ० २।१३ ७-रा० उ० २।१९ ८ ग या० १२।१४ ९-जा म० २९।० १०-रा० वा ८७।२० ११-रा० ७० १०।१२ १२-रा० ७० १।१८ १३-रा० अयो० ५।१४ १४-रा० उ० ८।२५ १५-रा० कि० १९-रा० वा० १।४।१ १७-रा० अयो० ४।५।४ १८-रा० कि० ०।२०, १०-रा० कि० ६। १०-रा० अयो० २९।१७ २१-रा० सू० १२।४।

जान	+	परै	=जान परै । <sup>१</sup>
पहिसान	+	परै	=पहिसान परै । <sup>१</sup>

(५) पूर्वकालिक कृष्ण के योग मे बने संयुक्त श्रिया रूप-ये संख्या को दृष्टि मे सबत अधिप है—

पूर्वकालिक कृष्ण	+	अप श्रिया रूप	=संयुक्त श्रिया
सत्रि	+	आपउ	=सत्रि आपउ <sup>१</sup>
उतरि	+	आहु	=उतरि आहु <sup>१</sup>
गहि	+	लिए	=गहि लिए <sup>१</sup>
विरि	+	आपउ	=विरि आपउ <sup>१</sup>
बोलि	+	लिए	=बोलि लिए <sup>१</sup>
बलि	+	गयऊ	=बलि गयऊ <sup>१</sup>
बलि	+	आवा	=बलि आवा <sup>१</sup>
हनि	+	भापा	=हनि भापा <sup>१</sup>
उठि	+	बाई	=उठि बाई <sup>१</sup>
भाजि	+	बला	=भाजि बला <sup>१</sup>
फूटि	+	बलि	=फूटि बलि <sup>१</sup>
बोलि	+	सी-हे	=बोलि सी-हे <sup>१</sup>
भागि	+	सी-हा	=भागि सी-हा <sup>१</sup>
उठि	+	बाई	=उठि बाई <sup>१</sup>
बतानि	+	बहो	=बतानि बहो <sup>१</sup>
सत्रि	+	बले	=सत्रि बले <sup>१</sup>
नाई	+	बले	=बले नाई <sup>१</sup>
अनुलाई	+	परेउ	=अनुलाई परेउ <sup>१</sup>
उठाई	+	लिए	=लिए उठाई <sup>१</sup>
लै	+	आपउ	=लै आपउ <sup>१</sup>

१-बरव रा० १२।२ २-रा० बा० २१।१०, ३-पा० म० २५।२ ४-बरवै० रा० ६१।२ ५-रा० अर० १०।४३ ६-रा० उ० १९।२०, ७-रा० ल० १०।८६ ८-रा० सु० १३।१५, ९-रा० ल० १२०।१, १०-रा० अर० १।७ ११-रा० उ० ३।५ १२-रा अर० २।२ १३-रा० कि० १५।१३, १४-रा० वा० ३५।१७, १५-रा० वा० ३५।३।१ १६-पा० म० ७।१२, १७-बरव रा० ४।२ १८-बरवै० रा० २।१२ १९-रा० कि० १९।१५, २०-रा० कि ३।९ २१-रा० अर० १०।४३ २२-जा० म० १५।२



लै	+	गयउ	= लै गयउ <sup>१</sup>
घाय	+	बठहि	= घाय बठहि <sup>२</sup>
जान	+	चला	= चला जान <sup>३</sup>
तज	+	चले	= तज चले <sup>४</sup>

पूर्वकालिक कदन्त रूपो के योग से निर्मित सयुक्त क्रिया अथ की घनिष्ठता की दृष्टि से शिथिल हैं । मुख्य क्रिया रूपो का अथ अपने अस्तित्व का आभास प्राय देता रहता है ।

५-क्रियाधिक सत्ता + सहायक क्रिया (मुख्य क्रियाओ के विभिन्न रूप)

आवन	+	चहत	= आवन चहत <sup>१</sup>
कहन	+	चहत	= कहन चहत <sup>२</sup>
देन	+	चहत	= देन चहत <sup>३</sup>
मारा	+	चहसि	= मारा चहसि <sup>४</sup>
जाना	+	चहसि	= जाना चहसि <sup>५</sup>
करन	+	चाहिय	= करन चाहिय <sup>६</sup>
करन	+	आएहु	= करन आएहु <sup>७</sup>
देखन	+	गए	= देखन गए <sup>८</sup>
जोहारन	+	आए	= जोहारन आए <sup>९</sup>
बैठन	+	कहा	= बैठन कहा <sup>१०</sup>
बचावन	+	लाग	= बचावन लाग <sup>११</sup>
करे	+	लग	= करे लग <sup>१२</sup>
करन	+	लागे	= करन लागे <sup>१३</sup>
सजन	+	लागी	= सजन लागी <sup>१४</sup>
चलन	+	लागे	= चलन लागे <sup>१५</sup>
बाजन	+	लागे	= बाजन लागे <sup>१६</sup>
देखन	+	लागे	= देखन लागे <sup>१७</sup>

१-जा० म० छ० ५।१ २-पा० म० ८७।१२ ३-रा० अर० २ ।१३, ४-रा० कि० १६।७१ ५-जा म० ८६।१ ६-रा० उ० १।१२, ७-रा० अयो० १०।४, ८-रा० कि० ९।२० ९-रा० वा० २।५ १०-रा० ल० ७।२ ११-रा० सु० ६।१६ १२-जा० म० छ० ११।४ १३-रा० वा० ३५।८।१२ १४-रा० अर० २।९ १५-रा० सु० ५६।२०, १६-रा० सु० ६।३ १७-रा० अर० २।१२६, १८-रा० अयो० ८।४ १९-रा० अयो० ३।१२।१८, २०-रा० वा० ३५।१२२ २१-वा० म० ८।३

शोलन	+	लगे	=शानन लग'
ठिन	+	बले	=पठन बले'
परिता	+	बहत	=परिता बहत'
देसा	+	बहत	=देसा बहत'
मुलाना	+	फिरते	=फिरते मुलाना'
१-नाम शब्द	+	अग्य श्रिया रूप	
बागू	+	श्रियो	=श्रिया बागू'
बिनय	+	कीन्ह	=बिनय कीन्ह'
बिदा	+	कीह	=बिदा कीह'
दुस	+	पापउ	=दुस पापउ'
पगु	+	धारा	=पगु धारा'
विचार	+	कीह	=विचार कीह''
आयगु पा	+	पाई	=आयगु पाई''
आसिस	+	दर्द	=आसिस दर्द''
प्रनाम	+	कीह	=प्रनाम कीह
बिना	+	बिए	=बिदा बिए
गवनु	+	कीह	=गवनु कीह
विचार	+	करइ	=करइ विचार
प्रधार	+	होत	=होत प्रधार
सिख	+	दीही	=सिख दीही
मत	+	लगै	=मत लगै
मल	+	कीह	=मल कीह
सजानी	+	जानि	=जानि सजानी

अस्तु, सामान्यत उठ-, चल-, जा-, दे-, पर ( =पठ ) पार-, पा-  
रह-, कर-, राख्-, लाग्- ले-हो-, सन-आदि धातुओं से बने रूपों के योग  
से संयुक्त-श्रियाओं का निर्माण हुआ है ।

१-रा० बा० ३५८१०, २-रा० उ० १९१२, ३-रा० अयो० ४७१६, ४-रा०  
अर० १११४ ५-रा० वि० २११७ ६-रा० बा० ३५४१०, ७-रा० बा० ३५३१२,  
८-रा० अयो ३२१११ ९-पा० म० ४१११ १०-रा० सू० ३७१२५, ११-रा०  
कि० १४६, १२-रा० अर० १३१३५ १३-पा० म० १११३

## ६ वाक्य-रचना

९०

छन्दोमय होने के कारण आलोच्य भाषा में वाक्य संरचना का अध्ययन कुछ जटिल है। वाक्य में प्रयोग स्वच्छता रहनी है। इसलिए प्रयोग गधित्य मिलता है। छन्द लय के निर्वाह से पदक्रम पत्रावय आदि अन्त-व्यन्त हो जाता है। परसंग का प्रयोग होना भी है और बह्ना-बह्ना छानुनाध में उनका लोप भी रहता है। अथ करते समय पाठक को परसंग-याजना अपने पास से करनी पड़ती है। कहीं कहीं कर्ता कम क्रियादि में से किसी एक का लोप मिलता है तो कहीं समुच्चयबोधक अव्ययो का लोप। कहीं विधेय पहले प्रयुक्त हुआ है तो कहीं उद्देश्य पहले। वाक्य में सुरलहर की सही स्थिति समझ पाना भी अति कष्ट साय है।

### ९१ वाक्य कीटियाँ

संरचना की दृष्टि से वाक्य तीन प्रकार के होते हैं -

१-सामान्य २-सयुक्त ३-योगिक।

#### ९११ सामान्य वाक्य

सामान्यतः सामान्य वाक्या में एक उद्देश्य तथा एक विधेय रचनात्मक सघटक होते हैं। इन्हें महत्तम समीपी सघटक कहा जाता है। उद्देश्य तथा विधेय की स्थितियों को स्पष्ट करने के लिए वर्गीकृत उदाहरण इस प्रकार हैं—

(१) कतरि प्रयोग—

बोले राजिव-नयन ।<sup>१</sup> गजहिं मालु कपीस ।<sup>२</sup>

आए चारिउ भाइ ।<sup>३</sup> प्रभु प्रताप में जाउ सुखाई ।<sup>४</sup>

राउ बहेउ कर जोरि ।<sup>५</sup> भए प्रगट भरुनासिधु ।<sup>६</sup>

तथा—

निज भवन गवनेउ सिधु ।<sup>७</sup> बाले वामदेव सब साची ।<sup>८</sup>

अवध उजार कीह नेक ।<sup>९</sup> गिरिवर सुनिय सरहना ।<sup>१०</sup>

१-रा० ल० ६७।२० २-रा० ७० ४७।१७ ३-रा० वा० ३५८।२० ४-रा० सु० ५९।१२ ५-जा० म० २१।१ ६-पा० म० छ० ८।४ ७-रा० सु० ६ १।७, ८-रा० वा० ३५९।१ ९-रा० अयो० २९।१७ १०-पा० म० १५।२।

सजि समाज गिरिराज दीह सब । सखी मुख गौरि निहारउ ।

(२) कमणि प्रयोग—

बर अनुहरत बरात बनी । बंदुरि माँवरि परी ।  
 घर घर बाजन लगे बघाए । पुर नर नारि सकल पहिराए ।  
 भूपति बोलि बराती लीहे । विपुल बाजन लागे ।  
 सो छवि जाय न बरनि देखि मन मानहि ।  
 करि ने जाइ सर मज्जन पानी ।  
 राम तिलक हित लपन धराई ।  
 पूजे कुल गुरु देव कलसु सुभ सिल धरी ।  
 कर कमलनि जयमाल जानकी सोहइ ।

(३) भावे प्रयोग—

जाइ न बरनि समउ सखु सोई । बने बराती बरनि न जाई ।  
 महिमा जाइ न जलधि क बरनी । कहि न जाय कपि जूषप भीरा ।  
 उपर्युक्त वाक्यों में कतरि प्रयोग के अतगत यथाथ कता के दर्शन होते हैं जबकि कमणि प्रयोग के अन्तगत व्याकरणिक कर्ता के तीसरे वर्ग भावे प्रयोग के अतगत भी व्याकरणिक कर्ता ही है। 'भावे प्रयोग का तीसरा वर्ग इसलिए बनाया गया है कि उदघत वाक्यों में असामर्थ्य का बोध होता है। और असामर्थ्य का भाव प्रबल हान के कारण इस प्रकार क-उदाहरणों को 'भावे प्रयोग के अतगत ही स्थान दिया जा सकता है।

सामान्य स्वतंत्र वाक्य सघटन—

(१) उद्देश्य	+	विधेय (अकर्मक क्रिया युक्त)
राजिवनन	+	बोले <sup>१८</sup>
कृपासिधु	+	बोले <sup>१९</sup>
अभिमानी	+	विहँसा <sup>२०</sup>
नृप	+	अभिलाषे <sup>२१</sup>

१—पा० म० २३।१ २—पा० म० ४८।२ ३—पा० म० १०।१, ४—पा० म० १३।२ ५—रा० वा० ३१।१२, ६—रा० वा० ५१।११ ७—रा० वा० ३५।७ ८—रा० वा० ३४८।५, ९—जा० म० ८७।१ १०—रा० वा० ३९।५ ११—रा० अयो १८।१२, १२—पा० म० १३।११, १३—जा० म० १०७।१ १४—रा० वा० ३४५।१४ १५—रा० वा० ३४८।७ १६—रा० ल० ६२।१७ १७—रा० ल० ८१।४ १८—रा० वा० ६३।२०, १९—रा० वा० ८७।१२ २०—रा० सु० ३७।२ २१—रा० अयो २।२ ।

## ३२४ । तुलसी की मापा

उपयुक्त उद्देश्य एवं विधेय सघटको का समीपी सघटको के योग से बहुत सघटन बन जाता है—

आए चारिउ भाइ<sup>१</sup> । चारिउ भाइ आए

----- १ -----	-----
	२
-----	

बहहि परस्पर कोकिल बयनी<sup>१</sup> । कोकिल बयनी परस्पर बहहि

-----	-----	-----
१	२	
-----		

आगे चले बहुरि रघुराया<sup>१</sup> । रघुराया बहुरि आगे चले

-----	-----	-----	-----
१	२		-----
-----			

(२) उद्देश्य + कम + विधेय (सकमक क्रिया युक्त)

नरनारि रघुकुलदार्पाहि निहारहि

-----	-----	-----	-----
१		----- २ -----	

इन तीन सघटको का समीपी सघटको के योग से बहुत सघटन बन जाता है—  
पूछी मधुर वचन महतारी<sup>१</sup> । महतारी मधुर वचन पूछी

-----	-----	-----
१	२	
-----		

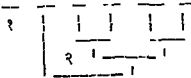
विप्र माधु सुर पूजत राजा<sup>१</sup> । राजा विप्र साधु सुर पूजत

-----	-----	-----	-----
१			
-----			
-----			
२			

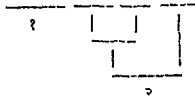
सुप्रीबहु सुधि मोरि बिसारी । सुप्रीबहु मोरि सुधि बिसारी

-----	-----	-----	-----
१			
-----			
-----			

अब सी मत्र देहु प्रमु मोही । प्रमु । अब सी मत्र मोही देहु



'दरहि भालु' कपि अद्भुत करनी । भालु कपि अद्भुत 'करनी करहि



सिधु पार प्रमु डेरा कीहा । प्रमु डेरा सिधु पार कीहा



आलोच्य मापा मे अनेकानेक समीपी सघटवा के योग स बहुत लम्ब वाक्य का गठन भी सम्भव हुआ है यथा—

आयसु मोगि राम पहि अगलादि कपि माय,  
लछिमन चले क्रुद्ध होई बान सरामन हाथ ।

१ १ २ संयुक्त वाक्य (Compound)

संयुक्त वाक्य म एक स अधिक प्रधान उपवाक्य भी हा सकत हे । संयुक्त वाक्यो म समानाधिकरण उपवाक्यो वा मयाजन निम्नलिखित समुच्चय बाधक अ यव दादो से होता है, यथा—

१ १ २ १ सयोजक—

तजहु सोच मन आनहु घोरा ।

(और का लोप)

चलहि सदा पावहि सुगहि ।

तुम सभ पुरुष न मो सम नारी ।

लोचन जल वह पुष्क सरीरा ।'

मजु मनोरथ कलस भरहि अरु रितवहि

गयउ सहमि नहि कछु कहि आवा ।'

(और का लोप)

और करे अपराधु काउ धीर पाव फल भागु ।

वरसन लगे मुमन सुर दुर्दमि वाजहि ।'

” ”

रितवहि भरहि धनु निरखि छिनु छिनु निरखि रामहि सोचहि ।'

(और का लोप)

टुलहिनि उमा ईसु बरु साधक ए मुनि ।

”

मुनि मुनि बिनय महेस परम सुख पायउ ।

”

कया प्रसग मुनीसह सकल सुनायउ ।'

”

निज दुख गिरि सम रज करि जाना ।

”

मिजक दुख रज मरु समाना ।'

”

अव नाथ करि कपना बिलोकहु देहु जो वर मागऊ ।'

”

गहि बांह सुर नर नाह आपन दास अगल कीजिए ।''

”

९१२० विमाजक

गरस होउ अथवा अति फाका ।'' की मइ मेंट कि फिरि गए ।''

की तुम राम दीन अनुरागी ।' आयहु करन मोहि बढ भागी ।''

हमहु कहव अब ठकुर साहाती । नाहि त मोन रहव तिन राती ।

सोवहि सिध सहित जप व्याला । पूरहि न त भरि कुषर बिसाला ।''

दू उतरु अनु करहु कि नाही ।' छाडहु वचनु कि धीरज धरहु ।''

९१२३ प्रतिषेधक—

विधि गति जानि न जाद अजसु नग जान ।'

(कित्तु का लोप)

परम शोध मीजहि सब छाया । आयसु प न दहि रघुनाथा ।'

मोः जिय नगन न नाही । भगति बरिति न जान मन माहा ।''

(क्योकि का लोप)

---

१- रा० अर० ६।२०	२-जा० म० ८०।२	३-रा० अयो० २९।९,	४-रा०
अया० ७७।१८	५-जा० म० ९७।१	६-जा० म० छ० १०।१	७-पा म० ८०।१,
८-पा० म० ७७।२	९-रा० कि ७।४	१०-रा० कि० १०।२०,	
११-रा० कि० १०।१	१२-रा० बा० ८।२,	१३-रा० सु० ५३।१७	
१४-रा० कि० ६।१६	१५-रा० अयो० ६।८	१६-रा० सु० ५५।१२	
१७-रा० अयो० ०।७	१८-रा० अयो० ३।१३	१९-जा० म० ७०।२,	
२०-रा० सु० ५५।१०	२१-रा० अर० १०।१२		

९१२५ परिणाम बोधक—

जातें मोहि न कहत कछु राऊ । मोरि सपथ कछु सति भाऊ ॥<sup>१</sup>  
तब मायावस फिरहु भुलाना । तोते मैं नहिं प्रभु पहिचाना ॥<sup>२</sup>

९१३ यौगिक वाक्य

इसमें मुख्य उपवाक्य एक ही रहता है, पर आश्रित उपवाक्य एक या एक से अधिक आ सकते हैं । यौगिक वाक्यों को तीन भागों में बाँटा गया है—

१—सज्ञा उपवाक्य २—विशेषण उपवाक्य ३—क्रिया विशेषण उपवाक्य

९१३१ सज्ञा उपवाक्य -

मुख्य उपवाक्य की किसी सज्ञा या सज्ञा वाक्यांश के बदले जो उपवाक्य आता है उसे सज्ञा उपवाक्य कहते हैं । का य में प्राय 'कि' का लोप पाया जाता है—

मुनहु तात तुम्ह कहूँ मुनि कहहीं । राम खराचर नायक अहहीं ।<sup>१</sup>  
निक्सि वसिष्ठ द्वार भए ठाढ़े । देखे लोग बिरह दब दाढ़े ।  
लखन लखेउ, भा अनाथ आजू ।<sup>२</sup> सकल सुकृत कर फल सुत एहू ।  
राम सीय पद सहज सनहू ।<sup>३</sup> कह मुग्गीव सुनहु रघुबीरा ।<sup>४</sup>  
ता पर मैं रघुबीर दुहाई । जानहुँ नहिं कछु भजन उपाई ।<sup>५</sup>  
मुनि हँसि कहेउ जनक यह मूरति सोहइ ।  
सुमिरत सङ्गत मोह मल सकल बिछोहइ ।<sup>६</sup>

जो— मैं जो कहा रघुबीर कृपाला बधु न होइ मोर यह काला ।<sup>१</sup>  
जो कछु कहेउ सत्य सब होई ।<sup>२</sup>  
जो मुनि करहि बखान सहज बयस बिसराय रिपु ।<sup>३</sup>  
सो कि दोष गुन मनइ जो जेहि अनुरागइ ।<sup>४</sup>  
जो सहि दुख परिछिद्र दुरावा । बदनीय जेहि जग जस पावा ॥<sup>५</sup>

९१३२ विशेषण उपवाक्य--

विशेषण उपवाक्य मुख्य वाक्य की किसी सज्ञा की विशेषता प्रकट करता है । इसलिए वाक्य में सज्ञा के स्थान पर अथवा भज्ञा के साथ विशेषण उपवाक्य लगाया जाता है--



घावा झोपवत गग कसैं । छूटइ पवि परयत कहुँ जमें ।<sup>१</sup>

घनु रबिर रचना बनी जनु प्रगटि । चतुरानन बनरता देखाई सब आपनी ।<sup>१</sup>

(४) परिमाणवाचक—

परिमाण वाचक त्रिया विगणन स अधिकता या तुल्यता या 'यूनता का बोध होता है \* यथा—

बरपहि जल्द भूमि निभराए । यथा नवहि बुध विद्या पाए ॥<sup>१</sup>

दुष्ट उच्य जा भारत हतू । जया प्रसिद्ध अधम ग्रह कतू ॥

(५) कायकारण वाचक—

कायकारण वाचक त्रिया विगणन स निम्नञ्चित अर्थों का द्योतन होता है—

(अ) परिणाम—

तात मैं अनि अलि बन्वान । धारे महु जानिहैं मयान ॥<sup>१</sup>

तव माया बस फिरहु मुलाना । ताते हैं नहि प्रभु पहिचाना ॥<sup>१</sup>

(ब) उद्देश्य या कारण—

जात होइ चरन रनि सोक मोह भ्रम जाइ । जार जोगु मुभाउ हमारा ।

अनमल दमि न जाइ तुम्हारा ॥ ('कथोकि का लोप)

(ग) काय या निमित्त—

सबति मुभाउ सबहि नहि दखी । (इमलिए का लोप)

राम निलक हित लगन धराई ।<sup>१</sup>

साइअ पहिरिअ राज तुम्हारे

सत्य कह नहि दोष हमारे ।<sup>१०</sup>

आलोच्य भाषा स सकेत वाचक त्रिया विगणन उपवाक्या स जो—ती युग्म का प्रयोग मिलता है और बाह्य वाक्य ती स भावचित वाक्य सकेतवाचक त्रिया विगणन उपवाक्य होता है यथा—

जौ मन मान तुम्हार ती लगन धरावहु ।<sup>११</sup>

ती फुरि होउ जा कहेउं सब ।<sup>११</sup>

जौ बर लागि करहु तप ती लरिवाइअ ।<sup>११</sup>

पारस जौ घर मिल ती मरु कि जाइअ ।<sup>१</sup>

१—रा० अर० २१।२० २—जा० म० छ० १।२ ३—रा० कि० १४।६ ४—रा०

उ० १२।१४० ५—रा० बा० १२।१२ ६—रा० कि० २।१८ ७—रा० अर० १४।१९

८—रा० अया० १६।१४ \*—कामता प्रसाद गुरु हिंदी व्याकरण प० ५३३

९—रा० अयो० १८।१२ १०—रा० अया० १९।८ ११—पा० म० ७।२ १२—रा०

बा० १।२५ १३—पा० म० ४६।१, १४ -पा० म० ४६।२ ।

जो यह सांची है सदा तो नीको तुलसीक ।  
जो बदाचित्त मोहि मारिहि तो प्रति होउं सनाथ ।  
जो बिधि लोचन अतिथि करत नहि रामहि ।  
तो कोउ नपहि न देन दाप परिनामहि ।

(द) विरोध—मुनिबर तुम्हरे बचन मेरु महि डोलाई ।

तदपि उचित आचरण पाँच भल बोलैहि ।

जदपि नाथ बहु अवगुन मोरें ।

सेवक प्रनुहि पर नहि भौरें ।

(तदपि का लोप)

फूलइ फलइ न बँत, जदपि सुधा बरपहि जलद ।

” ” ”

वाक्यगत पदो म जिम सुनिश्चित ध्यवस्था को आवश्यकता होती है, उसका विदलेपण निम्न विभागा के अन्तगत कर सकते हैं—

१-पदक्रम (Word-order) २-पदात्रय (Concord)

३-पदाधिकार (Government)

## १ २ पदक्रम (Word order)

अभीष्ट अर्थ का द्योतन कराने के लिए वाक्यगत पदा में एक निश्चित क्रम का होना आवश्यक होता है। ऐसा न होने पर अर्थ के अनर्थ होने की सम्भावना विद्यमान रहती है। लेकिन कायकार की भाषा म पदक्रमानुसार का व्याकरणिक बंधन बहुत महत्वपूर्ण नहीं होता है। उसे छंद लय आदि के निर्वाह करने के लिए पदक्रम भंग करने की स्वतंत्रता रहती है। इनका होने पर भी यह क्रम भंग इस कोटि तक नहीं पहुँच पाता है कि अभीष्ट अर्थ समाप्त हो जाय। महाकवि तुलसीदास ने अपनी अवधी रचनाओं म याकरण की दृष्टि से भी पदक्रम का निर्वाह करके अदभुत काय कौशल का परिचय दिया है। आर्योच्य भाषा म प्राप्त पदक्रम को निम्नलिखित ढंग से स्पष्ट किया जा सकता है, यथा—

(१) कर्ता, (२) क्रम (३) समापिका क्रिया (४) असमापिका क्रिया,  
(५) अवयव ।

(क) बलात्मक निपात (ख) क्रियाविशेषण, (ग) समुच्चयबोधक  
(घ) निषेधसूचक शब्द ।

(६) प्रश्नवाचक शब्द

(१) कर्ता—कर्ता वाक्य के आदि, मध्य तथा अंत तीनों ही स्थितियों म मिलता है यथा—

आदि म—

रघुपति अनुजहि आवत दखी<sup>१</sup> । पुर नर नारि निहारहि रघुकुल दीपहि<sup>१</sup> ।  
नप करि विनय महाजन केरे<sup>१</sup> । रघुपति पितहि प्रेमबस जानी ।  
कोउ कह नर नारायन हरिहर कोउ<sup>१</sup> ।  
राय कौसिकहि पूजि दान विप्रह दिए<sup>१</sup> ।

मध्य—

उठी सखी हसि मिस करि कहि मूढु बन ।  
मीठ काहि कवि कहहि जाहि जोइ भावइ<sup>१</sup> । देखत देव सिहाहि<sup>१</sup> ।  
अस कहि कुटिल भई उठि ठाढी<sup>१</sup> । एहि विधि राठ मनहि मन माया<sup>११</sup> ।

अन्त—

जिमि सुख लहहि न सकर द्रोही<sup>११</sup> ।  
लागि झरोखट झौकहि भूपति भामिन<sup>११</sup> ।  
बोले बचन मदुल रघुराया<sup>१</sup> । कीह घोर धरि गवनु महीसा<sup>११</sup> ।

(२) कम—इसका भी क्रम परिवर्तनशील है । आदि मध्य अन्त तीनों स्थितियों में मिलता है यथा—

आदि म—

कथा प्रसंगमुनि ह सकल सुनायउ<sup>११</sup> ।  
रघुबर अरित पुनोत निसिदिन आस तुलसी गावही<sup>१</sup> ।  
नल नीलहि सब कथा सुनाई<sup>११</sup> ।

मध्य—

कौसिक जनकहि कहउ देहु अजुसासन<sup>११</sup> ।  
रिपि निकाय मुनिबर गति दखी<sup>१</sup> ।

अन्त—

जनक नगर ल गयउ महामुनि रामहि<sup>११</sup> ।  
सो घनु कहिय बिलोवन भय किसारहि<sup>१</sup> ।  
पावन करी सो गाइ भवस भवानिहि<sup>११</sup> । सुनु सगस प्रभु क यह बानी<sup>१</sup> ।

१—रा० अर० ३०।१ २—जा० म० ६५।१ ३—रा० बा० ४०।१ ४—रा०  
अयो० ६५।७ ५—वरव० रा० २२।५ ६—जा० म० १२३।१ ७—वरव० रा० १९।१,  
८—पा० म० ६५।२ ९—जा० म० १२६।२ १०—रा० अयो० ३ ११ ११—रा०  
अयो० ३०।१, १२—रा० कि० १७।१०, १३—जा० म० ७२।१ १४—रा० ल० ११८।६  
१५—रा० अयो० ३१९।६ १६—पा० म० ७७।२ १७—रा० अर० ६।१८ १८—रा०  
ल० १।२२ १९—जा० म० ८१।२ २०—रा० अर० ९।५ २१—जा० म० ८०।२,  
२२—जा० म० ९८।११ २३—पा० म० ८।५ २४—रा० ल० ११४।५

- (२) क्रिया—सामान्यतः क्रिया वाक्य के अंत में प्रयुक्त होती है। काव्य में लय तथा तुकान्त की दृष्टि से क्रिया का प्रयोग—आदि, मध्य तथा अन्त में किसी भी स्थान पर किया जा सकता है। आलाच्य भाषा में भी क्रिया का स्थान निश्चित नहीं है कभी आदि, मध्य में तो कभी अन्त में प्रयोग मिलता है—

अंत में—

जनु मगराज किसोर महागज मजेठ ।<sup>१</sup>

अचल सुना मनु अचल धरारि कि डोलइ ।<sup>२</sup>

हाथ जोरि करि विनय सबहि सिर नावौ ।<sup>३</sup>

रव जनु पषिक हकारहि ।<sup>४</sup> पावन अस त्रिभुवन विस्तारयो ।<sup>५</sup>

मध्य— ती कोउ नृपहि न देत दीपु परिनामहि ।<sup>६</sup>

कपि तनु काह दुगुन विस्तारा ।<sup>७</sup> जानतहूँ पूछिय कस स्वामी ।<sup>८</sup>

आदि—आवा निकट जती के वषा ।<sup>९</sup> चला विमान तहा ते चोला ।<sup>१०</sup>

मिलेहु राम तुम्ह समन विषादा ।<sup>११</sup> भए प्रगट कर्मानिधु ।<sup>१२</sup>

(८) असमापिका क्रिया—

आलोच्य भाषा में असमापिका क्रियाओं का भी स्थान निश्चित नहीं है। इस प्रकार के रूप आदि, मध्य तथा अंत तीनों स्थानों पर प्रयुक्त हुए हैं यथा—

आदि— लखि नारद नारदी उमहि मुख मा उर ।<sup>१३</sup>

तमकि ताहि यह तारहि कहव महेस ।<sup>१४</sup>

देशन भालु कीस सब आए ।<sup>१५</sup> कहन चहत अब कोइ ।<sup>१६</sup>

मध्य— मीलन मागि भव राहि ।<sup>१७</sup> सजल कठौता कर गहि कहत निषाद ।<sup>१८</sup>

कोहू बठन कहा न राहा ।<sup>१९</sup> आए मिलन जगन अचारा ।<sup>२०</sup>

अंत— कम प्रभु नयन कमल अस कहीं बरानि ।<sup>२१</sup>

घर ते खलन मनहुँ अबहि आइ उठि ।<sup>२२</sup>

नहि सगुन पायउ रह भिसु करि एक घनु नयन ।<sup>२३</sup>

१—जा० म० १०४१२, २—पा० म० १५१२ - जा० म० २११ ४—रा० उ० २११ ४, ५—रा० म० १११५६ ६—जा० म० ७४१२ ७—रा० म० २११४, ८—रा० अ० १११४ ९—रा० अ० २५१४ १०—रा० ल० १२०१८ ११—रा० कि० ७३३८ १२—पा० म० ७७ ८१६ १३—पा० म० १७१२ १४—वरव रा० १५१२ १५—रा० ल० १०८११९ १६—रा० उ० ११२० १७—पा० म० ५०११ १८—वरव रा० २१११ १९—रा० अ० २१९ २०—ग० अ० १२११४ २१—वरव रा० ६१०

(५) अयय—

क बलात्मक निपात—इस प्रकार क अयय बल प्राप्त पदों के ठीक बाद में मिलते हैं यथा—

काल्हू जीति निमिपि महु लावो ।<sup>१</sup> मुएहु न मिटिहि न जाइहि काऊ ।<sup>१</sup>  
 अजहु प्रीति उर रहति न राकी ।<sup>१</sup> काहु बठन कहा न आई ।<sup>१</sup>  
 कवहु जोग वियाग न जाक ।<sup>१</sup> अजहु हृदउ जरत तहि आंचा ।<sup>१</sup>  
 तुहु सराहसि करसि सनहु । एक वार कसहु सुधि जानी ।<sup>१</sup>

ख क्रियाविगण—वाक्य में क्रिया विगणों का स्थान भा निश्चित नहीं मिलता है यथा—

आदि— अवहा त उर ससय हाइ ।<sup>१</sup> आग परा गोघपति दत्ता ।<sup>१</sup>  
 कवहु निबिड है त्विन मह ।<sup>१</sup> जहाँ प्रगट रघुवीर बिराजा ।<sup>१</sup>  
 जह जह जाहि दव रघुराया ।<sup>१</sup> कहु कहु सरिता तीर उदासी ।<sup>१</sup>  
 यहाँ तथा मजन कर वासा ।<sup>१</sup> तह तहे राम निवाहिव नाथ सनहु ।<sup>१</sup>

मध्य— नेहि न हाइ पाछे पछिताऊ ।<sup>१</sup> खल क प्रीति जया धिर नाही ।<sup>१</sup>  
 नए वृत्त जयत प्रभु आए ।<sup>१</sup>  
 रामहि भाइन्ह सहित जवहि सुनि जोहेउ ।<sup>१</sup>  
 मिह ठवनि इत उन चितव ।<sup>१</sup>  
 जनम जनम जह जहँ तनु सुलसिहि देह ।<sup>१</sup>  
 करी मघ तह नह नभ छया ।<sup>१</sup> रउ तह तह कर जारि ।<sup>१</sup>

अन्त— कीन्ह निवासु गमापति जवम ।<sup>१</sup>  
 खलु सद्योत दिन करहि जसा ।<sup>१</sup> मत्र सनमानि बहोर बहोरी ।<sup>१</sup>

ग समुच्चय वाक्य—इस ढंग में अर्थ कि की अथवा त नाहित, नत, किवा, प जा तात आदि प्राप्त ह ।

१—रा० कि० १८४ ४ रा० अगो० २६१० ३—रा वा० ५०१६, ४—रा० अर० २१९ ५—रा० वा ४ १२५ ६—रा० अया० ३१९ ७—रा० अया० ३२१३ ८—रा० कि० १८५ ९—रा० ल० ०१५ १०—रा० अर० ०१३ ११—रा० कि० १५१० १२—रा० अर० १६१८ १३—रा० अर० ७१९ १४—रा० उ० २९१९ १५—रा म० १ १—वरव रा० २९१७ १६—रा० अया० ६१० १७—रा० कि० १५४ १८—रा कि० १ १६ १९—जा० म० १८१ २०—रा० ल० १८१३, २१—वरव ग० ६९ २२—रा० अ० ७१० २३—रा० ल० ११०६ २४—रा० कि १२१० २५—रा० १० ११७ २६—रा० अया० ३१८१६ ।

- (१) सयोजक - 'अरु' शब्द वाक्य के मध्य में ही प्रयुक्त हुआ है—  
 मुनिहि मुदित मन पितु अरु माता<sup>१</sup> । हरि लीन्हेसि सबसु अरु नारी<sup>१</sup> ।  
 (२) विभाजक—इस प्रकार की शब्दावली के प्रयोग का भी वाक्या में स्थान  
 निश्चित नहीं है ।

आदि— नाहि त सपदि मानु मम बानी<sup>१</sup> ।  
 नाहि त मोन रहव दिन राती<sup>१</sup> । की मैनाफ कि खगपति होई<sup>१</sup> ।  
 मध्य— सरस होउ अयवा अति फीका<sup>१</sup> । सुमुखि होत न त जीवन हानी<sup>१</sup> ।  
 सुधा कि रोगिहि चाहिइ रतन कि राजहि<sup>१</sup> ।  
 अंत— नप अभिमान मोहवस किबा<sup>१</sup> ।

- (३) प्रतिषेधक—इस वग के शब्दों का प्रयोग अत्यल्प है, यथा—  
 आयसु पै न देहि रघुनाथा<sup>१</sup> ।

(४) परिणाम सूचक—इस प्रकार के शब्द प्रायः वाक्यादि में ही मिलते हैं, यथा—  
 ताते तात न सकहे समझायउ<sup>१</sup> । ताते मैं नहि प्रमु पहिचाना<sup>१</sup> ।

- (५) विस्मयवादी वाचक शब्द—इस प्रकार के शब्दों का क्रम निश्चित नहीं है ।  
 इन शब्दों का सर्वाधिक प्रयोग वाक्य के आदि में हुआ है यथा—

आदि— हा लछिमन तुम्हार नहि दोषा<sup>१</sup> । हा गुनखानि जानवी माता<sup>१</sup> ।  
 हा जग एक बीर रघुराया<sup>१</sup> । रे कपि बबर खब खल<sup>१</sup> ।  
 मध्य— राम अनुज कप रे सठ सगा<sup>१</sup> ।  
 अंत— निरखति तवानन सादर ए<sup>१</sup> । वृकल्प विभो सब धानर ए<sup>१</sup> ।

- (६) निषेध सूचक शब्द—सामान्यतः नकारात्मक शब्दों की स्थिति कर्ता व वात् एव  
 क्रिया से पहले पाई जाती है किन्तु आलोच्य भाषा में शब्दों का प्रयोग  
 आदि मध्य और अंत तीनों स्थानों पर किया गया है यथा—

आदि— नहि कोउ मोहि समान<sup>१</sup> ।  
 नहि ज हैं जुबराज प्रवीना<sup>१</sup> । जनि दिन कर कुल होसि कुठारी<sup>१</sup> ।  
 मध्य— अकथ अनामय नाम न रूपा<sup>१</sup> । देवि करी कछु विनती विलगु न मानव<sup>१</sup> ।

१—रा० वा० ८१ ८ २—रा० कि० ६१२२ ३—रा० सु० १०१३ ४—रा०  
 अयो० १६१८ ५—रा० अर० २९१२५ ६—रा० वा० ८१२२ ७—रा० स० १०१४  
 ८—पा० म० ४६१२, ९—रा० ल० १०१९, १०—रा० सु० ५५११०, ११—रा०  
 अयो० ११२० १२—रा० कि० २९१५ १३—रा० अर० २९१५ १४—रा०  
 अर० ३०१३, १५—रा० अर० २९११ १६—रा० ल० २६१२०, १७—रा० ल० २६१९,  
 १८—रा० ल० १११३४, १९—रा० ल० १११३५ २०—रा० उ० ११२१२७,  
 २१—रा० कि० २६१२८ २२—रा० अयो० ३३११२ २३—रा० वा० २२१४, २४—पा०  
 म० ४३११

चलि विचारि विबुध मति पोची <sup>१</sup> ।	(एकवचन, स्त्री०)
सुमन बरपि सब सुर चले <sup>१</sup> ।	(बहुवचन पु०)
गई गिरा मति फेरि <sup>१</sup> ।	(एकवचन स्त्री०)
राम लखन छवि देखि मगन गए पुरजन <sup>१</sup> ।	(बहुवचन पु०)
हिय हरये नर नारि <sup>१</sup> ।	(बहुवचन पु०)

(२) पुरुष-वचन (कर्ता एव क्रिया) —

(१) वतमानकालिक तिङन्त रूप—

उ० पु०

एकवचन	जह जहे मैं दखउ दोउ भाई <sup>१</sup> । तुम्ह पूछउ मैं कहत डेराऊ ।	
	बदौ लछिमन पद जल जाता <sup>१</sup> ।	(कर्ता का लोप)
	सिय रघुबार बिवाह जयामिति गावी <sup>१</sup> ।	(कर्ता का लोप)
बहुवचन—	कुसल करार्ह करतार कहहि हम सांचिअ <sup>१</sup> ।	
	हम छत्री भगथा बन करही <sup>१</sup> ।	
	तुम्ह से खलमग बूढत फिरही <sup>१</sup> ।	(कर्ता का लोप)
	म० पु०	

एकवचन—	हरप समय विपमो करसि <sup>१</sup> ।	(कर्ता का लोप)
	महामद मन सुख चहरिस <sup>१</sup> । कहहि सचिव सुनु निचर नाहा <sup>१</sup> ।	

बहुवचन—	तुम्ह जानउ सब राम प्रमाऊ <sup>१</sup> । तुम्ह पूछउ कस नर की नाई <sup>१</sup> ।	
	अ० पु०	

एकवचन—	का पूछहु तुम्ह अबहु न जाता <sup>१</sup> । कबहुँकि नलिनी करइ विकासा <sup>१</sup> ।	
	जो सोचइ ससि कलह सो सोचइ रीरेहि <sup>१</sup> ।	
	दोइ सद्य फल प्रगट प्रमाऊ <sup>१</sup> ।	(कर्ता का लोप)

बहुवचन—	सत सहहि दुख पर हितलागी <sup>१</sup> । रोप सकउ सपल्लव मगल तरुवर <sup>१</sup> ।	
	जनक जय जय सब कहहि <sup>१</sup> । भरत आगमनु सकल मनावहि <sup>१</sup> ।	

१—रा० अयो० १२।१०	२—रा० ल० ११४।२१	३—रा० अयो० १२।१०	४—जा० म० ५।१	५—रा० अयो० ८।१४	६—रा० अर० २५।१	७—रा० अयो० १७।५
८—रा० बा० १६।७	९—जा० म० १२	१०—पा० म० १०७।१	११—रा० अर० १९।१७	१२—रा० अर० १९।१८	१३—रा० १२९	१४—रा० अर० ३६।३७
१५—रा० ल० ८।१७	१६—रा० कि० २।	१७—रा० अयो० १९।३	१८—रा० म० २०—	१९—रा० २१—३		
२०—रा० २।२६	२१—रा० उ० १२।१	२२—रा० २५—	२३—जा० ३२।३२	२४—रा० अयो० ११।		

बिलपहि वाम विघातहि दोष लगावहि ।

बद पुरान सत सब कहौ ।

(२) समावनाय एव भविष्यकालिक तिङन्त रूप—

पूर न जाउ दस चारि धरीसा । (कर्त्ता का लोप, उ० पु० एकवचन)

जाय उतरु अय देहुँ काहा । " " "

कालहु जीति निमिष महि आनी । " " "

भागौ तुरत तजौ यह सैला । " " "

अचल करौ तनु राखहु प्राना । " " "

रहिहहु निकट सैल पर जाई । " " "

राम काज सब करिहहु । " " "

कृपा निकेत पद मत लाइ है । " " "

हम सीता कड मुधि लो हे बिना । " " "

नहि जहै जुवराज प्रवीना । (उ० पु० बहुवचन)

राम विराधि न उबरसि । (कर्त्ता का लोप, म० पु० एकवचन)

पनि असि कहसि बबहुँ घरफोरी । (कर्त्ता का लोप, म० पु० एकवचन)

हिएँ हेरि हठ तजहु हठ दुख पैहहु । (कर्त्ता का लोप, म० पु० बहुवचन)

याह समय सिख मोरि ममुक्षि पछि तैहहु । " " "

राम काज सब करिहहु तुम्ह बल बुद्धि निधान । (म० पु० बहुवचन)

पछिताव भूत पिताच जनेत एहै ताजि ब । (अ० पु० बहुवचन)

तुम्हहि सहित असवार बसहै जब होइहहि । ( " " " )

(३) लिंग वचन (कर्म एव क्रिया)—भूत निश्चयाद्य सकर्मक क्रिया रूप-कर्म के

लिंग वचन से प्रभावित —

कपट छरी उर पाहन टेई । मुनि बुदरी सिय माया गनी ।

जब ते क्रमति मुनी में भामिनि । गति पाई जो मुनिबर पाया ।

१-पा० म० ३११२ २-रा० अर० ११२२, ३-रा० वि० १२१०, ४-रा०  
वा० ५४१३ ५-रा० वि० १८१३ ६-रा० वि० २११८, ७-रा० वि० १०१३,  
८-रा० वि० १२११२, ९-रा० सु० २१२६ १०-रा० अर० २१२०, ११-रा०  
वि० २६११८, १२-रा० सु० ५६१२३, १३-रा० अयो० १११५, १४-पा०  
म० ५६११, १५-पा० म० ५६१२ १६-रा० सु० २१२६ १७-पा० म० १६१२,  
१८-पा० म० ५७११ १९-रा० अयो० २२१२ २०-रा० अयो० २११६,  
२१-रा० अयो० २१११ २२-रा० ल० ११४१२०



जीव नित्य देहि लागि तुम्ह रोवा<sup>१</sup> ।

मुनिद्वर जतनु करहि देहि लागी<sup>२</sup> ।

- (२) कम रूप म प्रयुक्त सजीव सज्ञा या उसके स्थान पर प्रयुक्त सवनाम तथा विशेषण बोधक शब्दावली सक्रमक क्रियाधा द्वारा अधिकृत होती है अर्थात् उनका तिसक रूप हो जाता है यथा—

कुवरिहि रानि प्रान प्रिय जानी<sup>३</sup> ।

सादर सकल कुअरि समुझाई ।

वहु बिधि भूप सुता समुझाई<sup>४</sup> ।

दखत रामहि भए सुपारे<sup>५</sup> ।

## १० १ स्यानीय तथा तुलसी की अवधी

१० १० तुलसी की अवधी का विस्तृत भाषा वैज्ञानिक विवेचन पिछले अध्यायो (दो से नौ) में किया जा चुका है। अतएव यहाँ स्यानीय (वर्तमान) अवधी के स्वरूप से आलोच्य भाषा के स्वरूप में कितना सम्बन्ध-वैषम्य है, इस पर चर्चा करना अभीष्ट है। स्यानीय अवधी के प्रमुखतया तीन वर्ग—१—पश्चिमी, २—केन्द्रीय और ३—पूर्वी माने गये हैं।<sup>१</sup>

अवधी का पश्चिमी स्वरूप—खीरी, सीतापुर, लखनऊ, उन्नाव और पतेहपुर जिला में बोला जाता है। केन्द्रीय रूप—बहराइच, बाराबंकी तथा रायबरेली के जिलों में बोला जाता है और पूर्वी रूप—गोडा, फजाबाद, सुल्तानपुर प्रतापगढ़, इलाहाबाद, जौनपुर और मिर्जापुर जिलों में बोला जाता है। अवधी के इन क्षेत्रीय रूपों का प्रभाव तुलसी की अवधी में भी मिलता है। अतः तुलसी के समय में भी अवधी का एक रूप न होकर बड़े क्षेत्रीय रूप रहे हैं। इसीलिए शब्दों में उच्चारण-भेद मिलता है और 'याकरण-स्तर पर रूप-वैभिन्न। आलोच्य भाषा के सामान्य स्वरूप पर विषय क्रम १४ में प्रकाश डाला जा चुका है। तुलसी की अवधी में प्राप्त ध्वनियों के उच्चारण के सम्बन्ध में कुछ निश्चित रूप से कहना कठिन है। हाँ इतना अवश्य है कि आधुनिक अवधी की ध्वनियों के उच्चारण के आधार पर तथा मात्रा पूर्ति के आधार पर सत्यता के निकट पहुँचा जा सकता है। वस्तुतः इसी आधार पर अनुसंधितसु ने तुलसी की अवधी में प्राप्त ध्वनियों का विवेचन विषय क्रम २३ में किया है। डा० बाबूराम सक्सेना जैसे लघुप्रतिष्ठ भाषाविद् आधुनिक (स्यानीय) अवधी और उसके विकास का बड़े ही खोज पूरा एवं वैज्ञानिक ढंग से विस्तृत विवेचना प्रस्तुत कर चुके हैं। इसलिए यहाँ और अधिक विस्तार में जाना समीचीन नहीं जान पड़ता है। आधुनिक अवधी में उच्चारण सुनने की सुविधा होने से कारण ध्वनियों का स्वरूप स्पष्ट है। तुलसी की अवधी में फुस फुसाहट वाले स्वरों इ उ ए तथा ए और ओ ह्रस्व रूप ए तथा ओ के सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ कहना कठिन है जबकि आधुनिक अवधी में ये पूणतः स्पष्ट हैं।

तुलसी की अरबी म भाषा-गणना तथा लयात्मक उच्चारण एवं आधुनिक अवधो की उच्चारण प्रवृत्ति का आधार पर इनका अस्तित्व को स्वीकार किया जा सकता है। उल्लेखनीय बात यह है कि आधुनिक अवधो की पश्चिमी बोलिया म फुसफुमाहट वाग स्वरा अक्षर स्पष्ट है जबकि पूर्वी बोलिया म दुर्लभ है। फुसफुसाहट वाले स्वर पदान्त म जान ह किन्तु अक्षर-निर्माण म याग नहीं दत हैं। मूल और सयुक्त स्वर तुलसी तथा आधुनिक अवधो दानो म लगभग एक स ही हैं उनम कोई विशेष अंतर नहीं है। नाना म ही मूल और सयुक्त स्वर षष्ठ की तीना स्थितिया म प्राप्त है। तुलसी का अरबी प्राप्त स्वरा का उल्लेख विषय क्रम २२ म किया जा चुका है क्षेत्रीय बन्धन का कारण ए ए आ तथा औ क उच्चारण म भिन्नता पाई जाती है। व्यंजना की प्रकृति स्वरूप और विलक्षण की दृष्टि स भी आलोच्य भाषा म कोई उल्लेखनीय अंतर नहीं मिल पा रहा है। लिखित भाषा हाने के कारण तत्सम षष्ठो म 'ण, न और प का प्रयोग मिल जाता है। आधुनिक अवधो म इनका प्रयोग नहीं मिलता है। आलोच्य भाषा म जितने व्यंजन-ध्वनिग्राम मिले हैं उतन ही आधुनिक अवधो म भी है।

१० १ २ तुलसी की अवधो की भाँति आधुनिक अवधो म भी सना-रूप-रचना प्रातिपदिका म लिंग-वचन कारक सम्बन्ध दगी विभक्ति-प्रत्ययों का याग से हुई है। तुलसी की अवधो म सना प्रातिपदिक लघु रूप म ही प्राप्त है जबकि आधुनिक अवधो म अनेक विस्तृत रूपो म भी प्राप्त होत हैं यथा—घोडवा कुतवा बुढ़वा, खटियवा लडिकवा, घोडना कुअना (=कुआँ) सुअना (=सुआँ), आदि। लिंग-विधान आधुनिक तथा तुलसी की अवधो म लगभग समान है। लिंग सम्बन्धी विभक्ति प्रत्यय तुलसी तथा आधुनिक अवधो म लगभग एक से हैं।

हैं। लिंग-वचन के अनुसार रूप रचना मिला-भिन्न है। तियक रूप परसगे रहित तथा परसग सहित प्राप्त हुए हैं सम्बन्धकारक के अतः 'क' का प्रयोग आधुनिक अवधी में अधिक और तुलसी की अवधी में अपेक्षाकृत कम हुआ है। तुलसी की श्रवणी की भाँति आधुनिक अवधी में भी सम्बोधन का व्यक्त करने के दो ढंग हैं—एव तो व स्थल है जहाँ सज्ञा के मूल रूपों के पहले रे, री, हा, हा, ए आदि सम्बोधक शब्दों का प्रयोग होता है, दूसरे वे स्थल जहाँ केवल सम्बोधन रूपों का योग हाता है।

१० १३ आधुनिक अवधी में भी तुलसी की अवधी की भाँति सवनाम रूप मूल तथा तियक हैं। मूल रूप ( कर्ता रूप ) ही प्रातिपदिक हैं। कर्ता को छोड़कर अय कारक सम्बन्धों का स्पष्टीकरण तियक रूपों में विभक्तियों या परसगों अथवा दानों के योग से मिलता है। तियक रूपों में लगने वाले विभक्ति प्रत्ययों और परसगों में पर्याप्त साम्य है। तुलसी ने यत्र-तत्र समवत ब्रजभाषा के प्रभाव से उत्तम पुरुष एकवचन कर्ताकारक 'ही' का प्रयोग किया है। किन्तु आधुनिक अवधी में 'ही' रूप का प्रयोग नहीं होता है। सम्बन्ध वाचक एव सह सम्बन्ध वाचक सवनाम के अन्तगत आधुनिक अवधी में जौन, तीन रूपों का प्रयोग होता है। किन्तु तुलसी की अवधी में इन रूपों का सवधा अभाव है। आधुनिक अवधी में सवेत वाचक दूरवर्ती सवनाम रूपों में उ, उइ रूप प्राप्त हैं जबकि तुलसी की अवधी में नहीं पाए जाते हैं। रूप रचना की दृष्टि से तुलसी की अवधी तथा आधुनिक अवधी में उल्लेखनीय अन्तर नहीं मिलता है। क्षेत्रीय धोली वर्णिक कारण सवनामों में कुछ उच्चारण विविधता के दशन अवश्य होते हैं।

१० १४ आलोच्य माया और स्थानीय अवधी के विशेषण रूपों में भी कोई उल्लेखनीय अन्तर दृष्टिगत नहीं हाता है। दोनों में अकारात्त। आकारात्त विशेषण शब्दों में लिंग वचन कारक के अनुसार विभक्ति प्रत्ययों के योग से रूप रचना होती है। अय विशेषण रूप अपरिवर्तनशील हैं। स्थानीय अवधी में भी विशेषण के सप्त रूप—घोर बह छोट बूढ़ आदि प्रयुक्त होते हैं।

इसी प्रकार अयय रूपों में दानों में ही बहुत कुछ समानता है। गटा की दृष्टि से कोई भी उल्लेखनीय अन्तर नहीं मिलता।

१० १५ तुलसी की अवधी की भाँति आधुनिक अवधी में प्रयुक्त शिवा रूप भी काल, वाच्य लिंग-वचन, पुरुष, अय आदि की द्योतन रचनात्मक प्रवृत्तियों में एक जल प्रभावित है। रचना की दृष्टि से प्राप्त धातुएँ (सामास, जम्बीरत प्ररणाचक नाम) समान हैं। तुलसी की अवधी की भाँति आधुनिक अवधी में भी शिवा रूपों का प्रकार के हैं—समासिका तथा असमासिका। आधुनिक अवधी में भी समासिका प्रकार के कोटि के हैं—तिङ्गती तथा कृदतीय। अवधा में तिङ्गती रूपों का प्रयोग कम प्रयोग हुआ है। और तीनों कालों में प्रायः कृदतीय रूपों का ही प्रयोग होता

एक तीनों कालों वतमान भूत और भविष्य में प्राप्त हैं। वतमान निश्चयाय का द्योतन करने वाले कृत प्रत्यय एक से हैं। आधुनिक अवधी में वतमान निश्चयाय के द्योतन के लिए निम्न तीनों रूपों की अपेक्षा अपूर्ण कृदन्ती रूपों का प्रयोग होता है—'मैं देखउ' की अपेक्षा 'मैं देखन हौं' का प्रयोग अधिक होता है। भूत एवं भविष्य कालिक प्रत्यय भी आधुनिक तथा तुलसी की अवधी में लगभग एक से हैं। भविष्य समावनाय तथा सामान्य भविष्य निश्चयाय प्राप्त प्रत्यय एक दूसरे से भिन्न हैं। स्थानीय अवधी और तुलसी की अवधी में वतमान के क्रिया रूप प्राप्त हैं। आधुनिक अवधी में प्राप्त वतमान समावनाय (आशाय) के विभक्ति प्रत्यय आलोच्य भाषा के विभक्ति प्रत्ययों के समान हैं। निपक्षपत कहा जा सकता है कि तुलसी ने निश्चयित रूपों का अधिक प्रयोग किया है जबकि आधुनिक अवधी में उनका प्रयोग कम हुआ है। तुलसी की अवधी की भाँति आधुनिक अवधी में कृदन्ती रूपों की सहायता है वतमान निश्चयाय भूत निश्चयाय तथा भूत समावनाय की अभिव्यक्ति होती है अपूर्ण कृदन्ती के साथ वतमानकालिक सहायक क्रियाओं का प्रयोग से वतमान निश्चयाय का तथा भूत कालिक सहायक क्रिया के योग से भूत निश्चयाय का बोध कराया जाता है। तुलसी की अवधी के समान ही आधुनिक अवधी में अपूर्ण और पूर्ण कृदन्ती रूपों से भूत निश्चयाय की तथा भूत समावनाय की अभिव्यक्ति होती है। अममापिका प्रकार में तुलसी की अवधी के समान आधुनिक अवधी में पूर्वकालिक कृदन्त, क्रियायक सना आदि जानते हैं। इन रूपों में सहायक क्रियाओं के विभक्ति प्रत्यय तुलसी की अवधी के ही समान हैं केवल स्थानीय अवधी के पूर्वी रूप में—इ के स्थान पर—ए तथा—य प्रत्ययों का योग मिलता है। तुलसी ने—इ तथा कहीं कहीं—ई से निर्मित रूपों के साथ के परसग का प्रयोग करके पूर्वकालिक रूपों की रचना की है। इसी प्रकार स्थानीय अवधी में पूर्वकालिक कृदन्ती रूपों का निर्माण जाना है। क्रियायक सना कृदन्तों के निर्माण में भी एक से ही विभक्ति प्रत्यय सलग्न होते हैं।

आलोच्य भाषा की भाँति स्थानीय अवधी में भी सहायक क्रियाएँ दो प्रकार से व्यवहार में आती हैं—१—स्वतंत्र रूप में प्रयुक्त तथा २—सयुक्त काल में मुख्य क्रिया का सहायक बनकर। आधुनिक अवधी में क्षेत्रीय उच्चारण विभिन्न के कारण इनके उच्चारण में भी विभिन्नता पाई जाती है। एक रचना की दृष्टि से तत्समी की अवधी तथा आधुनिक अवधी की सहायक क्रियाओं में कोई उल्लेखनीय अंतर नहीं मिलता है। इतना अवश्य है कि तुलसी ने अपना अवधी रचनाओं में आधुनिक अवधी की अपेक्षा अधिक सहायक क्रियाओं का प्रयोग किया है।

आधुनिक अवधी में तुलसी की अवधी की अपेक्षा अधिक मात्रा में सयुक्त क्रियाओं का प्रयोग हुआ है। साथ ही तुलसी की अवधी के समान आधुनिक अवधी में भी इनकी रूप रचना विभिन्न प्रकार के कृदन्त—पूर्वकालिक वतमानकालिक भूत

कालिक, त्रियायक सत्ता आदि प्रमुख त्रियाय रूपों के साथ अन्य त्रियाय रूपों के प्रयोग से हुई है।

सयक्त त्रियायका के माध्यम स आलोच्य भाषा, और स्थानीय अवधी दोनों में ही कहीं लासजिक अथ व्यजित होता है तो कही व्याकारणक अथ ( वाच्य आदि ) अवधा अमिघाथ व्यजित होता है।

## १०२ अथ बोली रूपों की व्याप्ति

वैज्ञानिक दृष्टि से विचार करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि भाषा विचार-विनिमय के माध्यम विचार चिंतन करने का भी साधन है। जब दा भिन्न भाषा भाषी व्यक्ति प्रत्यक्ष या राष्ट्र परस्पर सम्पर्क में आते हैं तो एक दूसरे की शब्दावली म्यूनाधिक मात्रा में अवश्य एक दूसरे से प्रभावित होती है। फिर तुलसी जैसे सन्त महारत्ना की भाषा पर यह प्रभाव पहना स्वाभाविक ही था। तुलसी का अधिकांश जीवन देहाटन करने में बीता और ऐसे स्थानों पर अधिक व्यतीत किया जहाँ विभिन्न प्रांतीय, क्षेत्रीय भाषा भाषियों विभिन्न सम्प्रदाय एवं धर्म के लोगों का हर समय सम्पर्क रहता था। यही कारण था कि जिससे तुलसी की भाषा भी अथ प्रादेशिक तथा बोलियों के प्रभाव से मुक्त न रह सकी। इसके अतिरिक्त तुलसी की शब्दावली मिश्रित होने के कुछ और भी प्रमुख कारण—उनकी समवयवानी नीति ज्ञान की विद्यालता व्यापक परिधय आदि रहेंगे। इस समवयवानी नीति ने ही तुलसी का माहुरिय क्षेत्र के साथ साथ मति क्षेत्र में भी युगायुगों के लिए अमिट बना दिया है। इन कारणों के फलस्वरूप ही तुलसी की रचनाओं में संस्कृत प्राकृत अवध भा, बगला, गुजराती, राजस्थानी ब्रज, भोजपुरी आदि के शब्दों (रूपों) का म्यूनाधिक मात्रा में प्रयोग लिखा देता है।

आचार्य भाषा निष्कर्षों के आधार पर तुलसी द्वारा प्रयुक्त शब्दावली निम्न लिखित वर्गों में विभाजित कर उसके सही स्वरूप एवं उस पर पड़े अन्य भाषाओं एवं बोलियों के प्रभाव को स्पष्ट किया जा सकता है—

१—संस्कृत व शब्द

२—प्राकृत-अपभ्रंश व शब्द

३—विदेशी भाषाओं (अरबी, फारसी और तुर्की) के शब्द

४—अथ क्षेत्रीय भाषाओं—बगला राजस्थानी ब्रज भाजपुरी आदि के शब्द।

१—संस्कृत व शब्द (या शब्द)—संस्कृत शब्दों तथा शीतल के अतिरिक्त बोधे—श्रीराध्या में भी प्रयुक्त हुए हैं जिनमें से अतिरिक्त आलोच्य भाषा की प्रकृति के अनुसार परिगमित कर लिए गए हैं। अथ रचनाओं का अर्थना समान रूप मानने में सहायक अवसर हुए हैं यथा—

तत्सम—ब्रह्म<sup>१</sup> ऋद्धि<sup>१</sup> श्रुति<sup>१</sup> भ्राता प्राकृत<sup>१</sup> प्रथम<sup>१</sup> घम, मद्<sup>१</sup>, सिद्ध<sup>१</sup>;  
मध्य<sup>१</sup> मतक<sup>१</sup> गह<sup>१</sup> एवमस्तु<sup>१</sup> गग<sup>१</sup>, मञ्जन<sup>१</sup>, प्रभु<sup>१</sup> नगर<sup>१</sup> गिरि<sup>१</sup>,  
अधर<sup>१</sup>, लानन<sup>१</sup> ।

अघतत्सम—मकुता<sup>१</sup> परम<sup>१</sup>, करतव<sup>१</sup> हरप<sup>१</sup> रतन<sup>१</sup> भगति<sup>१</sup>,  
अस्तुति<sup>१</sup> तीरथ<sup>१</sup>, लिप्ति<sup>१</sup>, मुरजा<sup>१</sup>, घरमा<sup>१</sup> सिधि<sup>१</sup>, परन<sup>१</sup> मुभाव<sup>१</sup>,  
भरक<sup>१</sup> बसन<sup>१</sup>, सोमा<sup>१</sup> जनम<sup>१</sup>, करम<sup>१</sup> मरमानु<sup>१</sup> पन<sup>१</sup>, पुय<sup>१</sup>, पदम<sup>१</sup>  
पितर<sup>१</sup> जीवन<sup>१</sup> जोगी<sup>१</sup> वेद<sup>१</sup>, पारवती<sup>१</sup> मोच्छ<sup>१</sup> चरन<sup>१</sup> ।

२—प्राकृत-अपभ्रंश के (या एप) —तुलसी ने इस कोटि के कवल  
उही स्थल पर प्रयाग किए हैं जहाँ वीर, रौद्र अथवा भयानक अथवा वीरत्स  
दशमो की उपस्थिति करन की आवश्यकता प्रतीत हुई है। इस प्रकार के रूप केवल  
'मानस म ही युद्ध क दश्य को चित्रित करन म प्रयोग किए गए है यथा—

धूमि धूमि जह तह महि परही ।<sup>१</sup> जनु दह<sup>१</sup> दिमि दामिनी दमकहि ।<sup>१</sup>  
बोल्हहि जा जय जय मुड रुड ।<sup>१</sup> खप्परहि खग अलुग्वि जुजपहि ।<sup>१</sup>  
कोटिन रुड मुड विनु डोल्हहि ।<sup>१</sup> सीस परे महि जय तय बोल्हहि ।<sup>१</sup>  
कहहि दमानन सुनटु सुभटटा ।<sup>१</sup> मदहु भालु कपिह क ठटटा ।<sup>१</sup>  
देखि चले भामुख कपि भटटा ।<sup>१</sup>

१-रा० कि० ६।३९ २-रा० ल० न० ००।४ ३-रा० कि० ७।१२ ४-रा०  
अर० ५।२६ ५-रा० अयो० ३।८।२ ६-जा० म० ६९।१ ७-जा० म० २३।२  
८-पा० प० ३०।२ ९-रा० ल० न० १४।२ १०-रा० ल० न० ५।३ ११-रा०  
कि० १।१।६ १२-रा० ल० ६।२ १३-रा० उ० ८५।१, १४-रा० कि० १३।७  
१५-रा० उ० २६।२ १६-रा० सु० ५९।१५ १७-रा० ल० न० २।३ १८-  
रा० कि० १।२।० १९-पा० म० ६।१।२ २०-पा० म० ६।२ २१-जा०  
म० ५३।२ २२-रा० वा० ३।१।८ २३-रा० वा० १।२।२, २४-रा० ल०  
न० २।६ २५-पा० म० ८७।२ २६-रा० कि० १३।१।४ २७-रा० उ० १।२।२७  
२८-रा० वा० ४४।६ २९-रा० उ० २८।२।५ ३०-रा० अर० ४३।१।७ ३१-रा०  
वा० २।७।१, ३२-पा० म० ८।२ ३३-रा० अर० १३।४० ३४-रा० उ० १२।१।१०,  
३५-रा० उ० ६।१।४ ३६-रा० उ० १।१।१९ ३७-रा० वा० १।१।४, ३८-रा० उ०  
२४।१।९ ३९-रा० वा० ७।३ ४०-रा० ल० १।१, ४१-जा० म० ८।१ ४२-  
रा० उ० १९।१।९ ४३-रा० वा० १।२।१, ४४-रा० वा० २५।१।१ ४५-जा० म०  
८६।७ ४६-पा० म० ५।१।२ ४७-रा० अयो० १।५।० ४८-पा० म० ०३।१,  
४९-रा० अर० १।५।९ ५०-रा० सु० २८।४ ५१-रा० लका ८७।१० ५२-  
रा० ल० ८७।६ ५३-रा० ल० ८८।७।१ ५४-रा० उ० ८८।७।२ ५५-रा०  
ल० ८८।७।३ ५६-रा० उ० ७०।७।७ ५७-रा० उ० ८८।७।० ५८-रा० ल०  
७०।२ ५९-रा० ल० ८७।२

प्रलय काल के जन्म मन घट्टा ।

जबुक निकर कटकवट कहहि ।<sup>१</sup> खाहि ह्याहि अघाहि दपहहि ।<sup>१</sup>

चौपाई सख्या २, ७ तथा ८ में कृत्तियों की संस्कृत अवघा अवघी के शब्दों के प्रयोग प्राकृत अपभ्रंश के शब्दों के प्रयोग छदानुरोध के कारण अधिक सुविधाजनक प्रतीत हुए हैं। ऐसे शब्दों का प्रयोग रस निष्पत्ति में कुछ सटवन वाला अवश्य प्रतीत होता है। किंतु तुलसी जैसे शब्द शिल्पी की वृशल शब्द-योजना में इस प्रकार व्यवस्थित किए गए हैं कि किसी भी प्रकार से अनुचित और अस्वाभाविक प्रतीत नहीं होते हैं।

३—विदेशी भाषाओं के शब्द—विदेशी शब्दावली के अतगत आलोच्य भाषा में केवल अरबी-फारसी तथा तुर्की भाषाओं के शब्द ही आते हैं। तुलसी की अवघी की अन्य कृतियों की अपेक्षा रामचरितमानस में विदेशी शब्दों का प्रयोग अधिक हुआ है। तुलसी ने केवल उन्हीं विदेशी शब्दों का प्रयोग किया है जो सामान्य जनता के व्यावहारिक जीवन में आ चुके थे। साथ ही, ऐसे स्थलों पर प्रयोग किया है जहाँ उनके प्रयोग से अभीष्ट वातावरण की सृष्टि सम्भव थी। रचना की दृष्टि से देखा जाए तो मूल शब्दों की अपेक्षा यौगिक शब्दों का व्यवहार कम मात्रा में मिलता है जबकि सामाजिक शब्दों का प्रयोग तो अत्यल्प ही है। विशेष ध्यान देने योग्य ऐसे शब्द हैं जिनमें अवघी की प्रकृति (उच्चारण एवं व्याकरण) के अनुसार परिवर्तन कर लिया गया है यथा—

तलफ	तल्पत <sup>१</sup>	सराफ	सराफ <sup>१</sup>
मोज	सुमोज <sup>१</sup>	साहब	सुमाहब
कागज	कागद <sup>१</sup>	गरीब	गरीब <sup>१</sup>
हजार	हजार <sup>१</sup>	बाजार	बाजार <sup>११</sup>
बजाज	बजाज <sup>११</sup>	फौज	फौज <sup>११</sup>
बाज	बाज <sup>१</sup>		

उपयुक्त विवरण से स्पष्ट है कि तुलसी ने अपनी रचनाओं में अरबी फारसी के शब्दों का पर्याप्त प्रयोग किया है।



मातलि मातलि चलउ चरन सिध नाई ।  
 आश्रायव म० पु० पूछउ गुठि राउर सरल मुभाव ।  
 राउर सरल मुभाव ।  
 गिरिबर मुनिय सरहना राउर तहें तहें ।  
 राम मातु मत जानत रउर ।  
 राम निवाय रावरी है न सबही की नीका ।  
 भलेउ कहन दुख राउरेहि लागे ।

स्थान वाचक क्रिया विशेषण रूप

जहवाँ—गोगबरि तट आश्रम जहवाँ ।  
 तहवाँ—अनुज समत गए प्रभु तहवाँ ।

‘अल विभक्ति—प्रत्यय युक्त भूतकालिक कृदन्त रूप  
 घायल—असकहि कोपि गगन पर घायल ।  
 मरायल—सठहु सदा तुम्ह मोर मरायल ।”

खड़ी बोली—

आलोच्य भाषा में बहुत से ऐसे रूप भी प्रयुक्त हुए हैं जिनकी रूप रचना खड़ी बोली (आधुनिक हिन्दी) से पृथक् साम्य रखती है जिनका आजकल व्यावहारिक जीवन में खूब प्रचलन है । खड़ी बोली के रूप इस प्रकार हैं—

- १—सजा के तियव रूप—भाड़ें” बघाए” हारे”, चौके”
- २—सवनाम रूप—वह, हमारी हमारे तुम, तुम्हारी तुम्हारे आदि—  
 निशि मलीन वह निशि दिन यह विगसाइ ।”
- सुनहु पवनसुत रहनि हमारी ।  
 जानति हहु बस नाहु हमारे ।”
- तीप रतना तुम उपजिहु भव रतनाकर ।”
- नाथ सकल सपदा तुम्हारी ।  
 पूतु विदेस न मोचु तुम्हारे ।”

१—रा० ल० ११०।२ २—बरव रा० २०।२ ३—रा० अयो १७।२०, ४—पा० म १५।२ ५—रा० अयो १८।१ ६—रा० वा० २९।२१ ७—रा० अयो १६।४ ८—रा० अर० ३०।९ ९—रा० अर० ३०।१० १०—रा० ल० ९७।१२, ११—रा० ल० ९७।११, १२—रा० वा० १२।४ १३—रा० अयो १।२ १४—रा० वा० ३४।८ १५—रा० अयो ८।५ १६—बरव रा० ११।२ १७—रा० सु० ८।१ १८—रा० अयो १४।१० १९—पा० म० ४५।२, २०—रा० वा० ३६०।१, २१—रा० अयो १४।९ ।

(३) श्रिया रूप—बूछ क्रिया रूप खडो बोली से प्रभावित लगते हैं, यथा—

बपि कुजरहि बोलि लै आए ।'

जेहि त विपरीत क्रिया करिऐ ।'

मत मोर विभेद करी हरिऐ ।'

अरहि सदा पर सपति देखी ।'

पति लागि दारुन तपु किया ।'

श्रियापक समाए—झूठइ सेना झूठइ देना ।'

सहायक श्रिया— है सुत बपि सब तुम्हहि समाना ।'

-----

## सहायक ग्रथानुक्रमणिका

१-डा० उदयनारायण तिवारी	भोजपुरी भाषा और माहित्य मन	१९५४ ई०
२- , ,	हिन्दी भाषा का उदगम और विकास	स० २०१८ वि०
३-	भाषा शास्त्र की रूपरेखा	स० २०२० वि०
४-प० वामना प्रसाद गुह	हिन्दी व्याकरण	स २०१४ वि०
५-प किशोरीदास बाजपयी	हिन्दी शब्दानुशासन	सन् १९५८ ई०
६-	ब्रज भाषा व्याकरण	सन् १९४३ ई०
७-डा० कलाशचन्द्र अग्रवाल	क्षलवाटी बोली का वणनात्मक अध्ययन	सन १९६४ ई०
८-डा० गोलोक बिहारी घल	ध्वनि विज्ञान	सन १९५८ ई०
९ प० चन्द्रमौलि शुक्ल	मानस दपण	सन् १९५२ ई०
१०-जयगोपाल बोस	तलसी छात्राय प्रकाश	सन् १९५३ ई०
११-जयचन्द्र विद्यालकार	भारती इतिहास की रूप रेखा भाग १ तथा २	स० २००५ वि०
१२-जगदीश तर्कालकार	शब्द शक्ति प्रकाशिका	
१३-मिथ जगदीश कश्यप	पालिमहाव्याकरण	सन १९४० ई०
१४-डा० जाज अब्राहम द्वियसन (अनुवादक डा० उदयनारायण तिवारी)	भारत का भाषा सर्वेक्षण, खण्ड १ भाग १	सन् १९५९ ई०
१५-डा० देवकी नन्दन श्रीवास्तव	तुलसी की भाषा	स० २०१४ वि०
१ -प० दामोदर भट्ट	रक्ति व्यक्ति प्रकरणम	स० २०१० वि०
१७-डा० धीरेन्द्र वर्मा	हिन्दी भाषा का इतिहास	स० १९५८ वि०
१८- " "	ब्रजभाषा	सन १९५४ ई०
१९-डा० नामवर सिंह	पृथ्वीराज रासो की भाषा	सन १९५६ ई०
२०- , " "	हिन्दी के विकास म अपभ्रंश का योग	सन १९५४ ई०

११-नागरी प्रचारिणी सभा वाशी (प्रकाशक) तथा आ० रामचंद्र स० २००४ वि० पुस्तक द्वारा सम्पादित तुलसीदास ग्रथावली (पहला व दूसरा सर्ग)		
१२-पिंगेल, अनुवादक डा० हमचंद्र षोडा	प्राकृत भाषाआ का व्याकरण सन् १९५९ ई०	
१३-डा० प्रभाकर शुक्ल	जायसा की भाषा	स० २०२२ वि०
१४-डा० प्रमनारायण टंडन	सूर की भाषा	सन १९५७ ई०
१५-डा० वावूराम सक्मना	सामान्य भाषा विज्ञान	सन् १९५६ ई०
१६- " " "	संस्कृत व्याकरण प्रवेशिका	सन १९५५ ई०
१७-प० विहारीलाल चौबे	तुलसीदास सतसई	स० १९८६ वि०
१८-डा० ब्रज विशार मिश्र	अवध के प्रमुख कवि	सन १९६० ई०
१९-डा० मोलाशकर व्यास	संस्कृत भाषाशास्त्रीय अध्ययन	स० २०२० वि०
२०-म० डा० मोलाशकर व्यास	प्राकृत षगलम्	स० २०२८ वि०
२१-डा० माना प्रमाद गुप्त	हिन्दी पुस्तक साहित्य	सन १०६२ ई०
२२- , , , ,	राउर वेल और उसकी भाषा	सन् १९६२ ई०
२३- , , , ,	तुलसीदास	सन् १९५३ ई०
२४- , " , ,	रामचरित मानस का पाठ	सन १९४९ ई०
२५-डा० मुरारीलाल उप्रति	हिन्दी भ प्रत्यय विचार	सन् १९६४ ई०
२६-श्री रघुनाथदास	मानस कोष	सन् १९५४ ई०
२७-डा० रमेराचंद्र जैन	हिन्दी में समास रचना का अध्ययन	सन् १९६४ ई०
२८-डा० रामेश्वर प्रसाद अण्णाल	बुन्नेली का भाषा शास्त्रीय अध्ययन	सन् १९६३ ई०
२९-प० रामचंद्र पावल	हिन्दी साहित्य का इतिहास	स० २००५ वि०
४०- , , , ,	तुलसीदास (सम्पादित संस्करण)	स० १९९६ वि०
४१-श्री रामनरेश त्रिपाठी	तुलसीदास और उनका भाष्य	सन् १९५३ ई०
४२-डा० राजरत्न दीक्षित	तुलसीदास और उनका युग	सन १९५० ई०
४३-डा० रामगिरि तामर	प्राकृत और अवध का साहित्य तथा उनका हिन्दी साहित्य पर प्रभाव	सन् १९६४ ई०
४४-श्री विजयगान्धर्व त्रिपाठी	मानस व्याकरण	
४५-डा० मरसू प्रसाद अण्णाल	प्राकृत विमर्श	

## २५६ । तुलसी की भाषा

४६-ए।० सीताराम	अयोध्या का इतिहास	सन् १९३० ई०
४७-श्री विश्वनाथ	हिन्दी कारकों का विकास	स० २००५ वि०
४८-डा० इयाम मुन्तर नास	गोस्वामी तुलसीदास	स० १९८२ वि०
४९-	हिन्दी भाषा और साहित्य	स० १९८० वि०
५०-डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी	हिन्दी साहित्य की भूमिका	सन् १९५२ ई०
५१-	मध्य कालीन धर्म साधना	सन् १९४२ ई०
५२-डा० हरिवंश जोष	अपभ्रंश साहित्य	स० २०१३ वि०
५३-डा० त्रिलोकी नारायण दीक्षित	अवधी और उगडा साहित्य	सन् १९५४ ई०

### शब्द कोष

१-अवधी कोष	स० प० रामाज्ञा द्विवेदी समीर	सन् १९५५ वि०
२-तुलसी दास सागर	स० डा० भोलानाथ निवारी	सन् १९५४ ई०
३-नेपाली द्विवेदी	स० टनर केगन पाल टूच	सन् १९३१ ई०
	दुम्बर	
४-ब्रजभाषा मूरकोष	स० डा० प्रमनारायण टंडन	सन् १९५६ ई०
५-हिन्दी दास सागर	स० प० रामचन्द्र शुक्ल	सन् १९१४ ई०

### पत्र-पत्रिकाएँ

१-आलोचना		सन् १९५४ ई०
२-इण्डियन लिग्विस्टिक्स	चर्जी बाल्यूम	सन् १९५८ ई०
३-इण्डियन लिग्विस्टिक्स	तारा पुरवालामभोरियल	सन् १९५७ ई०
	बाल्यूम	
४-नागरी प्रचारिणी पत्रिका	भाग १२ (काशी नागरी प्रचारिणी सभा काशी)	स० १९८८
५-	भाग १३	स० १९८८
६-	वर्ष ५८ अंक ३	स० २०११
७-	वर्ष ६४	स० २०
८-भारतीय साहित्य	क० मु० हिन्दी विद्यापीठ	सन् १९
	आगरा	
९-हिन्दी अनुशीलन	जु० मि० अंक	सन् १९
१०-हिन्दी अनुशीलन	धीरेन्द्र वर्मा विनोदाक	
११-सम्मान पत्रिका	हिन्दी साहित्य सम्मानन प्रयोग	

## हस्त लिखित प्रतियाँ

- १-रामचरित मानस  
 वाल्काण्ड (हि० खो० रि० १९०१ नो० २२  
 जनक किशोरो सिंह वामुखेव घाट, अयोध्या  
 स० १ ९१ ।
- २-रामचरित मानस  
 -रामचरित मानस  
 ८-रामचरित मानस  
 प० सुधाकर द्विवेदी स० १९१६-१९२१  
 डा० माता प्रसाद गुप्त सग्रहालय स० १०७८ ।
- ५-रामचरित मानस  
 वाल्काण्ड प० भद्रदत्त वद्य भूपण बडी  
 हाली एटा ।
- ६-रामचरित मानस  
 मुन्डरकाण्ड, डा० माताप्रसाद गुप्त सग्रहालय  
 स० १६६४
- ६ रामचरित मानस  
 उत्तरकाण्ड, डा० माताप्रसाद गुप्त सग्रहालय  
 स० १९९३ ।
- ७-रामरत्ना नदछ  
 डा० माता प्रसाद गुप्त स० १८६५ ।
- ८-सूकर क्षत्र महात्म्य  
 प० भद्रदत्त वद्य भूपण बडी ही एटा ।
- ९-जानकी मंगल  
 हि० खो० रि० १९२०-२२ नो० १९८६ ई०)  
 रामरक्ष त्रिपाठी अयोध्या स १६३२ ।
- १०-जानकी मंगल  
 डा० भवानीशंकर दानिक पटुवाडात्र नैनीताल  
 स० १९१० ।
- ११-ब्रह्मव रामायण  
 (हि० खो० रि० १८२६-२८ नो० २८ एम)  
 राजकीय पुस्तकालय अतापगढ़ स० १७९८ ।

1	Dr Aryandra Sharma	A Basic Grammar of Modern Hindi	1958
2	Archibald A Hill	An Introduction to Linguistics structures,	1957
3	Dr A M Ghatage	Historical linguistics and Indo Aryan languages	1962
4	Dr Bibu Ram Saksena	Evolution of Awadhi	1937
5	Bernard Bloch and Trager	Outline of Linguistic Analysis,	1943
6	Bertil Malmberg	Phonetics	1963
7	Benjamin Elson and Velina Pickett	An Introduction to Morphology and Syntax,	1952
8	C F Hockett	Course in Modern Linguistics	1957
9	Daniel Jones	The Phoneme its nature and use,	1957
10	Daniel Jones	An Outline of English Phonetics	1956
11	E A Nida	Morphology	1957
12	Dr Tagore	Historical Grammar of Apabhramsa	1948
13	Dr George A Grierson	Linguistic survey of India Vol IX Pt II	
14	Herald B Allen	Readings in Applied English Linguistics	1953
15	H A Gleason	An Introduction to Descriptive Linguistics	1955
16	I J S Taraporewala	Elements of the Science of language	1951
17	John B Carral	The study of Language	1955
18	John Beames	A Comparative Grammar of Modern Aryan Languages of India,	1875
19	J Vendreys	Language	1952

20	Dr S H Kellogg	Grammar of the Hindi Language,	1951
21	M V Mahandal-	Historical Grammar of Inscripti- ptional Prakrit	1948
22	Martin Jones (Ed,)	Readings in Linguistics,	1948
23	Dr R N V Ie	Verbal Composition in Indo Aryan,	1948
24	R M S Hafner	General Phonetics	1952
25	Dr S K Chatterji	Origin and Development of Bengali language Pt 1	
26	Sukumar Sen	Comparative Grammar of Middle Indo-Aryan,	1951

-----